हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
Agrisearch with a human touch

स्वच्छ भारत, स्वस्थ भारत, समृद्ध भारत
स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

उद्यान रश्मि

राजभाषा पत्रिका

(अक्टूबर, 2018-मार्च, 2019)
वर्ष 17, अंक 2

भाकृअनुप–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान
रहमानखेड़ा, पोस्ट-काकोरी, लखनऊ - 226 101
दूरभाष : (0522) 2841022-24, 2841026, फैक्स : (0522) 2841025
ई-मेल : cish.lucknow@gmail.com
वेबसाइट : www.cish.res.in
मीडिया संसाधन कक्ष : 0522-2841082

भाकृअनुप
ICAR

केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान
CENTRAL INSTITUTE FOR SUBTROPICAL HORTICULTURE
ISO : 9001-2015

संस्थान की राजभाषा गतिविधियाँ

माननीय अटल बिहारी बाजपेयी जी की याद में कविता पाठ

हिन्दी कार्यशाला का आयोजन

हिन्दी कार्यशाला का आयोजन

हिन्दी कार्यशाला का आयोजन

कृषि शिक्षा दिवस का आयोजन

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
Agrisearch with a human touch

स्वच्छ भारत, स्वस्थ भारत, समृद्ध भारत
स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

उद्यान रश्मि

राजभाषा पत्रिका

(01 अक्टूबर, 2018 – 31 मार्च, 2019)
वर्ष 17, अंक 2

भाकृअनुप-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान
रहमानखेड़ा, पोस्ट काकोरी, लखनऊ - 226 101
दूरभाष : (0522) 2841022-24, 2841026, फैक्स : (0522) 2841025
ई-मेल : cish.lucknow@gmail.com
वेबसाइट : www.cish.res.in
मीडिया संसाधन कक्ष : 0522-2841082

भाकृअनुप
ICAR

केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान
CENTRAL INSTITUTE FOR SUBTROPICAL HORTICULTURE
ISO : 9001-2015

राजभाषा पत्रिका
(अक्टूबर, 2018 – मार्च, 2019)
वर्ष 17, अंक 2

© भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान
रहमानखेड़ा, लखनऊ

संरक्षक एवं प्रकाशक
शैलेन्द्र राजन
निदेशक
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान
रहमानखेड़ा, लखनऊ – 226 101, उ.प्र.

संपादन मंडल
प्रभात कुमार शुक्ल
धीरज शर्मा

डिजाइनिंग
सुभाष पाण्डेय

अस्वीकरण

इस पत्रिका में प्रकाशित तथ्यात्मक लेखों के लिए लेखक ही उत्तरदायी हैं न कि भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, रहमानखेड़ा, लखनऊ, इसके प्रकाशक, संरक्षक या संपादन मंडल। फिर भी उपयोगकर्ताओं को यह सलाह दी जाती है कि पत्रिका में दी गयी जानकारियों को उपयोग में लाने से पूर्व लेखक या किसी अन्य विशेषज्ञ से अनिवार्य रूप से विचार-विमर्श कर/सलाह लेकर ही प्रौद्योगिकियों, तकनीकियों आदि का प्रयोग करें। अनेक प्रयास के बावजूद टंकण संबंधी त्रुटियाँ रह सकती हैं।

प्रकाशक एवं सम्पर्क सूत्र
निदेशक
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, रहमानखेड़ा, लखनऊ – 226 101
फोन : 0522-2841022-24, फैक्स : 0522-2841025
मीडिया संसाधन कक्ष नं : 0522-2841082
ई-मेल : cish.lucknow@gmail.com
वेबसाइट : www.cish.res.in

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का गीत

जय जय कृषि परिषद भारत की,
सुखद प्रतीक हरित भारत की,
कृषिधन, पशुधन मानव जीवन,
दुग्ध, मत्स्य, फल, यंत्र सुवर्धन,
वैज्ञानिक विधि नव तकनीकी,
पारिस्थितिकी का संरक्षण,
सस्य–श्यामला छवि भारत की,
जय जय कृषि परिषद भारत की।

हिम प्रदेश से सागर तट तक,
मरु धरती से पूर्वोत्तर तक,
हर पथ पर है, मित्र कृषक की,
शिक्षा, शोध, प्रसार सकल तक,
आशा स्वावलंबित भारत की,
जय जय कृषि परिषद भारत की।
जय जय कृषि परिषद भारत की।।

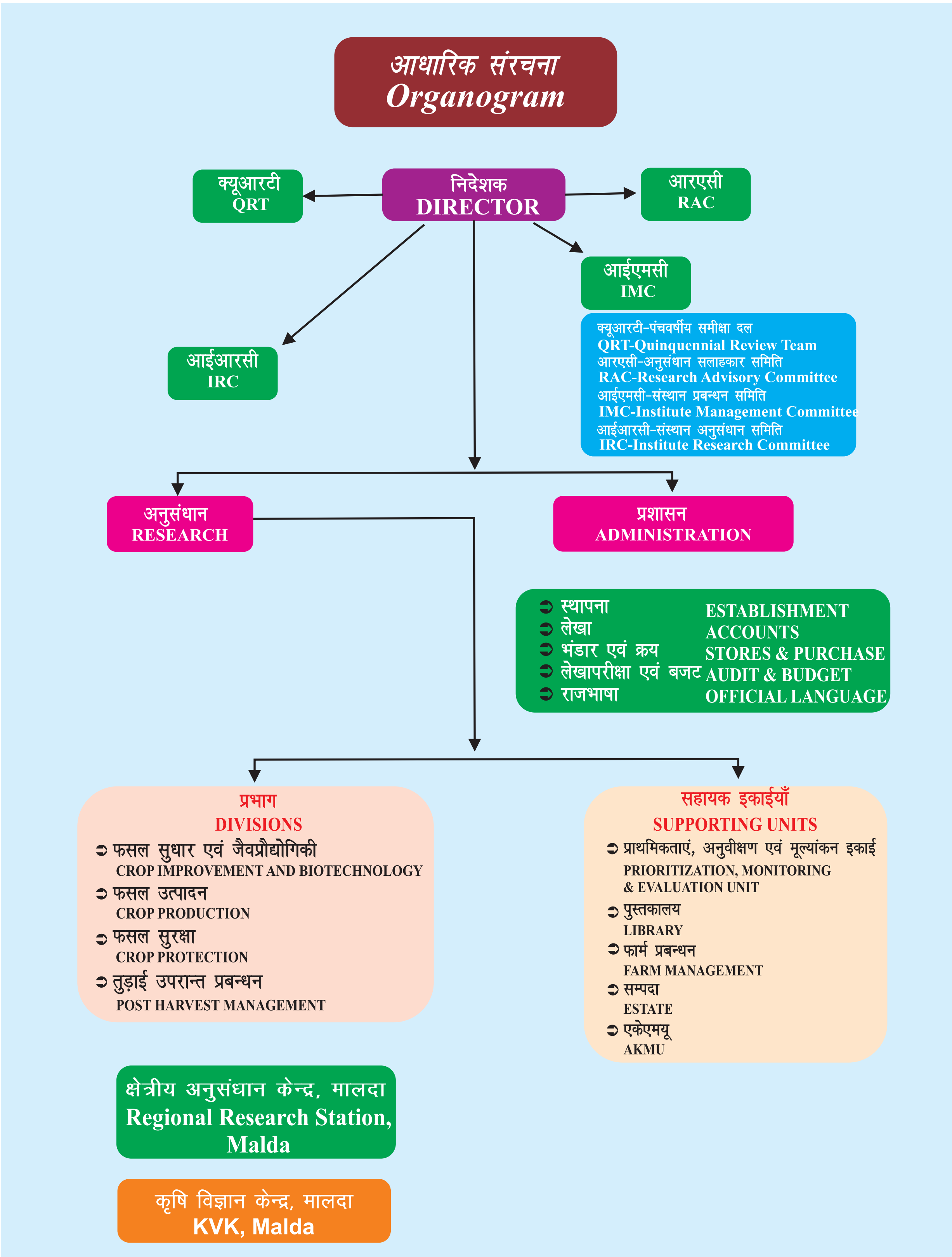
आधारिक संरचना
Organogram
क्यूआरटी
QRT
निदेशक
DIRECTOR
आरएसी
RAC
आईएमसी
IMC
आईआरसी
IRC
क्यूआरटी-पंचवर्षीय समीक्षा दल
QRT-Quinquennial Review Team
आरएसी-अनुसंधान सलाहकार समिति
RAC-Research Advisory Committee
आईएमसी-संस्थान प्रबन्धन समिति
IMC-Institute Management Committee
आईआरसी-संस्थान अनुसंधान समिति
IRC-Institute Research Committee
अनुसंधान
RESEARCH
प्रशासन
ADMINISTRATION
स्थापना ESTABLISHMENT
लेखा ACCOUNTS
भंडार एवं क्रय STORES & PURCHASE
लेखापरीक्षा एवं बजट AUDIT & BUDGET
राजभाषा OFFICIAL LANGUAGE
प्रभाग
DIVISIONS
फसल सुधार एवं जैवप्रौद्योगिकी
CROP IMPROVEMENT AND BIOTECHNOLOGY
फसल उत्पादन
CROP PRODUCTION
फसल सुरक्षा
CROP PROTECTION
तुड़ाई उपरान्त प्रबन्धन
POST HARVEST MANAGEMENT
सहायक इकाईयाँ
SUPPORTING UNITS
प्राथमिकताएं, अनुवीक्षण एवं मूल्यांकन इकाई
PRIORITIZATION, MONITORING & EVALUATION UNIT
पुस्तकालय
LIBRARY
फार्म प्रबन्धन
FARM MANAGEMENT
सम्पदा
ESTATE
एकेएमयू
AKMU
क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, मालदा
Regional Research Station, Malda
कृषि विज्ञान केन्द्र, मालदा
KVK, Malda

प्राक्कथन

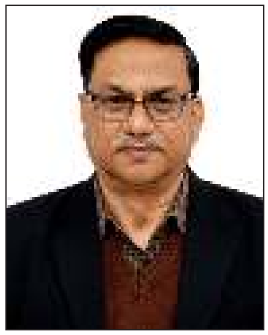

भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ की स्थापना 4 सितंबर, 1972 को भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंग्लुरू के तत्वावधान में केंद्रीय आम अनुसंधान केंद्र के नाम से की गयी थी। इस अनुसंधान केंद्र का 1 जून, 1984 को उन्नयन कर इसे केंद्रीय उत्तर मैदानी उद्यान संस्थान के रूप में पूर्ण संस्थान का दर्जा दिया गया। कालांतर में, 14 जून, 1995 को संस्थान का नाम बदलकर केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान कर दिया गया। संस्थान अधिदेशित उपोष्ण फलों के विभिन्न पहलुओं पर अनुसंधान कार्य के द्वारा राष्ट्र की सेवा कर रहा है। संस्थान में आधुनिक स्तर की पौधशाला, वैज्ञानिक पद्धति पर स्थापित फलोद्यान तथा आधुनिक उपकरणों से सुसज्जित प्रयोगशालाएँ हैं जिसके द्वारा उपोष्ण बागवानी के महत्वपूर्ण चुनौतीपूर्ण विषयों पर अनुसंधान का कार्य किया जाता है। संस्थान की वैज्ञानिक पौधशाला में मुख्य रूप से आम, अमरूद, आँवला और बेल पर अनुसंधान का कार्य किया जा रहा है तथा साथ ही अनेक फलों की गुणवत्ता वाली पौध सामग्री यहाँ भी पौधशाला में तैयार की जाती है जिससे कृषकों, अनुसंधान संस्थानों एवं कृषि विज्ञान केंद्रों को मातृ ब्लॉक स्थापना हेतु पौध सामग्री उपलब्ध कराई जा सके। संस्थान ने कृषि शिक्षा एवं शोध को ध्यान में रखते हुए अनेक विश्वविद्यालयों एवं शोध संस्थानों के साथ अनुसंधान कार्य हेतु समझौता ज्ञापन किया हुआ है। राष्ट्रीय बागवानी मिशन से पुराने एवं अनुत्पादक आम के बागों के जीर्णोद्धार तथा अमरूद में मीडो बागवानी पर प्रशिक्षण के लिये संस्थान को नोडल केंद्र के रूप में मान्यता प्राप्त है। पूर्ण सुसज्जित रोग एवं कीटनाशी अवशेष विश्लेषण तथा जैव नियंत्रण प्रयोगशालाएँ संस्थान की अन्य विशेषताएँ हैं। संस्थान में तुड़ाई उपरांत प्रबंधन एवं मूल्यवर्धन हेतु आधुनिक सुविधाएँ उपलब्ध हैं। निकट पूर्ण में, पश्चिम बंगाल के मालदा में भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान के क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र की स्थापना 28 फरवरी, 2016 को की गयी। इससे अलावा संस्थान के क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र में कृषि विज्ञान केन्द्र की स्थापना 21 जनवरी, 2017 को की गयी।

संस्थान में आम, अमरूद, बेल, आँवला आदि अधिदेशित उपोष्ण फल फसलों के अलावा पपीता, जामुन, खिरनी, करौंदा, लसोढ़ा, शरीफा, फालसा, शहतूत, अंबार आदि गौड़ फल फसलों पर भी अनुसंधान का कार्य करता है। संस्थान के प्रक्षेत्र जीन बैंक में विश्व के सर्वाधिक आम (775 अभिगमन) संकलित किये गये हैं। संस्थान के प्रक्षेत्र जीन बैंक में अमरूद के 130 से अधिक अभिगमन संरक्षित हैं। संस्थान के अनुसंधान को किसानों एवं बागवानों तक पहुँचाने के लिये भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की महत्वाकाँक्षी योजना 'मेरा गाँव मेरा गौरव' के अंतर्गत संस्थान द्वारा आस–पास के 40 से अधिक गाँवों को अंगीकृत किया गया है। गाँवों के इन किसानों को फलों की तुड़ाई पूर्व प्रबंधन से लेकर आम के समेकित प्रबंधन प्रणाली तक की जानकारी दी जा रही है। संस्थान में ही फार्मर्स फर्स्ट परियोजना के अंतर्गत कसमंडीकलॉ, मोहम्मदनगर तालुकेदारी, मीठे नगर, नबी पनाह आदि गाँवों के 1100 किसानों को अंगीकृत किया गया है जिनकी आमदनी को 2022 तक दुगुनी करने के लिये संस्थान अनवरत प्रयासरत है।

संस्थान द्वारा विकसित वृक्ष छत्र विन्यास प्रबंधन तकनीकी से अधिक उत्पादन और उच्च गुणवत्ता प्राप्त करना संभव हुआ है। जीर्णोद्धरित बागों में अंतः फसलोत्पादन भी आमदनी बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुआ है। इस प्रकार के बागों में रोग एवं कीट संबंधी समस्याओं का निराकरण समेकित नियंत्रण में नवीनतम प्रभावी प्रबंधन तकनीकी के समावेश से प्राप्त किया जा सकता है। शहरी क्षेत्रों में उर्ध्वाधर खेती और बड़े गमले में बागवानी अपना स्थान बना रही है। परिवहन और भंडारण के दौरान होने वाली हानि को कम करने के लिये भी तकनीकी विकसित की गयी है। आम और अमरूद के उत्पादकों की आय में बढ़ोत्तरी से क्षेत्र के फल उत्पादकों की आर्थिक स्थिति एवं जीवन स्तर में महत्वपूर्ण सुधार संभावित है।

'उद्यान रश्मि' के इस संस्करण में संस्थान के अनुसंधान संबंधी बहुमूल्य जानकारियाँ सम्मिलित की गयी हैं जिनके लिये मैं लेखकों एवं संपादन मंडल को बधाई देता हूँ। सभी लेखकों के सहयोग के बिना यह पत्रिका अपने वर्तमान प्रस्तुत स्वरूप को प्राप्त नहीं कर पाती। आशान्वित हूँ कि भविष्य में भी वैज्ञानिकगण अपने उत्तम एवं अद्यतन लेखों के माध्यम से इस मनोहरी पत्रिका के प्रकाशन में अपना अद्वितीय योगदान देते रहेंगे।

शैलेन्द्र राजन
निदेशक

संपादकीय

भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ की राजभाषा पत्रिका 'उद्यान रश्मि' के वर्ष 17 के अंक–2 का संस्करण अद्यतन जानकारियों के साथ एक बार पुनः प्रस्तुत है। पिछले संस्करणों की भाँति इसमें भी कृषि, बागवानी तथा इनसे संबद्ध विषयों की नूतन जानकारियाँ उपलब्ध करायी गयी है। हिन्दी में विज्ञान की पत्रिका प्रकाशित करना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है और 'उद्यान रश्मि' के अनवरत प्रकाशन ने सिद्ध किया है इस चुनौती को भी संपादित किया गया है। इस पत्रिका ने न केवल किसानों एवं हिन्दी माध्यम के विद्यार्थियों के लिये एक सहायिका का कार्य किया है अपितु राजभाषा के लक्ष्यों को भी पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

संघ की राजभाषा नीति का कार्यान्वयन एक अत्यन्त ही दुरूह कार्य है किन्तु इसका कार्यान्वयन पूर्णरूपेण से कार्यालय प्रमुख की संकल्प शक्ति एवं राजभाषा के प्रति उनकी प्रतिबद्धता पर निर्भर करता है। यदि कार्यालय प्रमुख राजभाषा हिन्दी को अपने कार्यालय में कार्यान्वित करवाना चाहते हैं तो उसे कुछेक मूलभूत कार्य करने होंगे। इसके लिये सर्वप्रथम कार्यालय में राजभाषा कार्यान्वयन समिति का गठन कर समिति की प्रत्येक तिमाही में अनिवार्य रूप से एक बैठक आयोजित करनी होगी। बैठक में चर्चा उपरान्त लिये गये निर्णयों को कार्यवृत्त के माध्यम से प्रत्येक अधिकारी एवं कर्मचारी तक समय से पहुँचाना अनिवार्य होता है। बैठक के दौरान भारत सरकार के गृह मंत्रालय विभाग के राजभाषा विभाग द्वारा जारी वार्षिक लक्ष्य पर विस्तारपूर्वक चर्चा की जानी चाहिए। चर्चा के दौरान मूल रूप से हिन्दी पत्राचार, फाइलों पर हिन्दी में टिप्पणियाँ, धारा 3(3) के पत्रों का द्विभाषीय में जारी किया जाना, सेवा–पुस्तिकाओं में हिन्दी में प्रतिष्टियाँ करना, प्रवीणता प्राप्त अधिकारियों एवं कर्मचारियों के नाम से व्यक्तिशः आदेश जारी करना, पुस्तकों के लिये आबंटित राशि का 50 प्रतिशत हिन्दी की पुस्तकों के क्रय पर खर्चना, रजिस्टरों एवं फाइलों के नाम द्विभाषीय में होना, ई–मेल से पत्रों को हिन्दी में भेजना, कार्यालय का वेबसाइट द्विभाषीय में होना, सभी विभागों/प्रभागों/अनुभागों के स्तर पर जाँच बिन्दु बनाया जाना आदि कार्य यदि किये जायें तो हिन्दी के प्रसार में निःसंदेह बढ़ोत्तरी होगी। संस्थान एवं कार्यालयों में अधिकारियों एवं कर्मचारियों के प्रति हिन्दी में रूचि बढ़ाने हेतु प्रत्येक तिमाही में हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन किया जाना चाहिए। संस्थान के अधिकारियों की नाम पट्टिकाएँ अनिवार्य रूप से द्विभाषीय में होनी चाहिए। इसके अलावा प्रत्येक तिमाही के किये गये हिन्दी कार्य का लेखा–जोखा तिमाही प्रगति रिपोर्ट के माध्यम से मुख्यालय तथा राजभाषा विभाग के क्षेत्रीय कार्यालय को अनिवार्य रूप से प्रेषित किया जाना चाहिए। यदि उपरोक्त कार्य समयबद्ध तरीके से किये जायें तो हिन्दी का कार्यान्वयन अबाध रूप से होगा इसमें कोई बाधा उत्पन्न नहीं प्रतीत होती। इसके अलावा कार्यालय में प्रत्येक वर्ष हिन्दी दिवस के सुअवसर पर आयोजित होने वाले हिन्दी सप्ताह/हिन्दी पखवाड़ा/हिन्दी मास मनाया जाये जिससे प्रोत्साहन योजनाओं के माध्यम से अधिकारियों एवं कर्मचारियों को प्रेरित एवं प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इसके अलावा हिन्दी के प्रचार–प्रसार के लिये वार्षिक प्रतिवेदन, न्यूज लेटर तथा अन्य प्रसार संबंधित प्रकाशनों को द्विभाषीय में प्रकाशित किया जाना चाहिए। साथ ही, राजभाषा पत्रिका के दोनों अंकों हिन्दी में ही प्रकाशित किये जायें। इन सभी कार्यों को संपादन के लिये आंतरिक निरीक्षण की व्यवस्था भी की जानी चाहिए तभी हिन्दी कार्यालयों में आगे बढ़ेगी।

राजभाषा पत्रिका के प्रकाशन के माध्यम से हिन्दी कार्यान्वयन में सहयोग देने के लिये मैं राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष, इसके सदस्यों तथा प्रकाशन समिति के सभी सदस्यों का आभार प्रकट करता हूँ। मैं लेखकों को उनके अप्रतिम लेख प्रस्तुत करने के लिये भी धन्यवाद देता हूँ। पाठकों से आशा है कि वे अपने सुझाव सदा की भांति प्रेषित करते रहेंगे जिससे कि यह पत्रिका सभी पाठकों के लिये ज्ञानपयोगी बनी रहेगी।

धीरज शर्मा
(धीरज शर्मा)
सहायक निदेशक
(राजभाषा)

विषय-वस्तु

1. राजभाषा अधिनियम 1963 (यथासंशोधित, 1967) 1
(1963 का अधिनियम संख्यांक 19)

2. आम का जैविक उत्पादन 4
राम अवध राम

3. मृदा स्वास्थ्य के लिये जैविक खादों का महत्व 8
विनोद कुमार सिंह, दिनेश कुमार एवं घनश्याम पाण्डेय

4. बागवानी के लिये कैल्सियम का महत्व 10
विनोद कुमार सिंह, दिनेश कुमार एवं घनश्याम पाण्डेय

5. अमरूद में वैज्ञानिक विधि से फल और फूल नियंत्रण से लाभ 12
शिव पूजन, देवेन्द्र पाण्डेय, अंकित कुमार पाण्डेय एवं देवानन्द गिरी

6 पौधा किस्मों का पंजीकरण 14
जितेन्द्र कुमार एवं शैलेन्द्र राजन

7. आम के बागों में पिप्पली की खेती 19
सुशील कुमार शुक्ल, ए.के. द्विवेदी एवं घनश्याम पाण्डेय

8. सगंधीय पौधों की व्यावसायिक खेती की संभावनाएँ 22
अजय कुमार त्रिवेदी, घनश्याम पाण्डेय एवं सुशील कुमार शुक्ल

9. सब्जियाँ स्वास्थ्य के लिये वरदान 24
रेखा चौरसिया, भारती किल्लाड़ी, आभा सिंह एवं डी.के. शुक्ल

10. पलमीरा पाम में मूल्यवर्धित खाद्य उत्पाद 26
आभा कुमारी एवं रजनी राजन

11. अल्पतम एवं संपूर्ण प्रसंस्करण द्वारा फलों में मूल्य वृद्धि 29
डी.के. टंडन, ए.के. भट्टाचार्जी एवं अभय दीक्षित

12. फसल एवं अन्य कार्बनिक अवशेषों का कुशल प्रबंधन 31
राम अवध राम

13. आम के फलों के रोग : कारण एवं निवारण 34
पी.के. शुक्ल, तहसीन फातिमा, गुंडप्पा एवं निधि कुमारी

14. बागवानी फसलों में माइट की समस्या और उनका प्रबंधन 37
भाग्यश्री एस.एन., संजीव रंजन सिन्हा, सागर डी. एवं सुरेश नेबापुरे

15. आम का प्रसंस्करण मूल्य संवर्धन तथा अपशिष्ट उपयोग 39
नीलिमा गर्ग, संजय कुमार एवं हरीश चन्द्र वर्मा

16. सूक्ष्म जीवों का बागवानी एवं कृषि में योगदान 43

गोविन्द कुमार, राजकुमार, प्राणनाथ बर्मन, घनश्याम पाण्डेय एवं शैलेन्द्र राजन

17. पोषण सुरक्षा के लिये फल–सब्जी भंडारण एवं परिरक्षण में महिलाओं की भूमिका 46

आभा सिंह, भारती किल्लाड़ी, पवन सिंह गुर्जर एवं डी.के. शुक्ल

18. स्वास्थ्य गुणों से परिपूर्ण हैं फल आधारित अल्कोहलिक पेय 48

नीलिमा गर्ग एवं संजय कुमार

19. फलदार पौधों में फसल नियमन पर एक समीक्षा 52

राजकुमार, प्राणनाथ बर्मन, गोविन्द कुमार एवं शैलेन्द्र राजन

20. वर्षा पर निर्भर वैज्ञानिक खेती की विधि 54

देवानन्द गिरी, देवेन्द्र पाण्डेय एवं शिव पूजन

21. प्लास्टिक प्रदूषण : समस्या एवं निदान 58

यशी बाजपेयी, लक्ष्मी रस्तोगी, मुथ्थुकुमार एम. एवं अंजू बाजपेयी

22. वायु प्रदूषण और मानव स्वास्थ्य 61

देवेन्द्र पाण्डेय, निकिता निहाल एवं देवानन्द गिरी

23. विविध : *हिन्दी से संबंधित* 67

राजभाषा अधिनियम, 1963 (यथासंशोधित, 1967)

(1963 का अधिनियम संख्यांक 19)

भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

उन भाषाओं का, जो संघ के राजकीय प्रयोजनों, संसद में कार्य के संव्यवहार, केन्द्रीय और राज्य अधिनियमों और उच्च न्यायालयों में कतिपय प्रयोजनों के प्रयोग में लायी जा सकेंगी, उपबंध करने के लिये अधिनियम, भारत गणराज्य के चौदहवें वर्ष में संसद द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हों।

1. संक्षिप्त नाम और प्रारंभ

(1) यह अधिनियम राजभाषा अधिनियम, 1963 कहा जा सकेगा।

(2) धारा 3, जनवरी, 1965 के 26वें दिन को प्रवृत्त होगी और इस अधिनियम के शेष उपबंध उस तारीख को प्रवृत्त होंगे जिसे केन्द्रीय सरकार, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करें और इस अधिनियम के विभिन्न उपबंधों के लिये विभिन्न तारीखें नियत की जा सकेगी।

2. परिभाषाएँ–इस अधिनियम में जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो

(क) 'नियत दिन' से, धारा 3 के संबंध में, जनवरी, 1965 का 26वाँ दिन अभिप्रेत है और इस अधिनियम के किसी अन्य उपबंध के संबंध में वह दिन अभिप्रेत है जिस दिन को वह उपबंध प्रवृत्त होता है;

(ख) 'हिन्दी' से वह हिन्दी अभिप्रेत है जिसकी लिपि देवनागरी है।

3. संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिये और संसद में प्रयोग के लिये अंग्रेजी भाषा का रहना

(1) संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की कालावधि की समाप्ति हो जाने पर भी हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी भाषा, नियत दिन से ही।

(क) संघ के उन सब राजकीय प्रयोजनों के लिये जिनके लिये वह उस दिन से ठीक पहले प्रयोग में लायी जाती थी; तथा

(ख) संसद में कार्य के संव्यवहार के लिये प्रयोग में लायी जाती रह सकेगी।

परंतु संघ और किसी ऐसे राज्य के बीच, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, पत्रादि के प्रयोजनों के लिये अंग्रेजी भाषा प्रयोग में लायी जायेगी।

परंतु यह और जहाँ किसी ऐसे राज्य के, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में अपनाया है और किसी अन्य राज्य के, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, बीच पत्रादि के प्रयोजनों के लिये हिन्दी को प्रयोग में लाया जाता है, वहाँ हिन्दी में ऐसे पत्रादि के साथ–साथ उसका अनुवाद अंग्रेजी भाषा में भेजा जायेगा।

परंतु यह और भी कि इस उपधारा की किसी भी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह किसी ऐसे राज्य को, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, संघ के साथ या किसी ऐसे राज्य के साथ, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में अपनाया है, या किसी अन्य राज्य के साथ, उसकी सहमति से, पत्रादि के प्रयोजनों के लिये हिन्दी को प्रयोग में लाने से निवारित करती है, और ऐसे किसी मामले में उस राज्य के साथ पत्रादि के प्रयोजनों के लिये अंग्रेजी भाषा का प्रयोग बाध्यकर न होगा।

(2) उपधारा (1) में अनर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, जहाँ पत्रादि के प्रयोजनों के लिये हिन्दी या अंग्रेजी भाषा

(i) केन्द्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के और दूसरे मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के बीच

(ii) केन्द्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के और केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में

या नियंत्रण में के किसी निगम या कंपनी या उसके किसी कार्यालय के बीच

(iii) केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में या नियंत्रण में के किसी निगम या कंपनी या उसके किसी कार्यालय के और किसी अन्य ऐसे निगम या कंपनी या कार्यालय के बीच

प्रयोग में लायी जाती है वहाँ उस तारीख तक, जब तक पूर्वोक्त संबंधित मंत्रालय, विभाग, कार्यालय या विभाग या कंपनी का कर्मचारी हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेता, ऐसे पत्रादि का अनुवाद, यथास्थिति, अँग्रेजी भाषा या हिन्दी में दिया जायेगा।

(3) उपधारा (1) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी हिन्दी और अँग्रेजी भाषा दोनों ही (प) संकल्पों, साधारण आदेशों, नियमों, अधिसूचानाओं, प्रशासनिक या अन्य प्रतिवेदनों या प्रेस विज्ञप्तियों के लिये, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा या उसके किसी मंत्रालय, विभाग या कर्यालय द्वारा या केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में या नियंत्रण में के किसी निगम या कंपनी द्वारा या ऐसे निगम या कंपनी के किसी कार्यालय द्वारा निकाले जाते हैं या किये जाते हैं;

(ii) संसद के किसी सदन या सदनों के समक्ष रखे गये प्रशासनिक तथा अन्य प्रतिवेदनों और राजकीय कामज–पत्रों के लिये,

(iii) केन्द्रीय सरकार या उसके किसी मंत्रालय, विभाग या कार्यालय द्वारा या उसकी ओर से या केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कंपनी द्वारा निष्पादित संविदाओं और करारों के लिये तथा निकाली गयी अनुज्ञपत्तियों अनुज्ञा पत्रों, सूचनाओं और निविदा–प्रारूपों के लिए, प्रयोग में लायी जाएगी।

(4) उपधारा (1) या उपधारा (2) या उपधारा (3) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना यह है कि केन्द्रीय सरकार धारा 8 के अधीन बनाये गये नियमों द्वारा उस भाषा या उन भाषाओं का उपबंध कर सकेगी जिसे या जिन्हें संघ के राजकीय प्रयोजन के लिये, जिसके अंतर्गत किसी मंत्रालय, विभाग, अनुभाग या कार्यालय का कार्यकरण है, प्रयोग में लाया जाना है और ऐसे नियम बनाने में राजकीय कार्य के शीघ्रता और दक्षता के साथ निपटारे का तथा जन साधारण के हितों का सम्यक ध्यान रखा जायेगा और इस प्रकार बनाये गये नियम विशिष्टतया यह सुनिश्चित करेंगे कि जो व्यक्ति का सम्यक ध्यान रखा जाएगा और इस प्रकार बनाए गए नियम विशिष्टतया यह सुनिश्चित करेंगे कि जो व्यक्ति संघ के कार्यकलाप के संबंध में सेवा कर रहे हैं और जो या तो हिन्दी में या अँग्रेजी भाषा में प्रवीण रूप से अपना काम कर सकें और और यह भी कि केवल इस आधार पर कि वे दोनों ही भाषाओं में प्रवीण नहीं है उनका कोई अहित नहीं होता है।

(5) उपधारा (1) के खंड (क) के उपबंध और उपधारा (2), उपधारा (3) और उपधारा (4) के उपबंध तब तक प्रवृत्त बने रहेंगे जब तक उनमें वर्णित प्रयोजनों के लिये अँग्रेजी भाषा का प्रयोग समाप्त कर देने के लिये ऐसे सभी राज्यों के विधान मण्डलों द्वारा, जिन्होंने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, संकल्प पारित नहीं कर दिये जाते और जब तक पूर्वोक्त संकल्पों पर विचार कर लेने के पश्चात ऐसी समाप्ति के लिये संसद (क) हर एक सदन द्वारा संकलप पारित नहीं कर दिया जाता।

4. राजभाषा के संबंध में समिति

(1) जिस तारीख को धारा 3 प्रवृत्त होती है उससे दस वर्ष के समाप्ति के पश्चात, राजभाषा के संबंध में एक समिति, इस विषय का संकल्प संसद के किसी भी सदन में राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी से प्रस्तावित और दोनों सदनों द्वारा पारित किये जाने पर गठित की जाएगी।

(2) इस समिति में तीस सदस्य होंगे जिनमें से बीस लोक सभा के सदस्य होंगे तथा इस इस राज्य सभा के सदस्य होंगे, जो क्रमशः लोक सभा के सदस्यों तथा राज्य सभा के सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित होंगे।

(3) इस समिति का कर्तव्य होगा कि वह संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिये हिन्दी के प्रयोग में की गयी प्रगति का पुनर्विलोकन करें और उस पर सिफारिशें करते हुए राष्ट्रपति उस प्रतिवेदन को संसद के हर एक सदन के समक्ष रखवायेगा और सभी राज्य सरकारों को भिजवायेगा।

(4) राष्ट्रपति उपधारा (3) में निर्दिष्ट प्रतिवेदन पर और उस राज्य सरकारों ने यदि कोई मत अभिव्यक्त किये हों तो उन पर विचार करने के पश्चात उस समस्त प्रतिवेदन के या उसके किसी भाग के अनुसार निर्देश निकाल सकेगा।

परंतु इस प्रकार निकाले गए निदेश धारा 3 उपबंधों से असंगत नहीं होंगे।

5. केन्द्रीय अधिनियमों आदि का प्राधिकृत हिन्दी अनुवाद

(1) नियत दिन को और उसके पश्चात शासकीय राजपत्र में राष्ट्रपति के प्राधिकार से प्रकाशित

(क) किसी केन्द्रीय अधिनियम का या राष्ट्रपति द्वारा प्रख्यापित किसी अध्यादेश का अथवा

(ख) संविधान के अधीन या किसी केन्द्रीय अधिनियम के अधीन निकाले गये किसी आदेश, नियम, विनिमय या उपविधि का हिन्दी में अनुवाद उसका हिन्दी में प्राधिकृत पाठ समझा जायेगा।

(2) नियत दिन से ही उन सब विधेयकों के, जो संसद के किसी भी सदन में पुनःस्थापित किये जाने हो और उन सब संशोधनों के, जो उनके संबंध में संसद के किसी भी सदन में प्रस्तावित किये जाने हों, अँग्रेजी भाषा के प्राधिकृत पाठ के साथ–साथ उनका हिन्दी में अनुवाद भी होगा जो ऐसी रीति से प्राधिकृत किसी जायेगा, जो इस अधिनियम के अधीन बनाये गये नियमों द्वारा निहित की जाये।

6. कतिपय दशाओं में राज्य अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी अनुवाद

जहाँ किसी राज्य के विधानमण्डल ने उस राज्य के विधानमण्डल द्वारा पारित अधिनियमों में अथवा उस राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशों में प्रयोग के लिए हिन्दी से भिन्न कोई भाषा विहित की है वहाँ, संविधान के अनुच्छेद 348 के खण्ड (3) द्वारा अपेक्षित अँग्रेजी भाषा में उसके अनुवाद के अतिरिक्त, उसका हिन्दी में अनुवाद उस राज्य के शासकीय राजपत्र में, उस राज्य के राज्यपाल के प्राधिकार से, नियत दिन को या उसके पश्चात प्रकाशित किया जा सकेगा और ऐसी दशा में ऐसे किसी अधिनियम या अध्यादेश का हिन्दी में अनुवाद हिन्दी भाषा में उसका प्राधिकृत पाठ समझा जायेगा।

7. उच्च न्यायालयों के निर्णयों आदि में हिन्दी या अन्य राजभाषा का वैकल्पिक प्रयोग

नियत दिन से ही या तत्पश्चात किसी भी दिन से किसी राज्य या राज्यपाल, राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से, अँग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिन्दी या उस राज्य की राजभाषा का प्रयोग, उस राज्य के उच्च न्यायालय द्वारा पारित या दिये गये किसी निर्णय, डिक्री या आदेश के प्रयोजनों के लिये प्राधिकृत कर सकेगा और जहाँ कोई निर्णय, डिक्री या आदेश (अँग्रेजी भाषा से भिन्न) ऐसी किसी भाषा में पारित किया या दिया जाता है वहाँ उसके साथ–साथ उच्च न्यायालय के प्राधिकार से निकाला गया अँग्रेजी भाषा में उसका अनुवाद भी होगा।

8. नियम बनाने की शक्ति

(1) केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिये नियम, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा बना सकेगी।

(2) इस धारा के अधीन बनाया गया हर नियम, बनाये जाने के पश्चात यथाशीघ्र, संसद के हर एक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिये रखा जायेगा। वह अवधि एक सत्र में, अथवा दो या अधिक आनुक्रममिक सत्रों में पूरी हो सकेगी। यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रममिक सत्रों को ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन या उस नियम में कोई परिवर्तन करने के लिये सहमत हो जाएँ तो तत्पश्चात वह ऐसे परिवर्तन रूप में ही प्रभावी होगा। यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएँ कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात यह निष्प्रभाव हो जाएगा। किन्तु नियम के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गयी किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा।

9. कतिपय उपबंधों का जम्मू–कश्मीर को लागू न होना

धारा 6 और 7 के उपबंध जम्मू–कश्मीर राज्य को लागू न होंगे।

आम का जैविक उत्पादन

राम अवध राम[1]
भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

फलों के राजा आम का भारत में आदिकाल से उत्पादन किया जाता रहा है। भारत में आम की खेती उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, बिहार, गुजरात, पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु एवं महाराष्ट्र में बहुतायत की जाती है। भारत में वर्ष 2017–18 के दौरान आम के उत्पादन का कुल क्षेत्रफल 2300 मिलियन हेक्टेयर था जबकि कुल उत्पादन 20.515 मिलियन टन ऑकलित किया गया। आम का सबसे अधिक उत्पादन उत्तर प्रदेश में हुआ जो कुल उत्पादन का लगभग 23.86 प्रतिशत था। आंध्र प्रदेश का 22.14 प्रतिशत, कर्नाटक 11.7 प्रतिशत, बिहार 8.79 प्रतिशत, गुजरात 6.00 प्रतिशत एवं तमिलनाडु 5.09 प्रतिशत का योगदान रहा। भारत विश्व का सर्वाधिक आम उत्पादक देश है एवं विश्व के आम उत्पादन में भारत का योगदान 40.48 प्रतिशत का है। विगत अनेक वर्षों से आम उत्पादन में कीट एवं रोगों के प्रबंधन के लिये अधिक–से–अधिक कीट एवं रोगनाशकों का प्रयोग हो रहा है जिससे परागणकर्ता कीटों एवं अन्य लाभप्रद जीवों की संख्या में कमी हो रही है। कृषि रसायनों के अत्यधिक उपयोग से आम उत्पादन लागत में वृद्धि, वायुमण्डलीय प्रदूषण एवं भूमि की उर्वराशक्ति में कमी एवं भौतिक दशा में विशेष परिवर्तन एवं उत्पादन में कमी हो रही है। किसान द्वारा आम में सामान्तया 5–6 बार कीटनाशकों का प्रयोग किया जाता है जो विश्व व्यापार संगठन एवं स्वास्थ्य संबंधी मापदंडों से अधिक है। अतः भूमि की उर्वराशक्ति में वृद्धि, वायुमंडलीय प्रदूषण एवं लागत खर्च की कमी हेतु जैविक खादों एवं कीटनाशकों का प्रयोग आवश्यक हो गया है।

पोषक तत्व प्रबंधन

आम के नये पौधों (1–5 वर्ष वाले) में सितंबर–अक्टूबर में 10 किलोग्राम कम्पोस्ट तने से एक फीट की दूरी पर नाली या थाले में अच्छी प्रकार से मिट्टी में मिलाकर देना चाहिए। 10 या 10 से अधिक वर्ष वाले पौधों में तीस से चालीस किलोग्राम गोबर की खाद/बायोडायनमिक कम्पोस्ट/वर्मी कम्पोस्ट को जुलाई–सितंबर माह में तने से 1 मीटर की दूरी पर नाली बनाकर प्रयोग करना चाहिए। खाद के साथ 250 ग्राम काऊ पैट पिट या जीवामृत के 20 प्रतिशत घोल का 10 लीटर घोल का खाद पर छिड़काव करना चाहिए। वर्ष में दो बार (वर्षा ऋतु के पहले एवं बाद में) बायोडायनमिक का लेप जमीन से 1.5 मीटर ऊँचाई तक करना चाहिए। थाले में 6 इंच मोटी जैविक अवशेषों की बिछावन डालकर अमृत पानी के 20 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करना चाहिए। समुचित विकास एवं फलन–फूलन के लिये 50 प्रतिशत वर्मीवॉश के घोल का पर्णीय छिड़काव करना चाहिए।

चित्र 1 : आम के वृक्ष में खाद का प्रयोग

कीट एवं रोग प्रबंधन

भुनगा

इस कीट का प्रकोप फूल एवं फल के लगने के समय अधिक होता है। इस कीट के अधिक प्रकोप से फल गिर जाते हैं, पत्तियों पर कीट मधु का स्राव करते हैं जिससे काली फफूँद का संक्रमण होता है जिसके फलस्वरूप पत्तियाँ काली पड़ जाती हैं। इसके नियंत्रण हेतु जैविक कीटनाशी का छिड़काव आम के बौर आने के समय से

[1]प्रधान वैज्ञानिक

शुरु कर देना चाहिए। प्रथम छिड़काव बायोडायनमिक तरल कीटनाशक से शुरू करना चाहिए। तत्पश्चात नीम के बीज के अर्क का 5–10 प्रतिशत प्रत्येक 15 दिन पर एक छिड़काव करना आवश्यक होता है। इस छिड़काव से अन्य हानिकारक कीटों का भी नियंत्रण होता है।

चित्र 2 : आम की पत्तियों पर भुनगे का प्रकोप

गुझिया कीट

यह कीट जनवरी से मार्च माह में वृक्षों पर चढ़ता है तथा पत्तियों और आम के बौर, कोयल छोटे फलों का रस चूसते हैं जिससे फल गिर जाते हैं। इसके नियंत्रण हेतु दिसंबर में 30 सेंटीमीटर चौड़ी पॉलिथीन भूमि से 5–10 सेंटीमीटर की ऊँचाई पर बाँध दी जाती है। साथ ही पॉलिथीन के निचले किनारों पर ग्रीस लगाते हैं जिससे गुझिया कीट के बच्चे पेड़ पर चढ़ नहीं पायें। अक्टूबर–नवंबर में थाले की गुड़ाई करने पर कीट के अंडे नष्ट हो जाते हैं। दिसंबर–जनवरी माह में प्रति थाला 250 ग्राम *बिवेरिया बेसियाना* के घोल का तने के आस–पास छिड़काव लाभप्रद होता है।

चित्र 3 : आम के बौर पर कीट का प्रकोप एवं आम के तने पर कीट के नियंत्रण हेतु पॉलिथीन बाँधना

फल–मक्खी

आम की देर से पकने वाली प्रजातियों में फल–मक्खी का अधिक प्रकोप होता है। मादा कीट फलों में अंडे देती हैं जिससे कुछ दिनों के पश्चात लार्वा निकलकर गूदे को खाता है। इससे फल सड़ जाते हैं। इस कीट के प्रबंधन के लिये सड़े एवं गिरे फलों को भूमि में गड्ढा खोदकर दबा देना चाहिए। प्रति एकड़ मिथाइल यूजिनाल के 4–6 ट्रैप को पेड़ों पर जून–जुलाई माह में लटकाने से फल–मक्खी का नियंत्रण होता है।

चित्र 4 : आम के बाग में मिथाइल यूजिनाल ट्रैप का प्रयोग

तना भेदक कीट

इस कीट का प्रकोप वर्षा ऋतु के दौरान अधिक होता है। इसका प्रकोप अधिकतर पुराने आम के बागों में अधिक पाया गया है। यह कीट आम के तने में सुरंग बनाता है जिससे वृक्ष धीरे–धीरे सूखने लगते हैं। इसकी रोकथाम के लिये हेतु वर्षा ऋतु के पश्चात सुरंग को साइकिल की तीली से साफकर रूई को नीम के तेल में या पेट्रोल में भिगोकर छिद्र में डालकर गीली मिट्टी से बंद कर देना चाहिए।

चित्र 5 : आम के तने पर कीट का प्रकोप

जाला कीट

यह कीट वर्षा ऋतु में आम की नयी पत्तियों शाखाओं पर जाला बनाकर खाता है जिससे फलन–फूलन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसके नियंत्रण के लिये यंत्र से जाले को साफ करना चाहिए तथा जो भी सूखे अवशेष भूमि पर गिरते हैं उन्हें एकत्रित कर जला देना चाहिए। जाला हटाने के पश्चात बायोडायनमिक तरल कीटनाशक या नीम के बीज के अर्क के 10 प्रतिशत घोल का दो पर्णीय छिड़काव करना चाहिए।

चित्र 6 : जाला कीट का लार्वा, पत्तियों जाला एवं जाला साफ करने वाला यंत्र

खर्रा रोग

इस रोग के संक्रमण से बौर एवं छोटे फलों पर सफेद चूर्ण एकत्रित हो जाते हैं जिससे बौर एवं छोटे फल सूखकर गिर जाते हैं। इसके नियंत्रण हेतु बायोडायनमिक उत्प्रेरक 501 की 1 ग्राम मात्रा प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करनी चाहिए। 2 प्रतिशत चूना सल्फर का पर्णीय छिड़काव भी प्रभावी पाया गया है।

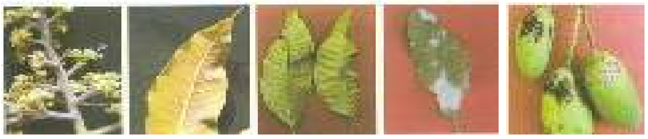

चित्र 7 : बौर, पत्ती एवं फल पर खर्रा रोग का लक्षण

एन्थ्रेक्नोज (फल विगलन रोग)

इस रोग के संक्रमण से पत्तियों एवं फलों पर काले धब्बे बनते हैं जो समयानुसार बढ़ जाते हैं। फलों की तुड़ाई के पश्चात काले–काले धब्बे पड़ जाते हैं जिससे फल सड़ जाते हैं। इसके नियंत्रण के लिये फलों को तोड़कर 52^{0} सेंटीग्रेड पर पानी में 10 मिनट तक उपचारित करना चाहिए। फलों की तुड़ाई के पूर्व वृक्षों पर 3 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड अथवा एक प्रतिशत बोर्डेक्स घोल का प्रत्येक 15 दिन के अंतराल पर दो बार छिड़काव करें।

चित्र 8 : आम की पत्ती, बौर एवं फल पर रोग के लक्षण

गोंद निकलना

गोंद निकलने से पौधों की डालियाँ तथा अधिक प्रकोप होने पर पूरा ही वृक्ष सूख जाता है। इस रोग के प्रबंधन हेतु गोंद को साफ कर गाय के ताजे गोबर का लेप/एक प्रतिशत बोर्डेक्स/कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के घोल का लेप करना चाहिए। स्वस्थ पौधों के तनों पर बायोडायनमिक वृक्ष लेप का प्रयोग वर्ष में दो बार करना चाहिए।

चित्र 9 : आम के तने पर रोग के लक्षण

वृक्ष लेप

वृक्ष का लेप वृक्षों को बीमारियों से सुरक्षा एवं स्वास्थ्य प्रदान करता है। तनों एवं शाखाओं पर लेप से बीमारियों का निदान होता है। कटाई–छँटाई के बाद लेप करने पर नयी शाखों की वृद्धि में सहायक होता है। पुराने एवं अनुत्पादक आम के बागों के जीर्णोद्धार में कटी शाखाओं पर वृक्ष लेप के प्रयोग से गोंद नहीं निकलता है तथा स्वस्थ शाखाएँ

चित्र 10 : कटी शाखों पर वृक्ष लेप एवं कॉपर आक्सीक्लोराइड घोल का प्रयोग

निकलती हैं। अतः आम के वृक्षों के जीर्णोद्धार के क्रम में वृक्ष लेप का प्रयोग करने से कॉपर आक्सीक्लोराइड पर किये गये अतिरिक्त खर्च में भारी कमी लायी जा सकती है।

पुष्प गुच्छ मिज

आम के बौर एवं पत्तियों पर मिज का प्रकोप होता है। बौर आने पर प्रौढ़ कीट छिद्र कर अंडे देते हैं जिससे लार्वा निकलकर बौर वाली शाखाओं के ऊतक को खाता है जिसके परिणामस्वरूप बौर सूख जाते हैं। इसके निराकरण हेतु बायोडायनमिक तरल कीटनाशी या 5 प्रतिशत नीम के तेल का प्रति सप्ताह दो बाद छिड़काव करना चाहिए।

चित्र 11 : आम के बौर पर मिज का प्रकोप

थ्रिप्स कीट

आम के फल लगने के बाद अप्रैल–मई में थ्रिप्स कीट का प्रकोप होता है जिससे फलों का छिल्का भूरे रंग का हो जाता है। फलस्वरूप प्रभावित फलों की वृद्धि एवं विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। संक्रमित फलों का व्यावसायिक मूल्य कम हो जाता है। इसके प्रभावी नियंत्रण के लिये फल लगने के पश्चात बायोडायनमिक तरल कीटनाशी या नीम के तेल का 5 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए।

चित्र 12 : आम के फलों पर थ्रिप्स का संक्रमण

आम का गुम्मा रोग

उत्तर भारत के आम में होने वाला यह एक प्रमुख रोग है जिससे अत्यधिक आर्थिक नुकसान होता है। यह रोग नर्सरी में भी पौधों की वृद्धि को प्रभावित करने के साथ फलदार पौधों में आम के बौर को भी प्रभावित करता है। वानस्पतिक एवं कुछ पुष्प गुम्मा रोग से पौधों की वृद्धि एवं उत्पादन प्रभावित होता है। वानस्पतिक गुम्मा रोग में पत्तियों का गुच्छ बन जाता है जिससे पौधे की वृद्धि प्रभावित होती है। पुष्प गुच्छ बनने पर पुष्प बौर में फल नहीं लगते हैं।

आम में होने वाले पुष्प गुम्मा रोग के निराकरण हेतु प्रत्येक वर्ष संक्रमित पुष्प गुच्छों को काटकर जला देना चाहिए जिससे पुष्प गुच्छ गुम्मा रोग का संक्रमण आगामी वर्ष में कम हो जाता है। वानस्पतिक गुम्मा रोग को भी काटकर जला देना चाहिए एवं पौधों का संवर्द्धन गुम्मा रोग प्रभावित मातृ वृक्ष से नहीं करना चाहिए।

चित्र 13 : वानस्पतिक एवं पुष्प गुम्मा रोग का संक्रमण एवं पुष्प गुम्मा रोग ग्रस्त बौर की कटाई

मधुशाला

मदिरालय जाने को घर से चलता है पीनेवला, किस पथ से जाऊँ? असमंजस में है वह भोला भाला,
अलग–अलग पथ बतलाते सब पर मैं यह बतलाता हूँ राह पकड़ तू एक चला चल, पा जाएगा मधुशाला।

–हरिवंशराय 'बच्चन'

मृदा स्वास्थ्य के लिये जैविक खादों का महत्व

विनोद कुमार सिंह[1], दिनेश कुमार[2] एवं घनश्याम पाण्डेय[3]
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

कृषि उपज अधिक प्राप्त करने के लिये मृदा को स्वस्थ रखना बहुत जरूरी है। जैविक खाद के प्रयोग से मृदा की उर्वराशक्ति का संरक्षण होता है और पौधों को आवश्यक पोषक तत्वों की आपूर्ति होती है। किसान फसलों की आवश्यकतानुसार संतुलित मात्रा खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग नहीं कर पाते हैं जिससे मृदा स्वास्थ पर बुरा प्रभाव पड़ता है। मृदा को स्वस्थ्य बनाये रखने के लिये जीवांश पदार्थ का महत्वपूर्ण योगदान है। यह मृदा के भौतिक, रसायनिक और जैविक गुणों में सुधार लाकर मृदा के स्वास्थ्य और गुणवत्ता में सुधार लाता है। देश की अधिकांश मृदाओं में जीवांश पदार्थ की कमी पायी जाती है जिसको बढ़ाने के लिये जैविक खादों का विशेष महत्व है। खाद का प्रयोग करने से पौधों के लिये मृदा में आवश्यक पोषक तत्वों को धारक एवं पूर्ति करने की क्षमता बढ़ जाती है।

खाद देने की आवश्यकता

फसल उत्पादन अधिक प्राप्त करने पर पौधों के लिये आवश्यक पोषक तत्व जमा होने की अपेक्षा अधिक मात्रा में खर्च होते हैं। पोषक तत्वों और जैविक पदार्थ को मृदा में संतुलित मात्रा कायम रखने के लिये खाद का सहारा लेना पड़ता है जिसके कारण खाद देने की आवश्यकता होती है।

मृदा के पोषक तत्वों का ह्रास

1. फसलों का उपयोग,
2. लीचिंग द्वारा नष्ट होना,
3. खरपतवारों द्वारा ह्रास होना,
4. मृदा क्षरण द्वारा नष्ट होना,
5. वाष्पीकरण और विनाइट्रीकरण द्वारा।

मृदा की उर्वराशक्ति बढ़ाने के लिये हरी खाद का विशेष महत्व है। इसके द्वारा मृदा स्वास्थ्य को निरंतर बनाये रखते हुए अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है।

हरी खाद के लिये प्रयोग की जाने वाली फसलें तथा उनसे प्राप्त हरा पदार्थ एवं संस्थापित नाइट्रोजन की मात्रा

क्रम सं.	फसल का नाम	प्रति हेक्टेयर प्राप्त हरा पदार्थ (मैट्रिक टन)	नमी का प्रतिशत	प्रति हेक्टेयर संस्थापित नाइट्रोजन किलोग्राम
1.	सनई	19.10	75.00	82.50
2.	ढैंचा	18.0	78.20	75.78
3.	मूँग	11.00	75.00	60.92
4.	लोबिया	13.50	86.00	55.50
5.	उर्द	11.00	83.00	42.10
6.	मटर	18.00	83.00	65.97
7.	मैंथी	10.44	82.00	35.51

जैविक खाद का मृदा के गुणों पर प्रभाव

(क) भौतिक गुणों पर प्रभाव

1. मृदा में वायु संचार बढ़ता हैं।
2. मृदा में जलधारण करने की क्षमता में वृद्धि होती है।
3. मृदा में तापमान का स्तर सुधरता है।
4. मृदा में पौधों की जड़ों का विकास अच्छा होता है।
5. खादों के प्रयोग से मृदा की संरचना में सुधार होता है।
6. मृदा का कटाव कम होता है।

[1]मुख्य तकनीकी अधिकारी एवं [2,3]प्रधान वैज्ञानिक

(ख) मृदा के रासायनिक गुणों पर प्रभाव

1. मृदा में पोषक तत्वों के साथ–साथ हार्मोन्स और ऐंटिबॉयोटिक भी प्रदान करता है।
2. पौधों में आवश्यक पोषक पदार्थ की मात्रा बढ़ती है।
3. फॉसफोरस और पौटेशियम उपलब्धता सरल यौगिकों में बदल जाते हैं।
4. मृदा में अनुपलब्ध पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है।
5. मृदा के सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता पौधों के लिये अधिक हो जाती है।

(ग) मृदा जैविक गुणों पर प्रभाव

1. मृदा में लाभदायक जीवाणुओं की क्रियाशीलता बढ़ जाती है।
2. वातावरण की नाइट्रोजन का स्थिरीकरण जीवाणुओं द्वारा अधिक होता है।
3. मृदा में लाभदायक जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होती है।
4. अनेक जीवाणुओं मृदा से पौधों–से–पौधों के लिये आवश्यक पोषक तत्वों को लेकर पौधों को प्रदान करते हैं।

जैविक खाद में पोषक तत्वों का प्रतिशत

क्र.स.	खादें	नाइट्रोजन	फॉस्फोरस	पौटेशियम
1.	गोबर की खाद	0.5	0.2	0.5
2.	कम्पोस्ट	0.5	0.15	0.5
3.	पशु मूत्र	0.8	0.01	1.4
4.	कुक्कुट मल–मूत्र	1.46	1.17	0.62
5.	महुआ खली	2.5	0.8	1.8
6.	मूँगफली खली	7.4	1.5	1.3
7.	नीम खली	5.2	1.0	1.4..
8.	सरसों खली	5.21	1.74	1.17
9.	तिल की खली	6.21	2.0	1.26

मृदा में पोषक तत्वों से प्राप्त होने के साधन

1. फसलों के अवशेषों द्वारा।
2. खाद द्वारा।
3. वर्षा द्वारा।
4. दलहनी फसलों द्वारा।
5. मृदा सुधारकों द्वारा।
6. ऐजेटोबैक्टर जीवाणु द्वारा।

जैविक खाद के प्रयोग की सीमाएँ

1. जैविक खाद में पोषक तत्वों की प्रतिशत मात्रा कम होती है जिसके कारण अधिक मात्रा की आवश्यकता पड़ती है।
2. जैविक खाद का प्रयोग फसल की बोआई से 1–3 माह पूर्व करना अधिक लाभदायक होता है।
3. खाद को खेत में बिखेरकर मृदा को अच्छे से मिलाना आवश्यक होता है।
4. सामान्यतया इनका प्रयोग खड़ी फसल में नहीं किया जाता है।
5. खादों का प्रयोग पानी में घोलकर पौधों पर छिड़काव हेतु सामान्यतया नहीं किया जाता है।

जैविक खादों का उपज पर प्रभाव

1. अधिक उत्पादन के साथ–साथ उर्वरकों की बचत एवं मृदा की उर्वराशक्ति भी बढ़ती है।
2. हरी खाद के प्रयोग करने से 35 प्रतिशत तक अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है।
3. जैविक खाद का प्रयोग टिकाऊ कृषि उत्पादन हेतु आवश्यक है।
4. जैविक खाद को प्रयोग करने से गुणवत्तायुक्त उपज प्राप्त होती है।
5. जैविक खाद के प्रयोग से अधिक फलोत्पादन प्राप्त होता है और मृदा उर्वरता बढ़ने के साथ–साथ मृदा स्वास्थ्य भी ठीक रहता है।

बागवानी के लिये कैल्सियम का महत्व

विनोद कुमार सिंह[1], दिनेश कुमार[2] एवं घनश्याम पाण्डेय[3]
भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

जल पौधों के जीवन का आधार होता है। पौधों में अधिकांश भाग जल का ही होता है। पौधों को सुखाने पर जल की अधिकांश मात्रा वाष्पित हो जाती है और शुष्क पदार्थ ही शेष बचता है। अवशेष शुष्क पदार्थ में लगभग 85–90 प्रतिशत मात्रा खनिज तत्वों की होती है जिसे पौधे मृदा से प्राप्त करते हैं।

पौधों के उचित बढ़वार के लिये मृदा जल और वायु से अनेक पोषक तत्वों को ग्रहण करती है। पौधों की पोषण देने वाले भाग पोषक तत्व कहलाते हैं। इन पोषक तत्वों की अनुपस्थिति में पौधे अपने जीवन–चक्र को सफलतापूर्वक पूरा नहीं कर पाते हैं इसलिए इन्हें आवश्यक पोषक तत्व की संज्ञा दी जाती है। आवश्यक पोषक तत्वों का पौधों के ग्रहण करने से सीधा संबंध होने के कारण उन तत्वों का पौधों के पोषण में प्रमुख स्थान रहता है। आवश्यक तत्वों की कमी होने पर फसल उत्पादन संभव नहीं होता है। एक आवश्यक तत्व की कमी से दूसरे तत्व द्वारा पूरी नहीं की जा सकती है। तत्व विषेष की कमी के लक्षण निश्चित प्रकार के होने के साथ किसी दूसरे तत्व की कमी से प्रकट नहीं होते हैं। पौधा में कैल्सियम गतिशील नहीं होता है।

कार्य

पौधों में पोषक तत्वों के कुछ आधारभूत कार्य होते हैं जिसमें कोशिका अवयवों एवं उपापचयी यौगिकों के संरचनात्मक तत्व के रूप में कोशिका संघटाकों में मरम्मत कार्य ऊर्जा स्थानांतरण और एंजाइमों की क्रियाशीलता आते हैं। पौधों की कोशिकाओं के दीवार के निर्माण में कैल्सियम मुख्य भूमिका होती है। यह पौधों की जड़ों के शिरों और नये ऊतकों के निर्माण के लिये आवश्यक तत्व हैं। पौधों में उत्पन्न कार्बनिक अम्लों को उदासीन करने के साथ अविषकारी कारक की भाँति भी कार्य करते हैं। इसकी कमी से न्यूक्लिक अम्ल संश्लेषण घट जाता है। यह बीज निर्माण में सहायक होता है। ये कुछ एन्जाइम की क्रियाशीलता को अधिक सक्रिय बनाते हैं और कार्बोहाइड्रेट के स्थानान्तरण में सहायक होते हैं।

दलहनी फसलों में निर्माण के लिये प्रोटीन आवश्यक होता है। आलू और मूंगफली के लिये यह अधिक लाभकारी है। यह पौधों में कार्बोहाइड्रेट संचालन में सहायक है। साथ ही, एन्जाइमों की क्रियाशीलता भी बढ़ाता है और पौधों में जैविक अम्लों को उदासीन बनाकर उनके विषाक्त प्रभाव को समाप्त करता है।

स्रोत

कैल्सियम के दो प्रमुख स्रोत होते हैं।

1. **खनिज पदार्थ** : डोलामाइट, कैल्सिाइट, एपेटाइट, कैल्सियम फेल्सपार और आंगाइट।
2. **खाद एवं उर्वरक** : गोबर की खाद, कम्पोस्ट, सुपर फॉस्फेट, चूना और जिप्सम आदि के रूप में कैल्सियम मृदा में मिलाया जाता है।

मृदा में कल्सियम के रूप

1. **खनिज कणों में उपस्थित कैल्सियम** : सभी प्राथमिक खनिजों में अधिकतर ग्रैवोस, बेसाल्ट और डाइबेस कैल्सियम पाया जाता है।
2. **कैल्सियम कार्बोनेट** : यह मृदा में कैल्सियम का एक मुख्य स्रोत है।
3. **कैल्सियम सल्फेट** : यह जिप्सम जैसे शुष्क क्षेत्रों की मृदा में अत्यधिक होता है।
4. **कैल्सियम फास्फेट** : यह मृदा में कम पाया जाता है।

मृदा में व्यवहार

फल वृक्षों के लिये कैल्सियम की उपलब्धता मृदा पी. एच. मान 6.5 से 7.0 में अच्छी होती है। आर्द्र क्षेत्रों और अम्लीय मृदाओं में कैल्सियम अधिकतर विनिमय योग्य रूप और अविच्छेदित प्राथमिक खनिजों के रूप में पाये जाते हैं। अधिकांश मृदाओं में कैल्सियम और हाइड्रोजन आयन विनिमय संकीर्ण पर सबसे अधिक मात्रा में उपस्थित होते हैं। यदि विलपन में कैल्सियम आयन की कमी हो जाती है

[1]मुख्य तकनीकी अधिकारी एवं [2,3]प्रधान वैज्ञानिक

तो अधिशोषित प्रावस्था से कैल्सियम आयन का विस्थापन मृदा विलपन में हो जाता है। मृदा से पौधे कैल्सियम विलपन रूप में ग्रहण करते हैं। पौधों के लिये कैल्सियम की उपलब्धता निम्नलिखित कारणों पर निर्भर करती है।

1. मृदा कोलाइड के प्रकार।
2. विनिमय योग्य कैल्सियम का मात्रा।
3. मृदा वातन।

पौधों में कैल्सियम की मात्रा

शुष्क पादप ऊतकों में कैल्सियम की मात्रा 0.1 से 2.0 प्रतिशत होती है। अधिकांश कैल्सियम पत्तियों में होती है। जड़ में इसकी मात्रा कम होती है। अम्लीय मृदा में उगने वाले पौधों में कैल्सियम की मात्रा कम होती है जबकि क्षारीय और उदासीन मृदाओं में उगने वाली फसलों (जैसे रजका, चुकन्दर आदि) में इसकी मात्रा अधिक होती है।

कैल्सियम की कमी के लक्षण

प्रथम अवस्था में कैल्सियम की कमी होने पर उसके लक्षण दिखायी नहीं देते हैं। आरंभ की स्थिति तब होती है जब पौधा तत्व की कमी का अनुभव करना प्रारंभ करता है। द्वितीय अवस्था में तत्व की कमी होने के लक्षण स्पष्ट दिखायी देने लगते हैं। पौधों में तत्व की कमी की दूसरी अवस्था में कुछ निश्चित रोगों के लक्षण भी दिखायी देते हैं। इससे पौधों में किस तत्व विशेष की कमी है उसका ऑकलन किया जा सकता है। तत्वों का निश्चित रूप से निर्धारण करने के लिये पत्तियों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है। तत्वों की कमी की स्थिति होने पर फसल की वृद्धि एवं उपज पर बुरा प्रभाव पड़ चुका होता है तथा बाहर से भी उस तत्व को देने पर फसल की उपज कम होना निश्चित होता है। इससे बचने के लिये मृदा विश्लेषण कराने के उपरांत ही फसल को उगाना चाहिए।

मृदा में कैल्सियम की कमी होने पर यह पौधों के एक से दूसरे भाग तक नहीं पहुँच पाता है, अर्थात पौधों में कैल्सियम की कमी हो जाने पर तत्व पौधे के पुराने भाग से नये भागों में नहीं पहुँच पाते हैं। अतः कैल्सियम की कमी से सबसे पहले नयी पत्तियों पर हानिकारक प्रभाव होता है। शीर्ष कलिका का विकास नहीं हो पाता तथा पत्तियों के किनारों की समान रूप से वृद्धि नहीं होती है जिससे किनारे कटे–फटे होते है। इसकी कमी से पत्तियों के किनारे का और अगला सिरा सूख जाता है। कैल्सियम की कमी के कारण जड़ों का विकास उचित नहीं हो पाता है। सेब, आम और नींबू कुलीय पौधों में इसकी कमी के लक्षण स्पष्ट रूप से दिखायी देते हैं। इसकी कमी से गुणवत्तायुक्त के कारण उत्पादन नहीं होता है। पौधों में ही फूल सूख जाते हैं और फल अच्छी तरह से विकसित नहीं हो पाते हैं। फलों का आकार छोटा होने के कारण बिना स्वाद वाले रह जाते हैं।

कैल्सियम की कमी को सुधारना

मृदा में कैल्सियम की कमी को डोलामाइट, जिप्सम, चूना आदि भूमि सुधारकों का प्रयोग कर दूर किया जाता है। गोबर की खाद में लगभग 5.74 प्रतिशत कैल्सियम ऑक्साइड होता है। कुछ उर्वरकों जैसे सुपर फास्फेट, कैल्सियम, अमोनियम नाइट्रेट, कैल्सियम नाइट्रेट, कैल्सियम साइनामाइट आदि का प्रयोग कर मृदा में कैल्सियम की कमी को दूर किया जा सकता है। अमोनियम आधारित उर्वरकों का प्रयोग नहीं करें। फलों के विकास के शुरुआती चरण में नाइट्रोजन का अधिक प्रयोग नहीं करें। यदि मिट्टी का पी.एच. मान कम हो तो चूना मिलाना चाहिए।

उर्वरकों में कैल्सियम की मात्रा

उर्वरक का नाम	प्रतिशत कैल्सियम
कैल्सियम नाइट्रेट	21
कैल्यियम साइनामाइड	37
कैल्सियम अमोनियम नाइट्रेट	8.8

सावधानियाँ

1. फसल रोपण के तीन–चार महीने पहले चूना का प्रयोग करें।
2. कैल्सियम के अच्छे अवशोषण हेतु मिट्टी में नमी की आवश्यकता होती है। मिट्टी में नमी होना अनिवार्य है।
3. कैल्सियम की कमी को पूरा करने के लिये कैल्सियम नाइट्रेट का छिड़काव कर सकते हैं। अच्छे परिणाम के लिये मृदा में कैल्सियम का प्रयोग करें।
4. कैल्सियम क्लोराइड का प्रयोग करते समय सावधानी अवश्य रखें। इसको उच्च तापमान 30 डिग्री सेंटीग्रेड पर करने से पत्तियों के जलने की संभावना रहती है।

अमरूद में वैज्ञानिक विधि से फल और फूल नियंत्रण से लाभ

शिव पूज़न[1] , देवेन्द्र पाण्डेय[2], अंकित कुमार पाण्डेय[3] एवं देवानन्द गिरी[4]
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ
स्नातकोत्तर, बिहार कृषि विश्वविद्यालय, साबोर, बिहार

स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से अमरूद एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण तथा संपूर्ण भारत वर्ष में आसानी से पैदा किया जाने वाला लोकप्रिय फल है। वैज्ञानिकों के विचार से अमरूद की उत्पत्ति अमेरिका के उष्णकटिबंधीय भाग तथा वेस्टइंडीज में हुई थी। भारत में अमरूद इतना अच्छा फलता–फूलता है मानो यह यहीं का देशज फल है।

अमरूद की खेती विभिन्न प्रकार की मृदा में आसानी से की जा सकती है क्योंकि न केवल इसके उत्पादन में कम लागत आती है बल्कि पैदावार भी काफी अच्छी होती है। इसके उत्पादन तथा प्रसार से बागवानों की आय बढ़ाने के साथ–साथ उपयुक्त पोषक तत्वों को प्राप्त करने में सहायता मिलती है। यही कारण है कि अमरूद को गरीबों का सेब भी कहा जाता है।

अमरूद पोषक तत्वों का एक बहुत ही उत्तम और सस्ता स्रोत है। अमरूद के फल स्वाद के साथ–साथ विटामिन और खनिज लवणों की प्राप्ति के लिये उपयोग में लाये जाते हैं। इसमें विटामिन 'सी' प्रचुर मात्रा में व्याप्त होता है। इसमें कुछ सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे लोहा, चूना, कैल्सियम और फॉस्फोरस भी अच्छी मात्रा में उपलब्ध होते हैं। यह पेक्टिन का भी बहुत अच्छा स्रोत है जिससे उत्कृष्ट प्रकार की जैली बनायी जाती है। ताजा खाने के अलावा इससे अनेक प्रकार के परिरक्षित पदार्थ भी तैयार किये जाते हैं जिसमें जैली, जैम, नेक्टर, चीज एवं टाफी प्रमुख हैं।

अमरूद से एक वर्ष में तीन फसलें प्राप्त की जा सकती हैं। लेकिन व्यावसायिक तौर पर केवल एक ही फसल लेना उचित होता है। भारत के पश्चिमी और दक्षिण ी भाग में दो बार और उत्तरी भाग में तीन बार अर्थात पूरे वर्ष नये फुटाव आते रहते हैं जिन पर फूल और फल लगते हैं।

ऐसे क्षेत्रों में जहाँ पर लंबे समय तक बरसात होती है वहाँ पर बरसात वाली फसल ली जाती है। लेकिन जिन क्षेत्रों में जाड़े और गर्मी के मौसम अलग–अलग होते हैं वहाँ पर जाड़े वाली फसल लेना लाभप्रद होता है।

अमरूद के नये फुटाव में फल आते हैं। उत्तर भारत में फूल आने के तीन समय होते हैं–बसंत ऋतु, वर्षा ऋतु और शरद ऋतु जिन्हें क्रमशः अम्बे बहार, मृग बहार एवं हस्त बहार भी कहा जाता है।

बसंत ऋतु के फूलों से वर्षा ऋतु में फल तैयार होते हैं। इसी प्रकार वर्षा ऋतु के फूलों से फल शरद ऋतु में और शरद ऋतु के फूलों से फल बसंत ऋतु में तैयार होते हैं (सारणी–1)। बसंत ऋतु की फसल के फूलों का आकार बड़ा और फल अच्छे गुणवत्ता वाले होते हैं। इसी तरह जाड़े की फसल में विटामिन 'सी' की मात्रा अधिक पायी जाती है और फलों की भंडारण क्षमता भी अच्छी होती है।

सारणी : अमरूद के अनेक 'बहारों' में पुष्पन, फलन एवं गुणवत्ता

बहार के प्रकार	फूल आने का समय	कटाई का समय	फलों की गुणवत्ता
अम्बे बहार	फरवरी–मार्च	जुलाई–सितंबर	फीका, पानी की तरह
मृग बहार	जून–जुलाई	नवंबर–जनवरी	उत्कृष्ट
हस्त बहार	अक्टूबर	फरवरी–अप्रैल	अच्छा, उपज कम, अच्छी कीमत

बहार नियंत्रण

उत्तर भारत में जाड़े की फसल को ही मुख्य रूप से लेना लाभकारी होता है। अतः बरसात वाली फसल को नहीं लिये जाने अथवा रोकने की सलाह दी जाती है। बरसात वाली फसल को रोकने के लिये निम्नलिखित उपाय किये जाने चाहिए।

[1,4]ए.आर.एफ., [2]प्रधान वैज्ञानिक एवं [3]पी.एच.डी. स्कॉलर

सिंचाई रोकना

जनवरी माह से मानसून आने तक अमरूद के पेड़ों की सिंचाई रोक दी जाती है। परिणामस्वरूप, वर्षा ऋतु की फसल काफी कम हो जाती है क्योंकि पानी की कमी के कारण अधिकांश फूल और छोटे फल गिर जाते हैं और जाड़े की फसल में वृद्धि होती है। यह विधि अधिकांशतः बलुई और हल्की मृदा वाली भूमि के लिये अच्छी मानी जाती है।

जड़ों की काट–छाँट करना

इस विधि से फलों को नियंत्रित करने के लिये मार्च–अप्रैल में पेड़ के फैलाव के नीचे 20–30 सेंटीमीटर गहरी मिट्टी निकाल दी जाती है। पेड़ को एक–दो माह तक इस अवस्था में रखा जाता है। इसके बाद जून के प्रथम सप्ताह में जड़ों को खाद और मिट्टी से ढक दिया जाता है और सात दिन के अन्तराल पर दो सिंचाई की जाती है।

नये प्ररोहों की काट–छाँट करना

अप्रैल–मई में जब अधिकांश फूल खिलना प्रारंभ होते हैं उस समय पेड़ के नये प्ररोहों को ऊपर से तीन–चौथाई भाग को काट दिया जाता है जिससे वर्षा ऋतु की फसल काफी कम हो जाती है और जाड़े की फसल बढ़ जाती है। यह बहार नियंत्रण की एक आसान और लाभकारी विधि है।

नेफ्थलीन एसिटिक अम्ल का छिड़काव

नेफ्थलीन एसिटिक एसिड का 300–500 मिलीग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से फूल आने के समय अच्छी तरह से दो बार छिड़काव करना चाहिए। पहला छिड़काव मई के प्रथम सप्ताह और दूसरा छिड़काव उसके 15 दिन बाद करने से बरसात की फसल काफी कम हो जाती है और जाड़े की फसल अच्छी होती है।

यूरिया का छिड़काव

इस विधि में अप्रैल–मई में 10 दिनों के अन्तराल पर पौधों पर यूरिया के 10 प्रतिशत घोल का छिड़काव इलाहाबाद सफेदा प्रजाति और 20 प्रतिशत घोल का छिड़काव सरदार (लखनऊ–49) प्रजाति के लिये उचित पाया गया है। इससे बरसात की फसल के फूल और पत्तियाँ गिर जाती हैं और जाड़े की फसल का अच्छा उत्पादन होता है।

अमरूद में गुणवत्तायुक्त फलों के भरपूर उत्पादन के लिये 'बहार उपचार' एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया होती है जिसको अपनाकर बागवान अमरूद की अच्छी उपज वाली गुणवत्ता युक्त फसल प्राप्त कर अधिक लाभ कमा सकते हैं।

हो गई है पीर पर्वत–सी पिघलनी चाहिए

हो गई है पीर पर्वत–सी पिघलनी चाहिए,
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।
आज यह दीवार, परदों की तरह हिलने लगी,
शर्त लेकिन थी कि ये बुनियाद हिलनी चाहिए।
हर सड़क पर, हर गली में, हर नगर, हर गाँव में,
हाथ लहराते हुए हर लाश चलनी चाहिए।
सिर्फ हंगामा खड़ा करना मेरा मकसद नहीं,
सारी कोशिश है कि ये सूरत बदलनी चाहिए।
मेरे सीने में नहीं तो तेरे सीने में सही,
हो कहीं भी आग, लेकिन आग जलनी चाहिए।

– दुष्यन्त कुमार

पौधा किस्मों का पंजीकरण

जितेन्द कुमार[1] एवं शैलेन्द्र राजन[2]
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

पौधा किस्म, कृषकों एवं पादप प्रजनकों के अधिकारों की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण अधिनियम को 2001 में पारित किया। इस अधिनियम के प्रावधानों को लागू करने के लिये कृषि एवं सहकारिता विभाग, कृषि मंत्रालय ने 11 नवम्बर, 2005 को पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण प्राधिकरण की स्थापना की। इस अधिनियम के तहत किसानों, प्रजनकों को पौधों की नयी किस्मों को पंजीकृत कराने, बेचने एवं आबंटन का अधिकार प्राप्त होता है। प्रस्तुत अधिनियम में पौधों की नयी किस्म का अर्थ है कि वह वनस्पति या पौध समूह जो अन्य प्रजातियों से अपनी अलग विषेषता रखता हो एवं इस विषेषता की वजह से अलग से पहचाना जा सके।

पौधा किस्मों के पंजीकरण के लिये मानदंड

कोई भी पौधा किस्म जो नवीनता, विशिष्टता, एकरूपता और स्थिरता मानदंड को पूरा करती है, सुरक्षा के लिये पंजीकरण कराया जा सकता है। पौधा किस्म पंजीकृत कराने हेतु औद्योगिक मापदंड को प्रदर्शित करने की आवश्यकता नहीं होती है, जैसा एक पेटेंट के तहत आवश्यक होता है। किसी पौधा किस्म के डीयूएस परीक्षण के लिये उसके समान किस्मों के साथ आमतौर पर कम–से–कम दो सत्रों के लिये लगाया जाता है और तथ्यों को रिकॉर्ड किया जाता है। जंगली पौधों की किस्मों को पंजीकृत नहीं किया जा सकता है। हालाँकि, किसी भी परंपरागत रूप से खेती की जाने वाली किस्म जो मानव हस्तक्षेपों के माध्यम से वर्चस्व सुधार की प्रक्रिया से गुजरी है को पंजीकृत और संरक्षित किया जा सकता है।

पंजीकरण के लिये निम्नलिखित विशेषताओं का होना आवश्यक है

नवीनता

संरक्षण के लिये आवेदन–पत्र दाखिल करने की तिथि पर भारत में या भारत के बाहर एक वर्ष से पहले सामग्री को बेचा नहीं गया हो। पेड़ों या लताओं के मामले में समय सीमा छह साल या किसी अन्य मामले में चार साल मान्य है।

विशिष्टता

किसी किस्म को अलग तब कहा जाता है जब यह स्पष्ट रूप से किसी अन्य किस्म से कम–से–कम एक आवश्यक विशेषता द्वारा अलग हो।

एकरूपता

एक किस्म को एक समान तब कहा जाता है जब यह अपने आवश्यक लक्षणों में पर्याप्त रूप से एकरूप है।

स्थिरता

एक किस्म को स्थिर कहा जाता है जो बार–बार प्रसार के बाद भी अपरिवर्तित रहे।

पौध किस्म के प्रकार

नयी किस्म

यदि किस्म नवीनता, विशिष्टता, एकरूपता और स्थिरता के मानदंडों के अनुरूप है तो अधिनियम के तहत एक नयी किस्म की तरह पंजीकृत किया जा सकता है।

विलुप्त किस्म

इस प्रकार की किस्म को अधिनियम के तहत पंजीकृत किया जा सकता है अगर यह विशिष्टता, एकरूपता और स्थिरता के मानदंडों के अनुरूप हो। इस प्रकार पौधे की किस्मों की सुरक्षा के लिये जाते समय नवीनता पर विचार नहीं किया जाता है।

पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण अधिनियम की धारा 2 (टी.एस.) (iii) और (iv) के तहत किसी भी प्रकार के रूप में मौजूदा किस्म को परिभाषित करता है "जो सार्वजनिक रूप में उपलब्ध हो या जिसके बारे में लोगों को सामान्य जानकारी हो।

कृषक किस्म

धारा 2(i) के तहत किसानों की किस्म का

[1]शोध सहयोगी एवं [2]निदेशक

अर्थ है एक ऐसी किस्म जिसे पारंपरिक रूप से किसानों द्वारा अपने खेतों में उगाया और विकसित किया गया हो।

लोग जो पौध किस्म के पंजीकरण के लिये आवेदन कर सकते हैं।

1. किसी भी व्यक्ति द्वारा जो पौध किस्म के प्रजनक होने का दावा करता है।
2. किस्म के प्रजनक का कोई उत्तराधिकारी।
3. आवेदन करने के अधिकार के संबंध में किसी भी व्यक्ति का हस्तान्तरिती या किस्म का प्रजनक।
4. कोई भी किसान या किसानों का समूह या कृषक समुदाय जो किस्म के प्रजनक होने का दावा करता है।
5. किसानों की ओर से आवेदन करने के लिये कोई भी अधिकृत व्यक्ति।
6. कोई भी विश्वविद्यालय या सार्वजनिक रूप से वित्त पोषित कृषि संस्थान जो विभिन्न प्रकार का प्रजनक होने का दावा करता है।

एक पौध किस्म के पंजीकरण के लिये आवश्यकताएँ

- आवेदकों का नाम, पता और राष्ट्रीयता के साथ–साथ उनके एजेंट की सेवा का पता।
- एक हलफनामे के अनुसार की किस्म में कोई जीन या जीन क्रम नहीं है जिसमें टर्मिनेटर तकनीक शामिल है।
- भारत में अपनी भौगोलिक स्थिति के साथ पैतृक पंक्तियों का पूरा पासपोर्ट डेटा और इस तरह की सभी जानकारी जो किसी भी किसान या प्रजनक, गांव, समुदाय, संस्थान या संगठन आदि के योगदान से संबंधित है, जो विभिन्न प्रकार के प्रजनन, विकास या विकास में है।
- नवीनता, विशिष्टता, एकरूपता और स्थिरता के विवरण के साथ किस्म के लक्षण।
- एक घोषणा कि इस तरह की विविधता के प्रजनन के लिये उपयोग की जाने वाली आनुवंशिक सामग्री को कानूनन अधिग्रहण किया गया है।

शुल्क का विवरण

पंजीकरण

किस्म का प्रकार	पंजीकरण शुल्क
अनिवार्य रूप से व्युत्पन्न किस्में	व्यक्तिगत रूपये 7000/– शैक्षणिक रूपये 10000/– व्यावसायिक रूपये 50000/–
बीज अधिनियम के तहत अधिसूचित 5 की धारा 1966 एक्सटेंट किस्म	रूपये 2000/–
नयी किस्म	व्यक्तिगत रूपये 7000/– शैक्षणिक रूपये 10000/– व्यावसायिक रूपये 50000/–
एक्सटेंट किस्म जिसके बारे में सामान्य ज्ञान है	व्यक्तिगत रूपये 7000/– शैक्षणिक रूपये 10000/– व्यावसायिक रूपये 50000/–

डी.यू.एस. परीक्षण

आवेदक के विभिन्न प्रकार के डीयूएस परीक्षण आयोजित करने के लिये शुल्क जमा करना होगा। डीयूएस परीक्षण शुल्क अलग–अलग फसलों के लिए प्राधिकरण द्वारा तय किया गया है और भारतीय पौधा किस्म जनरल में अधिसूचित किया गया है।

किस्म का प्रकार	वार्षिक शुल्क
नयी किस्म	रूपये 2000/– –+ पिछले वर्ष के दौरान पंजीकृत किस्म के बीजों के विक्रय मूल्य का 0.1 प्रतिशत और रॉयल्टी का 2 प्रतिशत, यदि कोई हो, पिछले वर्ष के दौरान किसी पंजीकृत किस्म के बीजों की बिक्री से प्राप्त हुआ।
कृषक किस्म	रूपये 10/– मात्र
बीज अधिनियम, के 5 की धारा 1966 तहत अधिसूचित एक्सटेंट वैराइटी	रूपये 2000/–
एक्सटेंट वैरायटी (वी.सी.के.)	रूपये 2000/– –+ पिछले वर्ष के दौरान पंजीकृत किस्म के बीजों की बिक्री का 0.1 प्रतिशत और साथ ही पंजीकृत किस्म के बीजों की बिक्री से पिछले वर्ष के दौरान प्राप्त रॉयल्टी का 0.5 प्रतिशत यदि कोई हो।

अन्य शुल्क

क्रम सं.	ममलों पर देय शुल्क	शुल्क की राशि	फॉर्म नंबर
(1)	(2)	(3)	(4)
1.	परीक्षण का आयोजन	1) अधिकतम रू. 200000/– प्रवेश प्रतिष्टि की प्रकृति और प्रकार के परीक्षण विषय पर निर्भर करता है। 2) ऑन फार्म–डीयूएस परीक्षण के लिये, शुल्क आइटम 1 के लिये निर्दिष्ट शुल्क के अधिकतम चार गुना एवं डीयूस परीक्षण साइटों के स्थानों पर निर्भर करेगा।	
2.	विरोध की सूचना	रूपये 10000/–	पीवी 3
3.	प्रत्यावेदन	रूपये 2000/–	पीवी 4
4.	समय का विस्तार	रूपये 5000/– प्रति माह।	पीवी 5
5.	अनिवार्य रूप से व्युत्पन्न किस्मों के पंजीकरण के लिये शुल्क	यक्तिगत रूपये 7000/– शैक्षणिक रूपये 10000/– व्यावसायिक रूपये 50000/–	
6.	निर्दिष्ट किस्मों के लिए पंजीकरण शुल्क बीज अधिनियम के तहत 5 की धारा 1966 अधिसूचित 1966 का 54	रूपये 2000/–	
7.	निर्दिष्ट किस्मों और किसानों की किस्मों के अलावा किसी भी प्रकार की पीढ़ी और प्रजातियों के पंजीकरण के लिये शुल्क। अधिनियम की धारा की उपधारा 292 के में निर्दिष्ट (क) के खंड 14 साथ धारा किस्मों धारा के अनुसार	यक्तिगत रूपये 7000/– शैक्षणिक रूपये 10000/– व्यावसायिक रूपये 50000/–	
8.	किस्म के पंजीकरण के लिये शुल्क जिसके बारे में आम ज्ञान है यानी, अधिनियम की धारा (टी.एस.) के खंड 2) iii के तहत निर्दिष्ट मौजूद किस्म।		
9.	नवीकरण शुल्क	कृषक – शुल्क नहीं यक्तिगत रूपये 7000/– शैक्षणिक रूपये 10000/– व्यावसायिक रूपये 80000/– प्रति वर्ष	पीवी 6
10.	लाभ साझा करने के लिये आवेदन	रूपये 10000/–	पीवी 7
11.	लाभ साझा करने के लिये विरोध की सूचना	रूपये 5000/–	पीवी 8
12.	एजेंट लाइसेंसधारी के रूप में पंजीकरण के लिये आवेदन शुल्क	रूपये 15000/–	पीवी 9
13.	पंजीकरण की शर्तों में बदलाव रद्द करने के लिये आवेदन	व्यक्तिगत – रूपये 3000/– शैक्षणिक – रूपये 5000/– व्यावसायिक – रूपये 10000/–	पीवी 10
14.	पंजीकरण की शर्तों में बदलाव रद्द करने के लिये आवेदन के विरोध की सूचना	रूपये 5000/–	पीवी 11

15.	पौधे किस्म के पंजीकरण के प्रमाण पत्र के आत्मसमर्पण का आवेदन	रूपये 5000/–	पीवी 12
16.	प्रमाण–पत्र को आत्मसमर्पण करने की पेशकश के लिये विरोध की सूचना	रूपये 5000/–	पीवी 13
17.	पंजीकरण का प्रमाण–पत्र रद्द करने के लिये आवेदन	रूपये 20000/–	पीवी 15
18.	पंजीकरण का प्रमाण–पत्र रद्द करने के लिये विरोध की सूचना	रूपये 5000/–	पीवी 16
19.	पौधे की किस्म के पंजीकरण के प्रमाण–पत्र को रद्द करने या बदलने के लिये आवेदन	रूपये 10000/–	पीवी 18
20.	राष्ट्रीय पौधे किस्म रजिस्टर में सुधार के लिये आवेदन	रूपये 10000/–	पीवी 19
21.	नेशनल पौध किस्म रजिस्टर में सुधार के लिये आवेदन के लिये विरोध की सूचना	रूपये 5000/–	पीवी 20
22.	मालिक/प्रजनक द्वारा राष्ट्रीय पौध किस्म रजिस्टर में सुधार के लिये आवेदन	रूपये 10000/–	पीवी 21
23.	पंजीकृत एजेंट या लाइसेंसधारी द्वारा राष्ट्रीय पौध किस्म रजिस्टर में सुधार के लिये आवेदन	रूपये 5000/–	पीवी 22
24.	एक पंजीकृत पौधे की विधिता को बदलने के लिये आवेदन	रूपये 20000/–	पीवी 23
25.	एक पंजीकृत पौधे की विविधता को बदलने के लिए आवेदन के विरोध की सूचना	रूपये 10000/–	पीवी 24
26.	मुआवजे का दावा करने के आवेदन के विरोध की सूचना	रूपये 5000/–	पीवी 26
27.	मुआवजे का दावा करने के आवेदन के विरोध की सूचना	रूपये 5000/–	पीवी 27
28.	अनिवार्य लाइसेंस प्रदान करने के लिये एक आवेदन	रूपये 25000/–	पीवी 28
29.	अनिवार्य लाइसेंस प्रदान करने के लिये एक आवेदन के विरोध की सूचना	रूपये 10000/–	पीवी 29
30.	अनिवार्य लाइसेंस के निरसन के लिये आवेदन	रूपये 10000/–	पीवी 30
31.	अनिवार्य लाइसेंस के निरसन के लिये आवेदन के लिए विरोध की सूचना	रूपये 5000/–	पीवी 31
32.	प्लांट वैराइटी रजिस्टर में प्रतिष्टि के निरीक्षण के लिये अनुरोध	रूपये 1000/प्रति–प्रविष्टि	पीवी 33
33.	धारा के तहत प्रमाणित प्रतियों के लिये 84 अनुरोध	रूपये प्रति पेज 500/–	पीवी 33

पंजीकरण का प्रमाण–पत्र

पंजीकरण का प्रमाण–पत्र जारी करने के लिये अधिकतम समय पौधे की किस्म के पंजीकरण के लिये आवेदन–पत्र भरने की तिथि से तीन वर्ष है।

पंजीकरण की अवधि

- **पेड़ों और लताओं (बारहमासी) के लिये** – किस्म के पंजीकरण की तारीख से 18 वर्ष।
- **अन्य फसलों (वार्षिक) के लिये** – किस्म के पंजीकरण की तारीख से 15 वर्ष।
- **मौजूदा किस्मों के लिये** – सीड एक्ट 1966 की धारा 5 के तहत केंद्र सरकार द्वारा उस किस्म की अधिसूचना की तारीख से 15 वर्ष।

अधिनियम द्वारा प्रस्तुत छूट

- **किसानों को छूट** : किसान इस अधिनियम के तहत संरक्षित एक किस्म के बीज सहित अपने खेत की उपज का उत्पादन, बचत, उपयोग, बोआई, फिर से शुरू, विनिमय, साझा करने या बेचने का हकदार होगा।
- **शोधकर्ता को छूट** : (i) प्रयोग करने के लिए पंजीकृत किस्म का उपयोग। (ii) अन्य किस्मों को बनाने के उद्देश्य से विभिन्न प्रकार के प्रारंभिक स्रोत के रूप में किस्म का उपयोग।

उल्लंघन

निम्नलिखित कार्य पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण अधिनियम के तहत उल्लंघन का मामला हो सकता है।

(क) जो इस अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत किसी किस्म का प्रजनक या उक्त किस्म का रजिस्ट्रीकृत अभिकर्ता या रजिस्ट्रीकृत अनुज्ञप्तिधारी नहीं है और उक्त किस्म का, उसके प्रजनक की अनुज्ञा के बिना अथवा, यथास्थिति, उक्त रजिस्ट्रीकृत अनुज्ञप्तिधारी या रजिस्ट्रीकृत अभिकर्ता की अनुज्ञा के बिना रजिस्ट्रीकृत या अनुज्ञप्ति या रजिस्ट्रीकृत अभिकरण के विस्तार के भीतर विक्रय करता है, निर्यात करता है, आयात करता है या उत्पादन करता है।

(ख) जो किसी अन्य किस्म का उस किस्म को इस अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत किस्म के सदृश अभिधान या उस अभिधान के इतना समरूप अभिधान, जिससे धोखा हो जाये, देते हुए ऐसी रीति से जिससे कि साधारण जनता के मन में इस प्रकार रजिस्ट्रीकृत उक्त किस्म को पहचानने में भ्रम हो जाये, उपयोग, विक्रय, निर्यात, आयात या उत्पादन करता है।

जिद्दू कृष्णमूर्ति

जिद्दू कृष्णमूर्ति का जन्म एक तेलुगू ब्राह्मण परिवार में 12 मई 1895 को हुआ था। कृष्णमूर्ती एक दार्शनिक, आध्यात्मिक रहस्यदर्शी थे जिन्होंने अनेक विषयों पर प्रवचन दिये। वे मानसिक क्रान्ति, मस्तिष्क की प्रकृति, ध्यान, मानवी संबंध, समाज में सकारात्मक परिवर्तन कैसे लायें आदि विषयों के विशेषज्ञ थे। वे सदा इस बात पर जोर देते थे कि प्रत्येक मानव को मानसिक क्रान्ति की जरूरत है और उनका मत था कि इस तरह की क्रान्ति किन्हीं वाह्य कारक से सम्भव नहीं है चाहे वह धार्मिक, राजनैतिक या सामाजिक कुछ भी हो।

आम के बागों में पिप्पली की खेती

सुशील कुमार शुक्ल[1], ए.के. द्विवेदी[2] एवं घनश्याम पाण्डेय[3]
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

पिप्पली का वैज्ञानिक नाम पाइपर लोंगम है। यह पौधा पाइपरेसी कुल के अंतर्गत आता है। इसे अंग्रेजी में लॉन्ग पेपर या इंडियन लॉन्ग पेपर, हिंदी में छोटी पीपल, पीपर या पिपलामूल, मराठी में पानपिप्पली, लेडी पिपली, कन्नड़ में हिप्पली, तमिल में टिप्पली, संस्कृत में चंचला, चपला, मगधी आदि नामों से जाना जाता है। यह एक बहुवर्षी और लतावर्गीय पौधा है जिसकी खेती इसके फलों के लिये की जाती है। इसके फलों का औषधि और मसाले के रूप में बड़ा महत्व है। इसकी पत्तियाँ और लताएँ पान के पौधे और पत्तों की तरह के आकार में थोड़ा छोटी हृदयाकृति की तरह होती हैं। इसके पके हुए फलों का रंग काला हरा होता है जो सूखने पर पूरा काला हो जाता है। इसका फल 1.5 से 3.0 सेंटीमीटर लंबा और 0.5 से 0.7 सेंटीमीटर मोटा गोला होता है।

उत्पत्ति, वितरण एवं संभावित उत्पादन क्षेत्र

पिप्पली की उत्पत्ति इंडो मलाया क्षेत्र में जानी जाती है। यह भारत, नेपाल, इंडोनेशिया, श्रीलंका, तिमोर एवं फिलीपींस के वर्षाधारित उष्ण वनों में प्राकृतिक रूप से उगता देखा गया है। भारत में इसकी खेती खासी हिल्स, पश्चिम बंगाल के निचले पहाड़ी क्षेत्रों, पूर्वी उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, केरल, कर्णाटक, ओडिशा, असम, आंध्र प्रदेश एवं तमिलनाडु में सीमित स्तर पर की जाती है। महाराष्ट्र के अकोला और अमरावती जिलों में इसकी खेती बड़े पैमाने पर की जा रही है। मध्य प्रदेश में इसकी खेती के उत्साहजनक परिणाम आये हैं। उत्तर भारत के आम के बागों में एक अन्तः फसल के रूप में इसकी खेती कर अतिरिक्त आमदनी की असीम संभावनाएँ हैं।

पिप्पली का औषधीय महत्व

पिप्पली के फल में पिपरीन (4.5 प्रतिशत) और पिपलार्टाइन अल्कलॉइड पाये जाते हैं। इसकी जड़ में पाइपर लोंगुमिनाइन (0.2–०.25 प्रतिशत) एवं पाइपर लोंग्यूमाइन (0.02 प्रतिशत) नामक अल्कलॉइड पाये जाते हैं। पिप्पली का उपयोग औषधि के अतिरिक्त मसालों में भी किया जाता है। पिप्पली के तने, मूल और फलों का उपयोग बहुत पुराने समय से आयुर्वेदिक एवं यूनानी विधा में किया जाता है। इसका प्रयोग मुख्य रूप से सर्दी, खाँसी, दमा, ब्रोंकाइटिस, वाट, मेडरोग, कुष्टरोग, अपचन, पीलिया तथा जुकाम की दवा बनाने में किया जाता है। पिप्पली मूलतः अग्नि को प्रदीप्त करने वाली (पाचन शक्ति बढ़ने वाली) शूल एवं आम वातनाशक, कफनाशक होती है। यह रोचक होने के साथ–साथ श्वास रोग, उदर रोग, ज्वर, बवासीर आदि रोगों के इलाज में काम आता है। कच्ची अवस्था में लेने पर यह कफहारी, स्निग्ध, शीतल, भरी तथा पित्तनाशक होती है। परंतु सूखी अवस्था में लेने पर यह पित्त को कुपित करती है। शहद के साथ लेने पर यह कफ, श्वास और ज्वर का नाश करती है। गुड़ के साथ लेने पर यह पुराने ज्वर और अग्नि मांड्या में लाभ करती है तथा खाँसी, अजीर्ण, अरुचि, श्वास, हृदयरोग, पांडुरोग, कृमि को दूर करने वाली है।

भूमि एवं जलवायु

इसकी खेती के लिये लाल मिट्टी वाली बलुई दोमट से लेकर मध्यम भारी और जीवांशयुक्त अच्छे जल निकास वाली दोमट मिट्टी सर्वथा उपयुक्त होती है। चेरापूँजी क्षेत्र के निचले भाग की लाइमस्टोन मृदाओं में भी इसकी खेती वृहत स्तर पर की जा रही है। जीवांशयुक्त लेटराइट मिट्टी जिसकी जलधारण क्षमता अच्छी हो भी इसकी खेती के लिये उपयुक्त पायी गयी है।

पिप्पली को गर्म एवं गर्मतर या नम जलवायु की आवश्यकता होती है। इसकी खेती समुद्र से 100 से लेकर 1000 मीटर की ऊँचाई तक की जा सकती है। उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में जहाँ अच्छी वर्षा होती है और वातावरण में पर्याप्त आर्द्रता रहती है वहाँ इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। इसके पेड़ों के नीचे छाया में जहाँ 20–25 प्रतिशत तक छाया होती है वहाँ भी सफलतापूर्वक उगते देखा गया है। इसीलिए यह सुबबूल, यूकेलिप्टस, नारियल और सुपारी जैसे अन्य वृक्षों के साथ

[1,2,3] प्रधान वैज्ञानिक

एक अन्तःफसल के रूप में आसानी से उगती है। आम के बागों में भी वृक्ष के क्षेत्र को नियंत्रित कर इसके खेती की प्रबल सम्भावनाएँ हैं। जिन दशाओं में पान की खेती की जाती है, वही दशाएँ इसकी खेती के लिये उपयुक्त पायी गयी हैं।

किस्में

पिप्पली की मुख्यतया दो प्रकार की प्रजातियाँ प्रचलित हैं बड़ी पिप्पली और छोटी पिप्पली। आयुर्वेद शास्त्र में चार प्रकार की पिप्पली यथा पिप्पली, गज पिप्पली, सिंहली और वन पिप्पली का उल्लेख मिलता है। केरल कृषि विश्वविद्यालय द्वारा विश्वम नामक किस्म निकाली गयी है। कई स्थानीय प्रजातियाँ जैसे गोल थिप्पली, पीपल नॉनसोरि, असाली, सुवाली, चीमाथिप्पली आदि भी पायी गयी है।

पौध प्रवर्धन

पिप्पली को बीज, भूस्तारी, जड़ या तने की कलम या परिपक्व शाखा को मानसून ऋतु जमीन या मिट्टी में दबाकर ढाबा विधि से भी तैयार किया जा सकता है। भूस्तारी अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में अच्छे चलते हैं। तीन से पाँच पर्व संधियों वाली दो से तीन पत्तीयुक्त, 8 से 10 सेंटीमीटर लंबी एक वर्ष पुरानी तने की कलमें फरवरी मार्च में तैयार करनी चाहिए। कलमों को खाद, बालू, मिट्टी, कोकोपीट आदि के मिश्रण से भरी 8 × 16 सेंटीमीटर आकार की पॉलिथीन की थैलियों में लगाना चाहिए। थैलियों में लगाने से पूर्व कलमों के निचले कटे स्थान पर सेरेडेक्स या रूटेक्स पाउडर अवश्य लगाना चाहिए। नर्सरी छायादार स्थान पर लगानी चाहिए। पौधशाला की सिंचाई प्रतिदिन हल्की करनी चाहिए। उत्तर भारत में इसकी कलमें लगाने का समय प्रायः महाशिवरात्रि से प्रारंभ हो जाता है।

खेत की तैयारी एवं रोपण

जिस खेत में पिप्पली लगाना हो उसमें रोपण के पूर्व दो से तीन बार हैरो या कल्टीवेटर से जुताई कर खेत को अच्छी तरह भुरभुरा बना लेना चाहिए। खेत के समतल होने के साथ उसमें जल के निकास की व्यवस्था सुनिश्चित कर लेनी चाहिए। धूप एवं पाले से बचाने के लिये खेत के चारों तरफ घास–फूस की टट्टी बनानी चाहिए।

खुले क्षेत्र में पौधों के रोपण के लिये खेत की तैयारी के बाद खेत में सुविधानुसार 1.5 × 3.0 मीटर या लंबी क्यारियाँ बना लेनी चाहिए। जून के महीने में 60 × 60 सेंटीमीटर की दूरी पर 30 × 30 × 30 सेंटीमीटर आकार के गड्ढे खोद लेने चाहिए। करीब 15 दिनों तक धूप में छोड़ने के बाद इन गड्ढे को मिट्टी और सड़ी गोबर की खाद या कम्पोस्ट बराबर–बराबर मिलाकर भर देना चाहिए। अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में क्यारियों के बीच जल निकास के लिये नाली बना लेनी चाहिए। मानसून आने पर इन्हीं गड्ढों में दो पौधा प्रति गड्ढा के हिसाब से लगाना चाहिए। एक महीने बाद अगर कोई पौधा मर जाये तो उसे बदल देना चाहिए।

आम के बागों में जब इसे एक अंतः फसल के रूप में लगाते हैं तो आम के वृक्ष के चारों तरफ 1.5–2.5 मीटर की दूरी तक थाले के लिये छोड़ देते हैं। इस प्रकार यदि हम जोड़ें तो लगभग 75 प्रतिशत जमीन हमें पिप्पली की खेती के लिये उपलब्ध हो जाती है। पौधों के रोपण के लिये तैयार खेत में सुविधानुसार क्यारी और जल निकास की नाली बना लेते हैं। पंक्ति–से–पंक्ति की दूरी 60 सेंटीमीटर और पौधे–से–पौधे की दूरी भी 60 सेंटीमीटर रखते हुए लगभग 1 फीट चौड़ाई और इतनी ही गहराई के खेत में गड्ढे बनाना चाहिए। इन गड्ढों को अप्रैल–मई में खोद कर करीब 15 दिन के लिये खुला छोड़ देते हैं और पंद्रह दिन बाद मिट्टी और सड़ी गोबर की खाद या कम्पोस्ट बराबर मात्रा में मिलाकर गड्ढों को भर देते हैं। बरसात का मौसम आने पर जून–जुलाई में इन्हीं गड्ढों में दो पौधा प्रति गड्ढा के हिसाब से रोपण करते हैं। एक हेक्टेयर क्षेत्र में रोपण के लिए 35,000 से 50,000 पौधों की आवश्यकता होती है। आम के बगीचे के लिये 30 से 35 हजार और खुले खेत में लगाने पर 50–55 हजार पौधों की आवश्यकता होती है। कलमों की रोपाई के बाद हल्की सिंचाई करनी चाहिए। पिप्पली की शाखाओं को सहारा देने के लिये सूखी झाड़ियों का प्रयोग किया जाता है। कई बार पिप्पली की लताओं को चढ़ाने के लिये अरंड या अन्य पौधों को बगल में ही बो दिया जाता है जिससे लताएँ उन पर आसानी से चढ़ सकें।

खाद एवं उर्वरक

खेत की तैयारी के समय 20 से 25 टन सड़ी गोबर की खाद खेत में मिला देनी चाहिए। इसके साथ ही 50 किलोग्राम नाइट्रोजन, 40 किलोग्राम फॉस्फोरस, 40 किलोग्राम पोटैश प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है।

इसमें से आधा नाइट्रोजन, संपूर्ण फॉस्फोरस एवं पोटैश की मात्रा खेत की तैयारी के समय दे देनी चाहिए। बाकी बचे आधे नाइट्रोजन की मात्रा पौध रोपण के एक महीने बाद देनी चाहिए। प्रतिवर्ष वर्षा ऋतु के पूर्व 20 टन प्रति हेक्टेयर की दर से सड़ी गोबर की खाद खेत में डालनी चाहिए।

सिंचाई

बरसात के मौसम में वर्षा के अनुसार आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए। सामान्य रूप से जाड़े में 15–20 दिन और गर्मी में 5–7 दिन के अंतर पर सिंचाई की आवश्यकता होती है। जब इसे एक अंतःफसल के रूप में उगाते हैं तो मुख्य फसल के हिसाब से सिंचाई में समायोजन कर लेते हैं। पानी की बचत के लिये स्प्रिंकलर या बूँद–बूँद सिंचाई पद्धति अपनानी चाहिए।

निराई, गुड़ाई और मल्चिंग

पौध रोपण के बाद जब भी खेत में खरपतवार दिखे उन्हें तत्काल निकाल देना चाहिए। जब खेत में गोबर की खाद देते हैं तो खाद को मिलाना और पौधों पर मीठी चढ़ानी चाहिए। गर्मी के मौसम में विशेषतया पानी की खपत कम करने के लिये खेत में मल्चिंग करनी चाहिए। इसके लिये उपलब्ध घास–फूस, खरपतवार, पेड़ों की पत्तियाँ आदि का प्रयोग करना चाहिए।

फसल सुरक्षा

पिप्पली में किसी खास कीट से तो नुकसान नहीं होता है लेकिन बरसात में पत्ती एवं लताओं के सड़ने की समस्या आती है। इसके लिये 1 प्रतिशत बोर्डेकस मिश्रण का दो से तीन छिड़काव करना चाहिए। कई बार ब्लाइट की समस्या आती है। इसके लिये 2 से 2.5 ग्राम प्रति लीटर की दर से ब्लाइटाक्स का छिड़काव करना चाहिए।

फसल की कटाई

पिप्पली के पौध रोपण के चार से पाँच महीने बाद लताओं में फूल आते हैं। उसके बाद पाँच से छः महीनों में फल परिपक्व होते हैं। फल वर्ष में एक ही बार आते हैं। प्रतिवर्ष 4–5 सप्ताह तक फलों की तुड़ाई तकरीबन तीन से पाँच साल तक चलती रहती है। फलों को तभी तोड़ा जाता हैं जब वे काले हरे रंग के और सर्वाधिक तीखे हों। तोड़े गए फलों को तब तक अच्छी तरह सुखाया जाता है जब तक की वे अच्छी तरह नहीं सूख जायें। हरे और सूखे फलों का अनुपात लगभग 10:1.5 होता है। इस प्रकार सूखे फलों को हवा और नमी से दूर सीलबंद डिब्बों में रखा जाता है।

फल तोड़ने के बाद फरवरी के अंत या मार्च के प्रारंभ में पौधों की कटाई की जाती है। इससे कुछ समय बाद नयी पत्तियाँ पुनः आनी शुरू हो जाती हैं। कटी हुई टहनियों से कलम तैयार कर फिर से नये पौधे तैयार कर लिये जाते हैं जिसे आवश्यकतानुसार प्रयोग कर सकते हैं या बेचकर आमदनी प्राप्त कर सकते हैं। पौध रोपण के 18 महीने बाद कटी हुई मोटी टहनियों का प्रयोग भी औषधि के रूप में किया जाता है।

पिप्पली की उपज

पिप्पली की खेती के प्रथम वर्ष में ही सूखी पिप्पली की लगभग 4 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त होती है। तीसरे वर्ष में यह उपज 10 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक हो जाती है। तीन वर्ष के बाद इसकी उपज धीरे–धीरे कम होने लगती है। पिप्पली की जड़ों का प्रयोग भी औषधि के रूप में होता है। सूखी पिप्पली का बाजार मूल्य 150 से 200 रूपये प्रति किलोग्राम है। इस प्रकार इसकी खेती से 6000 से 15000 तक की आमदनी प्राप्त की जा सकती है। जड़ों को खोद कर धो–साफ कर कहीं भी छाया में सुखाया जा सकता है और फिर 2.5 से 5 सेंटीमीटर लंबे टुकड़े तैयार कर लिये जाते हैं। सूखी पिप्पली मूल की उपज भी लगभग 5 क्विंटल प्रति हेक्टेयर हो जाती है। आंध्र प्रदेश और विषाखापटनम में पिप्पली की खेती मुख्य रूप से जड़ों के लिये ही की जाती है।

सगंधीय पौधों की व्यावसायिक खेती की संभावनाएँ

अजय कुमार त्रिवेदी[1], घनश्याम पाण्डेय[2] एवं सुशील कुमार शुक्ल[3]
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

भारतवर्ष में सगंधीय पौधों की खेती का इतिहास काफी पुराना है। पुरातन काल से ही चिकित्सा विज्ञान में सगंधीय पौधों का उपयोग होता रहा है। लेकिन इनकी खेती की वैज्ञानिक तकनीकों के विकास एवं इन पौधों के व्यवसायीकरण की तरफ किसानों एवं वैज्ञानिकों ने संभवतः उतने प्रयास नहीं किये जितने कि खाद्यान्न तथा फल–फूल वाली फसलों की तरफ किये गये। किन्तु पिछले कुछ दशकों में इनके व्यापक एवं व्यावसायिक कृषिकरण की दिशा में जन सामान्य की रुचि जाग्रत हुई है। इन फसलों से होने वाले लाभों के कारण वर्तमान में कृषक परंपरागत फसलों को छोड़कर सगंधीय पौधों की खेती की ओर आकर्षित होने लगे हैं। इतना ही नहीं, उच्च शिक्षा प्राप्त युवक जो अभी तक खेती/किसानी के कार्य को केवल कम पढ़े–लिखे लोगों का व्यवसाय मानते थे सगंधीय पौधों की खेती अपनाकर परंपरागत खेती की अपेक्षा अधिक लाभ कमा रहे हैं।

भारत में पायी जाने वाली कई सौ सगंधीय पौधों की प्रजातियों में 50 से भी कम प्रजातियाँ ऐसी हैं जिनका कृषिकरण किया गया है। सामान्यतः दूर–दराज के अछूते क्षेत्रों में जहाँ पारिस्थितिकीय तंत्र प्राकृतिक रूप से संरक्षित है, सगंधीय पौधों की उपलब्धता अधिक होती है क्योंकि ऐसी पारिस्थितिकी की सभी पादप प्रजातियों का व्यवसायिक उपयोग एवं नियमित दोहन नहीं हुआ है। इन क्षेत्रों में सगंधीय पौधों के पाये जाने की अधिक संभावना के कुछ प्रमुख कारक हैं, जैसे कि छितरे हुए रूप में दूर–दूर से विभिन्न पादप भागों का संग्रह करना कठिन होता है। ऐसे क्षेत्रों से एकत्रित पौधों की ढुलाई महँगी होती है तथा यातायात कि साधनों की कमी तथा संग्रहण कि संबंध में पर्याप्त जानकारी का आभाव आदि। पहाड़ी क्षेत्रों तथा हिमालयी राज्यों जहाँ अभी तक मानव द्वारा पारिस्थिकी तंत्र के साथ कम–से–कम छेड़–छाड़ किया गया है, सगंधीय पौधों की उपलब्धता अधिक होती है। आज किसान विभिन्न क्षेत्रों में होने वाली प्रचलित फसलों के अलावा नयी–नयी फसलों तथा नये बाजारों की व्यवस्था की तलाश में हैं। नयी फसलों के उत्पादक कम होने के कारण इन फसलों में प्रतिस्पर्धा भी कम होती है तथा ऐसी फसलों का बाजार मूल्य अधिक मिलता है। सगंधीय पौधों में मुख्यतः सुगन्धित तेल पाया जाता है जो एक वाष्पशील तेल संघटक है। इसे आसवन या यांत्रिक विधि द्वारा पादप प्रजातियों से प्राप्त किया जाता है। सुगन्धित तेल का निष्कर्षण कई प्रकार से पौधों के विभिन्न भागों से प्राप्त किया जाता है।

पुष्प, अर्न्तदल/बाह्यदल/दलनपुंज : यलांग– यलांग, सिलांग।

कलिकायें : लौंग।

पुष्पक्रम/पुष्पमुंडक/पुष्पशीर्ष : लैवेन्डर, क्लेरीसेज, गार्डन–सेज, केमोमिल, गुलाब, रजनीगंधा।

फल एवं फल के बाहरी आवरण: नींबू निरोली, मेनडेरिन, स्टार एनीसी आफ चायना, इलायची।

बीज: धनिया, सौंफ, अजवाइन, जीरा, कालीमिर्च, मुश्कदाना।

पत्तियाँ : यूकेलिप्टस, जिरेनियम, रोजमेरी, मारजोरम, तेजपात, काजूपात, लैमनबाम, पचौलीय

शाखाएं : पेटिटेग्रीन।

काष्ठ या छाल : लैमनग्रास, पामारोजा, जावाघास।

जड़/प्रकन्द/कन्द : अदरख, खस–खस, सम्यौ, वन हल्दू, जटामांसी, बच, नागरमोथा।

रेजिन एवं गोंद : फ्रैन्कइन्सेस, मिर्र व ह्युटाको।

सदियों से हल्दी, सम्यो, वन–हल्दू इत्यादि सुगन्धित वनस्पतियों का उबटन लगाया जाता रहा है, जो कि वास्तव में सौन्दर्यवर्द्धन व चर्मदोष निवारण की एक प्रक्रिया है। देश के विभिन्न भागों में सैंकडों स्थानीय वनस्पतियाँ पायी जाती हैं, जिनसे सुगन्धित तेल की प्राप्ति होती है। यह वनस्पतियाँ स्थान विशेष की भौगोलिक स्थिति एवं अनुकूल वातावरण के कारण ही होतीं हैं। अतः व्यवसायीकरण के

[1,2,3]प्रधान वैज्ञानिक

लिये आवश्यक है कि किसी क्षेत्र विशेष में पायी जाने वाली वनस्पति का गहनता से अध्ययन किया जाये तथा इसके लिए उपयुक्त क्षेत्रों में इसका प्रसार किया जाये। सगंधीय पौधों से प्राप्त सुगन्धित तेल किसानों की अर्थव्यवस्था के लिये मजबूत आधार दे सकते हैं।

सगंधीय पादप अपने विशिष्ट रासायनिक संघटकों के कारण उच्च कोटि की सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री, इत्र, साबुन, शैम्पू इत्यादि बनाने के लिये सतत् उपयोगी होते हैं। अतः इनका कृषिकरण एवं व्यवसायीकरण रोजगार उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता हैं। सगंधीय पौधों के रासायनिक घटकों के कुछ उदहारण इस प्रकार हैं जैसे कि मारजोरम में टरपिनीन, जिरेनियम में जिरेनियौल व सिट्रोनिलोल, रोजमेरी, चाइनापाती में कैम्फर, लैवेन्डर में लिनालूल एवं लिनेलिल एसिटेट, पुदीना में लिनालूल, मैन्थोल एवं कारवोन, कपूर कचरी में साइनिओल, सम्यो में मैलिलोल, वन तुलसी में थाइमोल व कारवाक्रोल, गुलाब में रोडीनोल, तुलसी में मिथाइल चौविकोल आदि।

सगंधीय पौधों से सुगन्धित तेल निकालने की विधियाँ

अधिकांशः सुगन्धित तेल जल में अघुलनशील होते हैं इनका निष्कर्षण सबसे आसान एवं आर्थिक दृष्टि से लाभदायक आसवान विधि द्वारा ही किया जाता है। आसवन विधि से तेल का निष्कर्षण सामान्यतः तीन चरणों में पूर्ण होता है। प्रथम आसवन संयंत्र टैंक या डिस्टीलेटर जिससे पानी की गरम वाष्प (भाप) तेल के साथ मिश्रित होती है। द्वितीय, संघनित्र अथवा कन्डेस्नर जिसमें वाष्प ठंढी होकर पुनः द्रवीय तेल मिश्रण में बदल जाती है। तृतीय, संग्रहक या रिसीवर या पृथक्कारी (सेपरेटर) जिसमें पानी के ऊपर तैरते हुए तेलों को पृथक्कारी कीप द्वारा एकत्रित किया जाता है। प्रचलित रूप से तीन प्रकार की आसवन विधियाँ प्रयोग की जाती हैं।

(क) जल आसवन विधि

यह एक परम्परागत विधि है। इस विधि में सुगन्धित हरबेज (पत्तियां, कोमल टहनियाँ तथा फूल) जैसे गुलाब, खस, केवड़ा आदि को ताँबे के बर्तन (जैसे कि ढेंकची/डेकची) में पानी के साथ उबालते हैं तथा वाष्प द्रवित (कन्डेंसित) होकर एक संघनक की सहायता से घनीभूत होकर हल्की होने के कारण आसवन उपकरण की नली में पानी के ऊपर परत के रूप में एकत्रित होती रहती है। जहाँ से इसे आसवन पूरा होने के बाद बाहर निकाल लिया जाता है। लगातार गर्म करने से तेल के कुछ घटक जल अपघटित (हाइड्रोलाइज) हो जाते हैं।

(ख) जल तथा वाष्प आसवन विधि

सरल व सस्ती होने के कारण यह विधि काफी प्रचलन में है। इसमें डिस्टीलेटर या टैंक की तली से कुछ ऊपर जाली लगायी जाती है। जिससे हरबेज पौधें सीधे उबलते पानी के सम्पर्क में न आकर उससे निकलती हुई भाप के सम्पर्क में आते हैं। तेल तथा वाष्प का मिश्रण संघनित्र या कन्डेनसर में ठंडा होकर रिसीवर या सेपरेटर के ऊपर तैरता रहता है तथा बाद में इसे पृथ्क्कारी कीप की सहायता से अलग कर लिया जाता है। बीजों तथा जड़ों जैसे पुदीना, लैमन घास, पामारोजा, जिरेनियम, यूकेलिप्टस आदि फसलों के उड़नशील तेल निकालने के लिये यह विधि उत्तम मानी जाती है। इस विधि द्वारा आसवन के पश्चात बची हुई पादप सामग्री सुखाकर जलाने के काम आ जाती है, जिससे ईधन की बचत होने के साथ ही उत्पादन खर्च कम हो जाता है।

(ग) वाष्प आसवन (स्टीम डिस्टीलेशन) विधि

यह विधि लगभग सभी सुगन्धित फसलों के जड़, लकड़ी, सूखी पत्तियों तथा हरी फसल के लिये उत्तम मानी जाती है। इसमें मुख्य चार भाग होते हैं जैसे कि वाष्पित्र या बॉयलर इसमें दबाव के साथ वाष्प उत्पन्न होकर टैंक की तली में प्रवाहित होती हैं जिसमें वाष्प नलियँ (स्टीम क्वाइल) लगी होती हैं, इस विधि में उपर्युक्त दो विधियों की तरह पादप सामग्री को पानी में या पानी के ऊपर नहीं रखा जाता बल्कि जाली के ऊपर पादप सामग्री को दबा कर भरा जाता है जिससे अच्छी मात्रा में तेल प्राप्त हो सके। इस विधि की बाकी कार्य पद्धति अन्य दोनों विधियों की तरह ही होती है।

सगन्धीय पौधों की व्यवसायिक खेती का प्रसार कृषि विकास एवं कृषि क्षेत्र में रोजगार सृजन के लिये एक शुभ संकेत है। ग्रामीण एवं दूर–दराज के क्षेत्रों में रह रहे लोगों के लिये भविष्य में यह फसलें उनको रोजगार उपलब्ध कराकर पर्याप्त आर्थिक संबल प्रदान करने में प्रमुख भूमिका निभा सकती है।

सब्जियाँ स्वास्थ्य के लिए वरदान

रेखा चौरसिया[1], भारती किल्लाड़ी[2], आभा सिंह[3] एवं डी.के. शुक्ल[2]
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

सब्जियाँ स्वास्थ्य के लिये लाभदायक होती हैं। पर क्या मनुष्य सभी सब्जियों का पर्याप्त मात्रा में सेवन करते हैं? आज की भाग–दौड़ भरी जिन्दगी में प्रत्येक दूसरा व्यक्ति मिल जायेगा जिसके शरीर में पोषक तत्व की कमी पायी जाती है। अनुसंधानकर्ताओं के अनुसार शरीर पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्वों (ऐंटीऑक्सीडेंट) तैयार नहीं कर पाता है। इसके लिये शरीर को विटामिन, लवण, आयरन, प्रोटीन, रेशायुक्त आहार चाहिए जो बड़े पैमाने पर सब्जियों से ही प्राप्त होते हैं। बीज वाली सब्जी, जड़ वाली सब्जी, पत्तेदार सब्जी और फूल वाली सब्जियों के अलग–अलग फायदे हैं। इसलिये आहार में नियमित रूप से साग–सब्जियों को शामिल कर पोषक तत्वों की कमी को पूरा किया जा सकता है। शोध के मुताबिक मांसाहारी व्यक्ति की तुलना में शाकाहारी व्यक्ति का अधिक तरोताजा और जवान दिखने का यही मुख्य कारण है।

क्यों जरूरी हैं सब्जियाँ?

अधिकांश लोग इस सत्य से अनभिज्ञ हैं कि सब्जियाँ हमारे स्वास्थ्य के लिये आवश्यक होती हैं। ताजी एवं हरी सब्जियों में मानव स्वास्थ्य का राज छिपा है। हरी सब्जियों में बहुत से ऐसे पोषक तत्व विद्यमान होते हैं जिनकी हमारे शरीर को अत्यन्त आवश्यकता होती है। हरी सब्जियाँ सेहत के साथ–साथ मनुष्य की सुंदरता के लिये भी लाभप्रद होती हैं। हरी सब्जियों बीन्स, गाजर, मूली, टमाटर, ब्रोकली, सहिजन, करेला आदि में कैल्सियम, बीटा कैरोटिन, विटामिन, आयरन, रेशा, जिंक, कॉपर, प्रोटीन, पोटैशियम आदि पाये जाते हैं जो त्वचा, आँखों, बाल, खून की कमी, कैन्सर, हृदय रोग आदि में होने वाली अनेक बीमारियों से रक्षा करते हैं।

किस प्रकार प्रयोग में लायी जायें सब्जियाँ?

सामान्यतः यह देखा गया है कि बच्चे सब्जियाँ खाना पसंद नहीं करते हैं। उनका झुकाव जंक फूड की तरफ अधिक होता है जिससे उनके शरीर में पोषक तत्वों की मात्रा कम हो जाती है। परिणामस्वरूप उन्हें बहुत सी परेशानियों का सामना करना पड़ता है। सब्जियों को विभिन्न प्रकार से भोजन में शामिल करने से पाचन तंत्र मजबूत होता है। साथ ही यह अनेक महत्वपूर्ण बीमारियों से लड़ने की क्षमता भी प्रदान करता है। सब्जियों को निम्नलिखित प्रकार से अपने भोजन में शामिल कर सकते हैं जिससे स्वाद तथा पोषण दोनों की प्राप्ति होती है।

- सब्जी के रूप में पका कर खायें।
- हरी एवं रंगीन सब्जियों को सलाद के रूप में प्रयोग करें।
- सूप बनाकर पीयें।
- सब्जियों की स्मूदी बना कर जिसे ग्रीन स्मूदी के नाम से भी जाना जाता है।
- खिचड़ी या चावल में सब्जियों का प्रयोग करें।
- हरी पत्तेदार सब्जियों जैसे बथुआ, मेथी, आलू, मूली, गोभी आदि का पराठा बना कर।
- पालक, बथुआ, सोया, लौकी आदि को दाल में डालकर।
- सब्जियों की टॉपिंग कर।
- आमलेट में सब्जियाँ मिलाकर।
- सब्जियों को उबाल कर या भून कर भी प्रयोग में लाया जा सकता है।

सब्जियों से लाभ

तंदुरूस्त शरीर या स्वयं को चुस्त–दुरूस्त रखने के लिये खान–पान का संतुलित होना अत्यन्त आवश्यक है जिसमें सब्जियाँ एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। सर्दियों के मौसम में सब्जियाँ बड़ी आसानी से हरी, ताजी एवं सस्ती मिल जाती हैं। इसलिये मौसम के अनुसार स्थानीय

[1,4]स.मु.त. अधिकारी, [2]वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं [3]प्रधान वैज्ञानिक

सब्जियों का सेवन स्वास्थ्य के लिये लाभदायक होता है क्योंकि उनके ताजा होने में भरपूर मात्रा में पोषक तत्व पाये जाते हैं जो अच्छी वृद्धि के साथ–साथ स्वास्थ्य के लिये अति आवश्यक होते हैं। इनके सेवन से होने वाले निम्नलिखित फायदे हैं।

1. हरी सब्जियों में आयरन भरपूर मात्रा में होता है जो हीमोग्लोबिन की कमी को पूरा कर खून को बढ़ाता तथा एनिमिया को दूर करता है।
2. सब्जियों में मौजूद ऐंटीऑक्सीडेंट जैसे बीटा–कैरोटीन, ल्यूटिन, जैक्सैन्थिन केरोटिनायड एवं लाइकोपीन शरीर में कैंसर से बचाव करता है।
3. प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है जिससे शरीर अनेक प्रकार की बीमारियों से दूर रहता है।
4. सब्जियों में मौजूद विटामिन 'ए' और रेशा आँखों की रोशनी को बढ़ाने में सहायक होता है।
5. सब्जियों में लौह तत्व (आयरन) बहुत होता है जो हड्डियों और दाँतों को स्वस्थ रखने में सहायक होते हैं।
6. सब्जियाँ शरीर में पाचन को बढ़ा देती हैं। फलस्वरूप शरीर की कैलोरी घटती है जो वजन कम करने में सहायक है।
7. प्रत्येक दिन हरी सब्जी के सेवन से गुर्दे में यूरिक एसिड एकत्रित नहीं होता और पथरी का भय नहीं रहता है।
8. सब्जियों में विटामिन 'ए', आयरन, विटामिन 'सी' एवं कैल्सियम भरपूर मात्रा में पाया जाता है जो बालों के लिये लाभदायक होते हैं।
9. अधिकतर लोगों के खाने में रेशेदार खाद्य पदार्थों अर्थात् फाइबर की कमी होने से कब्ज आदि की समस्या पैदा हो जाती है। फाइबर खाने का बढ़िया तरीका है कि आप प्रत्येक दिन हरी सब्जियों का सेवन करें।

सब्जियों में उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा

पोषक तत्व	लौकी	मटर	पालक	पुदीना	ब्रोकली	सरसों का साग	सहिजन फली	टमाटर	गाजर
कैलोरी	14.0	81.0	23.0	45.0	34.0	27.0	37.0	18.0	41.0
प्रोटीन (ग्राम)	0.62	5.4	2.86	3.8	2.8	2.9	2.1	0.9	0.93
कैल्सियम (मिलीग्राम)	26.0	25.0	99.0	200	47	10.15	30.0	48.0	33.0
आयरन (मिलीग्राम)	0.2	1.47	10.9	11.6	0.73	1.64	0.36	0.4	0.3
कैरोटीन (आई.यू)	16	765	9377	4054	623	3024	74.0	351.0	16706
थायेमिन (मिलीग्राम)	0.029	0.27	0.03	0.05	0.07	0.08	0.05	0.12	0.06
राइबोफ्लेबिन (मिलीग्राम)	0.022	0.132	0.26	0.18	0.12	0.11	0.074	–	0.06
विटामिन सी (मिलीग्राम)	10.1	40.0	28.0	13.3	89.2	70.0	441.0	27.0	5.9
कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	3.39	14.4	6.36	8.4	6.64	4.67	8.5	3.6	9.58
पोटैशियम (मिलीग्राम)	150.0	244.0	558.0	458.0	316.0	384.0	461.0	237.0	320.0
मैग्नीशियम (मिलीग्राम)	11.0	33.0	79.0	63.0	21.0	32.0	45.0	11.0	12.0

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार दिनभर के भोजन में मनुष्य को अपने भोजन का पाँचवा भाग फलों एवं सब्जियों के रूप में लेना चाहिए। सब्जियों में रेशे, खनिज विटामिन और प्रोटीन जैसे पोषक तत्व होते हैं। शरीर की कार्य प्रणाली को सुचारू रूप से चलाने के लिये वायोलेबोनायड (प्राकृतिक हार्मोन्स) और एन्जाइम (पाचक रस) जैसे पदार्थ फलों एवं सब्जियों से ही प्राप्त होते हैं। बेहतर स्वास्थ्य के लिये भोजन में सब्जियों का उचित मात्रा में इस्तेमाल आवश्यक है क्योंकि सब्जियाँ उन सब पोषक तत्वों कमी को पूरा करती है जिसके लिये हमें पूरक तत्व खाने की जरूरत पड़ती है।

पलमीरा पाम से मूल्यवर्धित खाद्य उत्पाद

आभा कुमारी[1] एवं रजनी राजन[2]

बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर (बिहार)

परिचय

पलमीरा पाम (ताड़) उष्णकटिबंधीय जलवायु में उगाया जाने वाला पाल्मी कुल का पेड़ है। इसका उत्पत्ति स्थान दक्षिणी–पूर्वी एषिया माना जाता है। भारत, श्रीलंका, मलेशिया, फिलीपींस, इंडोनेशिया और पूर्वी अफ्रीका ताड़ के प्रमुख उत्पादक देश हैं। भारत में यह मुख्य रूप से तमिलनाडु में उगाया जाता है। सन् 1978 में इसे तमिलनाडु का वृक्ष घोषित किया गया था। इसके अलावा यह भारत में केरल, आंध्र प्रदेश, ओडीशा, पश्चिम बंगाल, बिहार और पूरे पश्चिमी तट पर भी उगाया जाता है। भारत में लगभग 122 मिलियन हेक्टेयर में पाम उगाया जाता है जिसमें तमिलनाडु के बाद आंध्र प्रदेश का स्थान आता है। हालाँकि इस पाम के उगाने की अपार संभावनाएं हैं, लेकिन व्यावसायिक तौर पर पाम को लाने के लिये कोई निर्धारित प्रयास नहीं किया गया।

ताड़ के पेड़ की वृद्धि बहुत धीमी होती है। इसे फलने में 15 से 30 साल तक का समय लगता है। पलमीरा पाम की अधिकतम ऊँचाई 30 मीटर तक होती है। इसकी परिधि तना के आधार पर 1 से 5 मीटर से अधिक होती है। तना का रंग काला होता है और यह सिलेंडर जैसा दिखता है। विषालकाय पंखे के आकार के इसके पत्ते इसकी प्रमुख पहचान हैं। ताड़ के पेड़ पर लगभग 25 से 40 ताजे पत्ते होते हैं जो सख्त, भूरे हरे, पंखे के आकार एवं 1 से 3 मीटर चौड़े वाले होते हैं। ये मिडरिब के साथ मुड़े होते हैं और एक झुरमुट में शीर्ष पर निकलते हैं। पलमीरा पाम पृथगिलगी पेड़ है अर्थात इसके नर और मादा के फूल दो अलग–अलग वृक्षों पर होते हैं। इसका नर फूल मादा फूल से छोटा होता है। नर और मादा दोनों वृक्ष फूलों की कील का उत्पादन करते हैं लेकिन केवल मादा पौधे ही फल देते हैं। दोनों पेड़ों का उपयोग ताड़ी के लिये किया जाता है। फूल छोटे होते हैं और घनी गुच्छों में दिखायी देते हैं जो बाद मे बड़े एवं भूरे, गोल फलों में विकसित होते हैं।

पलमीरा को भोजन, पेय, फाइबर, चारा, औषधीय और लकड़ी सहित लगभग 800 उपयोगों के वजह से जीवन के पेड़ के रूप में संदर्भित किया जाता है। ताड़ विभिन्न खाद्य उपयोगों में से एक ताड़ की चीनी जो पुष्पवृन्त की मीठी रस से बनायी जाती है। कमसिन नारियल युवा फलों के भरूणपोष, जैसे कि गर्मियों में एक मृदुल मिठास रखता है। पेटिओल फाइबर और पत्ती ब्लेड का उपयोग ब्रश और हस्तशिल्प जैसे उत्पादों को बनाने के लिये किया जाता है। इसका वृक्ष कई कुटीर उद्योग के लिये कच्चे माल के स्रोत के रूप में कार्य करता है।

नीरा

नीरा ताड़ के रस से निकाला गया स्वादिष्ट पेय है जो तेजी से भारत के ग्रामीण और शहरी इलाकों में लोकप्रिय हो रहा है। नीरा की प्राप्ति के लिये ट्रंक के शीर्ष से 10–15 सेंटीमीटर नीचे कट कर फिर उसे टैप किया जाता है। टैपिंग के पश्चात गार्ड को कट के नीचे स्थिर किया जाता है जिससे कट से निकले सैप इस गार्ड में

[1,2]ए.आर.एफ.

इकट्ठा हो सके। इस तरह प्रत्येक दिन का सैप एकत्रित किया जाता है जिसे दूसरे शब्दों में इसे नीरा कहते हैं। ताड़ के पेड़ से निकाले ताजी सैप या रस को नीरा कहा जाता है जो पारदर्शी होने के साथ सुवास लिये मीठा भी होता है। नीरा को छानकर उनका पास्तोरिकरण कर उसमें सोडियम बेन्जोएट 0.20 की दर स्वच्छ जल में मिश्रित कर दिया जाता है। बोतल में भरने के उपरांत उन्हें उबलते हुए पानी में 20–25 मिनट तक उबाला जाता है एवं ठंडा होने पर पानी से निकालकर भंडारित कर लिया जाता है।

नीरा के स्वास्थ्य और पोषण तथ्य

- यह पेय में सुस्वादु, उच्च और औषधीय गुण वाला होता है।
- नीरा से कोलेस्ट्रोल और वसा कम होती है।
- विशेष रूप से यह पेय लोहे और विटामिन की कमी के पूरक होते हैं।
- यह पेय रक्त की स्थिति एवं पाचन तंत्र को बढ़ावा देने में मदद करता है।
- खनिज से भरपूर पेय प्रतिरक्षा प्रणाली बढ़ाती है।
- पेय विरोधी निकायों के खिलाफ लड़ते हैं।
- किडनी की पथरी पर पाम नेक्टर का विनाशकारी प्रभाव पड़ता है।

पाम नेक्टर में ऐसे गुण पाये जाते हैं जो मूत्र संबंधी समस्याओं से निजात दिलाने में सहायक होते हैं।

इसका उपयोग गुड़, सिरप, रब, पाम शुगर, पाम कैंडी और आईसक्रीम तथा विभिन्न मिठाईयों की तैयारी के लिये भी किया जा सकता है। यह गाँवों के दैनिक आहार का एक हिस्सा है जहाँ इसे उगाया जाता है। नीरा न केवल मीठा और स्वादिष्ट होता है अपितु इसमें पोषक तत्व और खनिज भी होते हैं जो भारत में आहार का एक अच्छा पूरक साबित होते हैं।

ताड़ी

खमीर और जीवाणु द्वारा नीरा के किण्वन के परिणामस्वरूप ताड़ी बनाया जाता है। यह खमीर और जीवाणु के विभिन्न उपभेदों की संख्या द्वारा एक अनियंत्रित प्राकृतिक किण्वन है। अल्कोहल सामग्री पूरी तरह से किण्वित ताड़ी में लगभग 5 प्रतिशत होती है। लेकिन प्रयोगशाला की परिस्थितियों में शुद्ध खमीर उत्पादन का उपयोग कर पलमीरा सैप का किण्वन लगभग 7.8 प्रतिशत अल्कोहल सामग्री देता है। आंशिक रूप से किण्वित ताड़ी में चीनी सुक्रोज, ग्लूकोज और फ्रुक्टोज होता हैं लेकिन ये सभी धीरे–धीरे किण्वन के दौरान एथाइल अल्कोहल में परिवर्तित हो जाता है ।

पलमीरा अरक

पलमीरा अरक पॉट स्टील डिस्टिलेशन और पेटेंट स्टील डिस्टिलेशन द्वारा निर्मित किया जाता है। पीने योग्य अल्कोहल की अनुमानित वसूली ताड़ी का 10 प्रतिशत ही है। पॉट और पेटेंट स्टील डिस्टिलेशन के तरीकों में यही अंतर है कि पूर्व एक बैच पर आधारित है जबकि उत्तराद्धि एक सतत प्रक्रिया है। पॉट स्टील डिस्टिलेशन आसवन का सबसे पुराना एवं सरल तरीका है जिसमें किण्वित तरल (वॉश) को तांबे के केतली में रखा जाता है। पेटेंट स्टील, निरंतर, स्तंभ या कॉफी स्टील के रूप में भी जाना जाता है जो 18वीं शताब्दी में एनेसिस कॉफी द्वारा विकसित किया गया था। यह लगातार किण्वित तरल को दो स्तंभों के माध्यम से पंप करता है और अल्कोहल को किण्वित तरल के अन्य सभी पदार्थों से अलग करता है। यह पॉट स्टील की तुलना में अधिक कुशल है।

पलमीरा वाइन

वाइन की प्राप्ति के लिये ट्रंक के शीर्ष से 10–15 सेंटीमीटर नीचे कट किया जाता है और फिर टैप किया जाता है। टैपिंग उपरांत गार्ड को कट के नीचे स्थिर किया जाता है जिससे कट से निकले सैप इस गार्ड मे इकट्ठा हो सके। इस तरह प्रत्येक दिन का सैप एकत्रित किया जाता है जिसे नीरा कहते हैं। गार्ड में सैप एकत्रित होते ही उसमें प्राकृतिक किण्वन शुरु हो होता है। किण्वन उपरांत सैप की छनाई एवं विशुद्धिकरण किया जाता है। इसके बाद, इसमें सोडियम मेटा बाइसल्फाइट 100 यू.जी./लीटर मिलाया जाता है जो खाद्य उत्पाद में परिरक्षक का काम करता है। फिर उसे बोतल में भरकर सीलबंदी कर दिया जाता है। इस तरह पलमीरा वाइन तैयार किया जाता है जिसका पी.एच. मान 6–7 और रंग पुआल जैसा होता

है। सैप में अतिरिक्त चीनी मिलाकर वाइन की क्षमता को बढाया जा सकता है।

ताड़ का गुड़

ताड़ के गुड़ को पाम गुड़ भी कहा जाता है। गुड़ को 110 डिग्री सेंटीग्रेड में एक जस्ती लोहे के पैन में नीरा को उबालकर बनाया जाता है। एक किलो गुड़ प्राप्त करने के लिये लगभग 8 लीटर नीरा की आवश्यकता होती है। पाम गुड़ लगभग गुड़ की तरह होता है। यह गन्ने के रस से बनता है। इसके औषधीय गुणों के कारण इसका अत्यधिक महत्व है। प्रसंस्करण के बाद प्राप्त ताड़ का गुड़ गहरा और समृद्ध रंग का होता है। मानव शरीर पर इसके शीतल प्रभाव के कारण इसका मूल्य अधिक होता है। चीनी के मुकाबले ताड़ के गुड़ की कीमत दुगुनी है।

पाम चीनी

सुक्रोज सामग्री के साथ 12 प्रतिशत डब्लू/डब्लू और लगभग 80 प्रतिशत की शुद्धता चीनी के उत्पादन के लिये उपयुक्त सामग्री बनाती है। इसमें कार्बोहाइड्रेट (98.89 प्रतिशत), वसा (0.37 प्रतिशत), प्रोटीन (0.24 प्रतिशत), खनिज (0.5 प्रतिशत), कैल्सियम (0.08 प्रतिशत), फॉस्फोरस (0.06 प्रतिशत), लोहा (30 मिलीग्राम/100 ग्राम), निकोटिनिक एसिड (4.02 मिलीग्रा/100 ग्राम) और राइबोफ्लेविन (229 मिलीग्राम/100 ग्राम) होता है।

पाम कोला

पाम कोला एक वातित शीतल पेय है जिसमें 11 प्रतिशत चीनी होती है। इसके अन्य घटक कोला सांद्रता, साइट्रिक एसिड और खाद्य रंग हैं। पाम चीनी को दूध के साथ मिलाया जाता है और 110–115 डिग्री तापमान पर उबालते समय इसकी अशुद्धियों को हटा दिया जाता है। 53 डिग्री पर उबलना बंद कर मिश्रण को एक फिल्टर प्रेस के माध्यम से फिल्टर किया गया है। कोला सुगंध 250 मिलीलीटर/1000 बोतल की दर से ठंडा करने के बाद मिलाया जाता है। लगभग 1 किलो शुद्ध पाम शुगर 300 बोतलों का उत्पादन करने के लिये पर्याप्त है।

पाम शहद

पाम शहद प्राप्त करने के लिये नीरा को 2 घंटे तक गर्म किया जाता है। इसके बाद सिरप को मिट्टी के बर्तनों में स्थानांतरित किया जाता है। फिर बर्तन को कपड़े से कसकर बंद कर दिया जाता है और 130–180 दिनों के लिए शॉक प्रूफ, ठंडी और सूखी जगह पर रखा जाता है। पका हुआ, सूखा और इमली के फल (बीज रहित) सिरप में मिला देने से इसके स्वाद को और बढ़ दिया जाता है। 10 लीटर सिरप बनाने के लिये लगभग 1 किलोग्राम फल की आवश्यकता होती है।

पाम कैंडी

कैंडी बनाने के लिये नीरा को संग्रहित कर उसे छान लिया जाता है एवं तलछट हटाने के बाद इसे 110 डिग्री सेल्सियस तक 2 घंटे के लिये गर्म किया जाता है। इसे तब तक उबालते है जब तक शहद की तरह स्थिर नहीं हो जाता है। फिर इसे एक खास प्रकार के बक्से जिसमें मोटे धागे का जाल बुना रहता है में डाल दिया जाता है। फिर बक्से का ढक्कन लगाकर बालू पर स्वच्छ एवं उचित जगह पर रख दिया जाता है। 45–60 दिनों के बाद इसके चीनी के क्रिस्टल बनने लगते हैं। बक्से से सावधानीपूर्वक मिश्री को निकाल कर धूप में सुखाया जाता है जिससे मौजूद नमी की मात्रा पूर्ण रूप से निकल जाती है।

पेय पदार्थ (स्क्वैश आर.टी.एस.)

स्क्ववैश और आर.टी.एस. बनाने के लिये पके फल का गूदा (1 किलोग्राम) निकालकर छान लिया जाता है। पेय पदार्थ बनाने के लिये चीनी (2–5 किलोग्राम) एवं जल (1.25 लीटर) के मिश्रण से शीरा बनाकर छान लिया जाता है। शीरा बनाते समय साइट्रिक एसिड (8–10 ग्राम/किलोग्राम चीनी) भी मिला दिया जाता है। शीरा ठंडा होने के बाद इसे ताड़ के गूदे मे धीरे–धीरे मिलाया जाता है एवं जब आपस मे अच्छी तरह मिल जाते हैं तब उसमें रासायनिक परिरक्षक (सोडियम बेन्जोएट 0.02 प्रतिशत) मिला दिया जाता है। स्क्ववैश बनने के बाद बोतलों मे इसे सील कर रख दिया जाता है जबकि आर.टी.एस. बनाने के लिये स्वादानुसार जल (लगभग तिगुना) मिलाया जाता है।

अल्पतम एवं संपूर्ण प्रसंस्करण द्वारा फलों में मूल्य वृद्धि

डी. के. टंडन[1], ए.के. भट्टाचार्जी[2] एवं अभय दीक्षित[3]
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

प्रकृति ने मनुष्य को फलों के रूप में अनमोल वरदान दिये हैं। फल जहाँ मधुरता के द्योतक हैं, वहीं पौष्टिकता के पर्याय भी हैं। अपने विशिष्ट रंग, रूप, स्वाद एवं सुगंध के कारण प्रत्येक फल एक–दूसरे फलों से भिन्न होते हैं। विगत कुछ वर्षों के दौरान भारत में फलों के उत्पादन में अत्यधिक वृद्धि हुई है और भारत विश्व में फलोत्पादन के क्षेत्र में ब्राजील के बाद दूसरे स्थान पर है। फल समय में नष्ट होने वाला खाद्य होता है। इसकी भंडारण क्षमता काफी कम होती है। तुड़ाई के दौरान की लापरवाही एवं तुड़ाई उपरांत प्रबंधन की सुनिश्चित तकनीकों के अभाव एवं उपलब्ध तकनीकों के प्रसार की कमी के कारण 25–30 प्रतिशत फल उपभोक्ताओं तक पहुँचने से पूर्व ही नष्ट हो जाते हैं। इनके कारण अपरिमित संभावनाओं के बावजूद फलों के निर्यात एवं घरेलू उपयोग पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

फलों का पौष्टिक मूल्य सर्वविदित है क्योंकि ये मनुष्य के आहार में मूलभूत तत्वों को प्रदान करते हैं। फलों में शर्करा, रेशा, विटामिन, पॉलीफिनाल तथा खनिज प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। इन तत्वों की अधिकता से फल स्वास्थ्य की दृष्टि से उत्तम पदार्थ माने जाते हैं। किन्तु इनकी भंडारण क्षमता कम होने के कारण ये पूरे वर्ष उपलब्ध नहीं रह पाते हैं। फलों के पौष्टिक तत्वों को परिरक्षित कर बिना मौसम उपलब्धता सुनिश्चित की जा सकती है। साथ ही, भारत की गंभीर समस्याओं में से एक कुपोषण को दूर करने में भी यह सहायक सिद्ध हो सकती है।

आज भारत में कुल औद्यानिक उत्पादन का केवल 2 प्रतिशत ही संसाधित हो पाता है जबकि ब्राजील, फिलिपींस, थाईलैण्ड, मलेशिया आदि कुछ विकासशील देशों में संसाधन का स्तर 50 प्रतिशत से अधिक है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में औद्यानिक फसलों के प्रसंस्करण का महत्व और अधिक बढ़ जाता है क्योंकि पूरे वर्ष पौष्टिक पदार्थों की न केवल सुनिश्चितता बनायी रखी जा सकती है बल्कि इससे रोजगार के अवसर, आमदनी में वृद्धि एवं गरीबी उन्मूलन में भी सहायता मिलती है। यूँ तो साहित्य में फल प्रसंस्करण की नवीन से नवीनतम तकनीकी उपलब्ध है किन्तु हमें अपने फलों के अनुरूप प्रसंस्करण तकनीकें विकसित करनी होगी जो स्वास्थ्यवर्धक पदार्थ देने के साथ सस्ती भी हों। इस प्रकरण में हम कुछ ऐसी ही तकनीकों की चर्चा करेंगे, जिनसे फलों को प्रसंस्कृत कर परिरक्षित किया जा सकता है।

प्राथमिक प्रसंस्करण

देश में फलों एवं सब्जियों को तुड़ाई के पश्चात सीधे खेतों से बाजार में लाया जाता है। इनकी कोई कटाई–छँटाई, श्रेणीकरण एवं पेटीबंदी नहीं की जाती है जिसकी वजह से उत्पाद की अत्यधिक तुड़ाई उपरांत हानी होती है। इसके अलावा उत्पाद के साथ अखाद्य पदार्थ भी बाजार तक पहुँचते हैं जिनकी कोई आवश्यकता नहीं होती है। अतः उपभोक्ता तक उचित उत्पादन पहुँचाने के लिये प्राथमिक स्तर पर प्रसंस्करण किया जाना आवश्यक है। प्राथमिक प्रसंस्करण केला, गोभी, गाजर आदि कुछ फलों एवं सब्जियों के लिये उपयोगी है। इस प्रसंस्करण विधि में फल एवं सब्जियों के अनुपयोगी भागों को काट–छाँटकर इस प्रकार अलग कर दिया जाता है जिससे उनके खाद्य मूल्य पर विपरीत प्रभाव नहीं पड़े। साथ ही, उनके परिवहन एवं विपणन में भी आसानी हो।

अल्पतम प्रसंस्करण

सभी फलों का अल्पतम प्रसंस्करण आवश्यक नहीं है। इस विधि द्वारा फलों को उपभोक्ताओं तक पहुँचाने के लिये उनकी धुलाई, छिलाई, कटाई, फाँके बनाना, विवर्णीकरण, भराई, हिमीकरण, निर्जलीकरण आदि शामिल हैं। डिब्बाबंद सलाद, हिमित अघकटे आड़ू, बीजकोष रहित अनन्नास, ताजे कटे हुए फल, इत्यादि इसके कुछेक उदाहरण हैं। इस विधि द्वारा प्रसंस्कृत उत्पादों

[1]सेवानिवृत्त प्रधान वैज्ञानिक, [2]प्रधान वैज्ञानिक एवं मु. तक. अधिकारी

को सुविधापूर्वक तुरंत खाने अथवा पकाने योग्य खाद्य भी कहते हैं। आज के मशीनी युग में उपभोक्ताओं का रुझान उन उत्पादों की तरफ बढ़ रहा है जो बनाने एवं खाने में आसान और सुविधाजनक हो। देश में विशेषकर बड़े शहरों में छोटे–छोटे परिवार हैं जहाँ पर एक अनन्नास, कटहल, तरबूज, सीताफल, जिमीकंद आदि फल–सब्जी की खपत नहीं है वहाँ पर इस विधि द्वारा प्रसंस्कृत उत्पाद की अधिक आवश्यकता है। इस विधि द्वारा निर्मित उत्पादों में गुणवत्ता का विशेष ध्यान रखना पड़ता है जिससे उनको तैयार करते समय उनके स्वाद एवं सुवास में न्यूनतम ह्रास हो। अतः इन उत्पादों की भराई, भंडारण एवं विपणन उचित पैकेट और वातावरण में हो।

संपूर्ण प्रसंस्करण

देश में बढ़ती जनसंख्या, शहरीकरण एवं आमदनी वृद्धि के कारण प्रसंस्कृत पदार्थों की माँग में उत्तरोतर वृद्धि हो रही है। उपभोक्ताओं में उन उत्पादों की माँग अधिक है जिनमें ताजे फलों का स्वाद एवं सुवास परिरक्षित रहता है। व्यावसायिक उत्पाद बनाते समय यह प्रयास रखना चाहिए कि उसके पोषक तत्वों एवं स्वाद में कोई अवांछनीय बदलाव नहीं आये। उत्पाद निर्माण की तकनीक सस्ती भी होनी चाहिए। यह भी लक्ष्य रहता है कि उसमें किसी प्रकार के सूक्ष्मजीवी न रह जायें और भौतिक एवं रासायनिक परिवर्तन भी न्यूनतम हो।

उत्पाद का परिरक्षण तीन प्रकार–भौतिक, रासायनिक एवं जैविक विधियों से किया जा सकता है। भौतिक विधि में उत्पाद की उष्णीय ऊर्जा में वृद्धि (जैसे–गरम करना, किरणन) अथवा घटाव (जैसे–द्रुतशीतन, हिमीकरण) द्वारा पानी की मात्रा में कमी की जाती है, उदाहरणस्वरूप सांद्रण, निर्जलीकरण अथवा शुष्कीकरण। सांद्र जूस, कैंडी तथा पाउडर क्रमशः सांद्रण, निर्जलीकरण तथा शुष्कीकरण विधि द्वारा निर्मित उत्पाद हैं। इसी प्रकार संरक्षी पैकेट के उपयोग से परिरक्षण किया जाता है। रासायनिक विधि में उत्पाद बनाते समय उसमें चीनी, नमक, अम्ल या अन्य रासायनिक परिरक्षक जैसे पोटैशियम मेटाबाइसल्फाइट, सोडियम बेन्जोएट आदि मिलाते हैं। अचार, चटनी, जूस, स्क्वैश, जैम, जैली आदि इसके कुछ उदाहरण हैं। कुछ फलों एवं सब्जियों जैसे लीची, प्याज आदि को रासायनिक धुएँ से उपचारित कर संरक्षित किया जाता है। जैविक परिरक्षण में अम्लीय तथा मद्यसारित किण्वन सम्मिलित हैं। विभिन्न सूक्ष्मजीवियों जैसे जीवाणु, यीस्ट आदि के उपयोग से किण्वन क्रिया निष्पादित की जाती है। साइडर एवं अन्य अल्कोहलिक पेय इसके ज्वलंत उदाहरण है।

सामान्यतया प्रसंस्करण एवं परिरक्षण के दौरान जल अथवा सब्जी पदार्थ की पौष्टिक तथा संवेदी गुणवत्ता में थोड़ा बहुत ह्रास होता है। उदाहरणस्वरूप उष्णीय निर्जर्मीकरण के दौरान पदार्थ के ऊतक नरम पड़ जाते हैं तथा उसमें विटामिन, सुवास आदि का ह्रास भी होता है। क्लोरोफिल तथा एंथोसायनिन जैसे वर्ण यौगिकों के विघटन के कारण खाद्य पदार्थों के रंग में भी परिवर्तन आ जाता है। परंतु इन सभी अवांछनीय परिवर्तनों के बावजूद प्रसंस्करण की उपयोगिता इतनी अधिक है कि अन्य अलाभकारी कारक उसके आगे गौण हो जाते हैं। प्रसंस्करण के द्वारा ही हानिकारक सूक्ष्मजीवों पर पूर्ण नियंत्रण संभव हो पाता है तथा उत्पाद लंबी अवधि तक उपयोग हेतु सुरक्षित रहता है। यही वह विधि है जिसके द्वारा विभिन्न फलों के गुणों का उपयोग बेमौसम किया जा सकता है। प्रसंस्करण के विभिन्न स्वरूप (प्राथमिक, अल्पतम तथा संपूर्ण) अलग–अलग सामाजिक एवं आर्थिक परिवेशों में उपयोगी है। प्राथमिक तथा अल्पतम प्रसंस्करण हेतु एक विस्तृत इकाई की आवश्यकता होती है। आधुनिक बाजार में सभी प्रकार के नवीन खाद्य पदार्थों की बढ़ती माँग को देखते हुए प्रसंस्करण के सभी स्वरूपों की अच्छी संभावनाएँ हैं। आवश्यकता इस बात की है कि संसाधित पदार्थों की गुणवत्ता अंतर्राष्ट्रीय अथवा राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित मानकों के अनुरूप होनी चाहिए जिससे इनके विपणन में कोई समस्या न आ सके। इसी प्रकार उत्पादन में आर्थिक कारकों का भी विशेष महत्व है। उत्पाद के निर्माण की विधि सस्ती होनी चाहिए जिससे तैयार उत्पाद का मूल्य अधिक नहीं हो सके। इस प्रकार उचित गुणवत्तायुक्त सस्ते उत्पादों की बाजार में अच्छी संभावनाएँ हैं।

फसल एवं अन्य कार्बनिक अवशेषों का कुशल प्रबंधन

राम अवध राम[1]
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

फसल एवं अन्य कार्बनिक अवशेष कृषकों के लिये मूल्यवान प्राकृतिक संसाधन हैं। फसल अवशेषों का उपयोग पशु अहार में, कम्पोस्ट बनाने, गाँवो में छप्पर का निर्माण एवं इंधन के रूप में किया जाता रहा है।

फसल द्वारा मृदा से उद्ग्रहण किये गये कुल पोषक तत्वों का 25 प्रतिशत नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस, 50 प्रतिशत सल्फर एवं 75 प्रतिशत पोटैशियम फसल अवशेषों में संरक्षित रहता है। जिनका उपयोग पोषक तत्वों के श्रोत के रूप में किया जा सकता है। परन्तु भारत के उत्तर पश्चिम राज्यों में कृषक फसलों की बोआई के पहले पिछली फसल के अवशेषों के अधिकांश भाग को जला देते हैं। यह समस्या सिंचित क्षेत्रों मे अधिक होती है। फसलों के अवशेषों के जलाने की प्रथा प्रायः मशीन से कटाई किये गये प्रक्षेत्रों मे श्रमिकों की अनुपलब्धता, फसलों के अवशेषों के एकत्रीकरण में अधिक लागत के कारण किया जाता है।

फसलों के अवशेषों के जलाने की प्रथा गंगा के मैदानी क्षेत्र पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश एवं उत्तराखंड में अधिक प्रचलित है जहाँ फसलों की कटाई एवं मड़ाई मशीन द्वारा की जाती है। यह समस्या दिन–प्रतिदिन पूरे देश मे फैलती जा रही है। फसलों के अवशेष एवं अन्य कार्बनिक अवशेषों के जलाने से कार्बन डाइऑक्साइड, कार्बन मोनो ऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड, काला कार्बन, नाइट्रोजन ऑक्साईड, नान मिथाइल हाइड्रो कार्बन, ज्वलनशील आर्गेनिक यौगिक पदार्थ एवं पार्टीकुलेट पदार्थो का उत्सर्जन होता है जिससे पर्यावरण का प्रदूषण होता है। यह अनुमान लगाया गया है कि एक टन धान के पराली को जलाने से 13 किलोग्राम पार्टीकुलेट पदार्थ, 60 किलोग्राम कार्बन मोनो आक्साइड, 1460 किलोग्राम कार्बन डाइऑक्साइड, 3.5 किलोग्राम नाइट्रोजन ऑक्साइड, 02 किलोग्राम सल्फर डाइआक्साइड का उत्सर्जन होता है। काले कार्बन के उत्सर्जन से तापमान में वृद्धि होती है। पार्टीकुलेट पदार्थो के उत्सर्जन से सभी जीवों में श्वसन से संबंधित रोगों में वृद्धि होती है। प्रायः छोटे बच्चों के स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव तीव्र गति से होता है।

30–40 वर्ष पूर्व ग्रामीण क्षेत्रों में पशु परिवार के अभिन्न अंग होते थे एवं फसल अवशेषों का उपयोग इनके आहार के रूप में किया जाता था। प्रत्येक परिवार का अपना कम्पोस्ट का गड्ढा होता था जिसमें पशुओं के मल–मूत्र एवं अन्य कार्बनिक अवशेषों के साथ–साथ खाद बनायी जाती थी। परन्तु कृषि में मशीनीकरण के प्रचलन के साथ गावों में पशुओं की संख्या (खासकर बैलों की) में गिरावट आयी है। यह कभी भारत के उत्तर पश्चिमी राज्यों में अधिक हुई है जिससे कम्पोस्ट के गड़ढे भी लुप्त हो गये हैं जिसके कारण फसलों के अवशेषों का उपयोग पशु अहार के रूप में नहीं किया जा रहा है। फलस्वरूप इसका अधिकांश भाग खेत में जला दिया जाता है। वर्तमान में, स्वच्छ भारत अभियान के अर्न्तगत भी पूरे देश में कार्बनिक अवशेषों एवं अन्य पदार्थो की जलाया जा रहा है जिससे पर्यावरण का प्रदूषण एवं उत्तर पश्चिमी भाग में धुंध का प्रकोप बढ़ा गया है। फलस्वरूप परिवहन चालन एवं मोटर दुर्घटना में वृद्धि हो रही है।

सरकारी आँकड़ों के अनुसार हरियाणा, पंजाब, उत्तराखण्ड एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश में 34 मिलियन टन फसल अवशेषों का उत्पादन होता है। इसमें से 23 मिलियन टन फसल अवशेषों को जला दिया जाता है। पंजाब में फसलों के अवशेषों का 80 प्रतिशत भाग जला दिया जाता है। यह फसलों के अवशेषों का विशाल भंडार गुणवत्तायुक्त कम्पोस्ट मे परविर्तित किया जा सकता है। एक ऑकलन के अनुसार फसलों के उत्पादन में प्रयुक्त नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस का 30–35 प्रतिशत एवं 70–80 प्रतिशत पोटैशियम की मात्रा फसलों के अवशेष में पायी जाती है। अतः इस मूल्यवान फसल अवशेष का उपयोग कम्पोस्ट एवं विछावन के रूप में करना अधिक लाभप्रद होगा।

[1]प्रधान वैज्ञानिक

फसलों के एवं अन्य कार्बनिक अवशेषों का महत्व

फसलों के अवशेष मृदा में उपस्थित विभिन्न जीवों के आहार एवं पोषक तत्वों के श्रोत होते हैं। जैविक कार्बन की अनुपस्थित में मृदा एक निर्जीव वस्तु रह जाती है जिसमें किसी प्रकार का उत्पादन नहीं किया जा सकता है। फसल अवशेषों का विघटन मृदा में उपस्थित विभिन्न जीवों द्वारा किया जाता है। फलस्वरूप ह्यूमस का निर्माण होता है जो पोषक तत्वों एवं जल का भंडार होता है।

फसल एवं अन्य कार्बनिक अवशेषों का कुशल प्रबन्धन

केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ गत 16–17 वर्षो से फसल एवं अन्य जैविक अवशेषों के प्रबंधन पर प्रदर्शन एवं प्रशिक्षण का आयोजन करता आ रहा है। इन फसल अवशेषों का उपयोग निम्नानुसार किया जा सकता है।

बायोडायनमिक कम्पोस्ट

बायोडायनमिक कम्पोस्ट जैविक अवशेषों एवं गोबर से गुणवत्तायुक्त खाद बनाने की प्रभावशाली प्रक्रिया है जिससे कृषक अपने प्रक्षेत्र पर ही सरलता से बना सकते हैं। सूखे, हरे जैविक अवशेषों को गोबर के साथ ढेर बनाया जाता है जिससे 75–120 दिनों मे गुणवत्तायुक्त कम्पोस्ट तैयार हो जाती है। बायोडायनमिक कम्पोस्ट मे गोबर की खाद से 2–3 गुना अधिक पोषक तत्व पाये जाते हैं।

वर्मी कम्पोस्ट

फसलों के अवशेषों एवं गोबर को एक साथ मिला कर क्यारी में कुछ दिनों के लिये पानी का छिड़काव कर रखा जाता है। तत्पश्चात इसमें केचुओं को डालकर आवश्यकतानुसार पानी का छिड़काव किया जाता है। उपयुक्त केचुओं की संख्या एवं नमी की अवस्था में 30–40 दिनों में वर्मी कम्पोस्ट तैयार हो जाती है।

नादेप कम्पोस्ट

नादेप कम्पोस्ट कार्बनिक अवशेषों एवं गोबर की खाद में परिवर्तित करने की वायुवीय प्रकिया है। जिसमें 3 × 2 × 1.5 मीटर का ईट का ढाँचा बनाकर जैविक अवषेशों एवं गोबर की परत लगाकर भराई की जाती है। विभिन्न अवषेशों की परतों के बीच लकड़ी की राख, बुझा हुआ चूना एवं राक फास्फेट की 2–3 किलोग्राम मात्रा का उपयोग किया जाता है। यह कम्पोस्ट उचित नमी एवं तापमान की अवस्था में 80–120 दिन में तैयार हो जाती है जो गोबर की खाद से अधिक पोषक तत्वयुक्त होती है।

सूक्ष्म जीव कम्पोस्ट

जैविक अवशेषों के छोटे–छोटे टुकड़ों एवं गोबर की सहायता से यह कम्पोस्ट तैयार की जाती है। जैविक अवशेषों एवं गोबर की परत के बीज में सूक्ष्म जीवों के संकाय का प्रयोग किया जाता है जिससे कम्पोस्ट 30–40 दिनों में तैयार हो जाती है।

फसल एवं अन्य जैविक अवशेषों का विछावन के रूप मे उपयोग

उपलब्ध जैविक अवशेषों को फल वृक्षों के थालों में, कतार में बोआई/रोपाई की गयी फसलों में विछावन के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। विछावन से नमी के संरक्षण एवं खरपतवारों की रोकथाम होती है। विछावन से मृदा का तापमान संतुलित बना रहता है जिससे सूक्ष्म जीवों की सक्रियता बनी रहती है। विछावन कुछ दिनों पश्चात् सड़कर मृदा के स्वास्थ्य में वृद्धि करते हैं।

फसलों की कटाई के पश्चात् रोटावेटर का प्रयोग

फसलों की कटाई उपरान्त यदि प्रक्षेत्र को रोटावेटर से जुताई कर दी जाये तो जैविक अवशेष छोटे–छोटे टुकड़ों में कटकर मृदा में मिल जाते हैं। तत्पश्चात फसल की सिंचाई जीवामृत/अमृत पानी युक्त पानी से की जाये तो फसल अवशेषों का विघटन द्रुत गति से होता है। फलस्वरूप मृदा एवं फसल स्वास्थ्य में वृद्धि होती है।

अतः उपयुक्त उपायों को अपनाकर फसल एवं जैविक अवशेषों से पर्यावरण का मितव्ययी प्रबंधन किया जा सकता है जिससे पर्यावरण प्रदूषण मे कमी एवं उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है।

रश्मिरथी

'बली योद्धा बड़ा विकराल था वह!
हरे! कैसा भयानक काल था वह?
मुषल विष में बुझे थे, बाण क्या थे!
शिला निर्मोघ ही थी, प्राण क्या थे!'

'मिला कैसे समय निर्भीत है यह?
हुई सौभाग्य से ही जीत है यह?
नहीं यदि आज ही वह काल सोता,
न जानें, क्या समर का हाल होता?'

–रामधारी सिंह 'दिनकर'

आम के फलों के रोग : कारण एवं निवारण

पी.के. शुक्ल[1] तहसीन फातिमा[2], गुंडप्पा[3] एवं निधि कुमारी[4]
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

बाजार में अच्छी कीमत प्राप्त करने के लिये आम के फलों की सुन्दरता महत्वपूर्ण है। अनेक रोग फलों की सुन्दरता को बिगाड़ने में सक्षम है। इनमें शोल्डर ब्राउनिंग और एन्थ्रेकनोज रोग महत्वपूर्ण हैं। इन रोगों का प्रकोप फलों की परिपक्वता के समय अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में अधिक देखा गया है। इन दोनों रोगों के अतिरिक्त तुड़ाई उपरांत होने वाले स्टेम एंड रॉट और काली सड़न भी महत्वपूर्ण हैं। आम की पत्तियों एवं टहनियों पर अनेक प्रकार के रोगकारक फफूँद होते हैं जिनमें उल्टा सूखा रोग, एन्थ्रेकनोज, पत्तियों का झुलसा एवं सूटी मोल्ड कारक फफूँद प्रमुख हैं। वर्षा के साथ इन फफूँदों के बीजाणु एवं कवक जाल के टुकड़े बहकर फलों पर पहुँच जाते हैं और पकते हुए फलों पर तेजी से रोग पैदा करते हैं।

शोल्डर ब्राउनिंग

इस रोग के लक्षण फल के ऊपरी भाग पर स्थित फल बृन्त जुड़ाव के पास से प्रारंभ होकर नीचे की ओर दृष्टिगोचर होते हैं। प्रारंभिक अवस्था में फलों के ऊपरी भाग पर हल्के स्लेटी, गहरे भूरे या काले रंग की फफूँदी के बीजाणु एवं कवक जाल का जमाव दिखायी देता है जो धीरे–धीरे गहरे रंग का होकर लगभग पूरे फल पर फैल जाता है। उपरोक्त लक्षण पूरे फल पर समान नहीं होते हैं बल्कि फलों पर वर्षा जल के फलों पर बहाव के अनुरूप धब्बों या धारियों के रूप में बनते हैं। सामान्यतः यह लक्षण फल की बाहरी त्वचा तक ही सीमित रहते हैं और अन्दर के गूदे को प्रभावित नहीं करते हैं। कच्चे फलों पर वर्षा द्वारा बहाये गये फफूँद के बीजाणु एवं कवक जाल का जमाव होता है और पकते हुए फलों पर इन्हीं द्वारा संक्रमण से फल रोगग्रस्त होकर सड़ने लगते हैं। दुर्भाग्यवश आम की कोई भी प्रजाति इस रोग से मुक्त नहीं है। इस रोग का प्रकोप शीघ्र पकने वाली प्रजातियों पर कम और देर से पकने वाली प्रजातियों पर अधिक होता है। इस रोग का प्रकोप निश्चित रूप से वर्षा पर आधारित है। सात से आठ वर्षा दिवस में 70 मिलीमीटर से अधिक वर्षा के पश्चात रोग गंभीर रूप धारण कर लेते हैं। रोग का प्रकोप पुराने, घने और अधिक नमी युक्त बागों में अधिक देखा गया है। इस रोग की गंभीरता और बागों में रस चूसक कीटों (भुनगा, स्केल एवं गुजिया) की उपस्थिति के बीच समानुपातिक संबंध पाया गया है। ऊपर–उद्धृत कीटों द्वारा उत्पन्न चिपचिपा मीठा पदार्थ पत्तियों, फलों एवं टहनियों पर सूटी मोल्ड के उगाव को बढाता है जो इस रोग के सबसे प्रमुख कारक हैं।

शोल्डर ब्राउनिंग रोग के लक्षण

शोल्डर ब्राउनिंग रोग से बचाव एवं प्रबंधन

इस रोग से बचाव हेतु बागों की पूरे वर्ष देखभाल की जानी चाहिए। बागों में भुनगा, स्केल एवं गुजिया कीटों की उपस्थिति के अनुसार आवश्यक हो तो कीटों का नियंत्रण कर सूटी मोल्ड के उगाव पर नियंत्रण आवश्यक है।

- दिसंबर–जनवरी माह में बागों की जुताई करें और तनों पर पॉलिथीन की 25 सेंटीमीटर चौड़ी पट्टी लगायें। गुजिया कीट को पेड़ पर चढ़ने से रोकने के लिये तने के आस–पास मिट्टी चढ़ाकर उस पर क्लोरपायरीफॉस चूर्ण (100–150 ग्रा./पेड़) का बुरकाव करें। फरवरी–मार्च माह में यदि पेड़ों पर गुजिया कीट चढ़ गयी हो तो 2 मिलीलीटर/लीटर कार्बोसल्फान (25 ई.सी.) या डायमेथोएट (30 ई.सी.) का छिड़काव फूल खिलने से पहले करें।

[1]प्रधान वैज्ञानिक, [2]एस.आर.एफ. एवं [3,4]वैज्ञानिक

- भुनगा के प्रबंधन हेतु मार्च के प्रारंभ में, जब बौर 8–10 सेंटीमीटर की हो तब 0.3 मिलीलीटर/लीटर इमिडाक्लोप्रिड (17.8 एस. एल.) एवं फलन के उपरान्त 0.2 ग्राम/लीटर थायोमेथोक्सॉम (25 डब्लू.जी.) के घोल का छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त वर्ष भर में किसी भी समय यदि भुनगा कीट की संख्या अधिक दिखे तो उन्हें नियंत्रित करें।
- आम के बागों में स्केल कीट की अनेक प्रजातियाँ पूरे वर्ष सक्रिय रहती हैं। इनकी उपस्थिति एवं संख्या के अनुरूप इनका नियंत्रण कार्बोसल्फान (25 ई.सी.) या डायमेथोएट (30 ई.सी.) 2 मिलीलीटर/लीटर के छिड़काव द्वारा करना चाहिए।
- पत्तियों पर उगे हुए सूटी मोल्ड को समाप्त करने हेतु बबूल का गोंद 3 ग्राम/लीटर या स्टार्च 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से छिड़कना चाहिए।
- फलों को कीटों, सूटी मोल्ड एवं वर्षा के जल के बहाव से बचाने के लिये उनको 8 से 12 इंच की कागज की थैलियों में वर्षा प्रारंभ होने से पूर्व बंद करें।
- फलों पर ट्री स्प्रे ऑयल के एक प्रतिशत के घोल का छिड़काव करने से रोग के प्रकोप पर प्रभावी नियंत्रण होता है।
- फलों पर तुड़ाई से एक माह पूर्व डाईफेनोकोनाजोल (25 ई.सी.) फफूँदी नाशक के 0.05 प्रतिशत (0.5 मिलीलीटर/लीटर) के घोल का छिड़काव भी इस रोग के नियंत्रण में सहायक होता है।

एन्थ्रेकनोज

फलों पर इस रोग की शुरुआत गुप्त संक्रमण के रूप में होती है। डाल पर पक रहे एवं भंडारित फलों पर काले धब्बे पड़ जाते हैं। प्रारंभ में, ये धब्बे गोल होते हैं जो बाद में बढ़ कर बड़े अनियमिताकार के हो जाते हैं। कभी–कभी तो ये पूरे फल को ढ़क देते हैं। बाद में, इन धब्बों में फटन दिखायी देती है और फफूँद फल के अंदर प्रवेश कर फलों को पूरी तरह सड़ा देते हैं। नमी होने पर काले पड़े धब्बों की सतह पर गुलाबी रंग के बीजाणु पनपते हैं।

एन्थ्रेकनोज रोग के लक्षण

स्टेम एन्ड रॉट (ढ़ेपी विगलन रोग)

रोग की शुरुआत फल के उस छोर से होती है जहाँ फल डंठल से जुड़ा होता है। डंठल लगे भाग के पास से फल पर भूरा गोलाकार धब्बा बनना शुरु होकर फल के निचले हिस्से में पहुँचते हुए पूरे फल को भूरा, फिर काले रंग का कर देता है। इस सड़न की प्रक्रिया इतनी तेजी से होती है कि 2–3 दिनों में पूरा फल सड़ जाता है।

ढ़ेपी विगलन रोग के लक्षण

ब्लैक रॉट (काली सड़न)

कटे–फटे या चोटिल फलों पर मटमैले, हल्के स्लेटी रंग के अनियमित आकार के धब्बे बनते हैं जो बाद में काले रंग के हो जाते हैं। काले रंग के धब्बों के ऊपर फफूँद के बीजाणु दिखायी देते हैं। धब्बों के नीचे और आस–पास के हिस्से गल जाते हैं जिससे दुर्गन्ध आने लगती है। यह गलन की प्रक्रिया बहुत तेजी से बढ़ती है। फल की डंडी लगे स्थान से भी सड़न आरंभ हो सकती है क्योंकि वहाँ ऊतक खुली होती है और फफूँद खुली सतह से अन्दर प्रवेश कर जाती है। अतः फलों की तुड़ाई के समय विशेष

सावधानी बरतनी चाहिए। फलों पर किसी भी तरह की चोट न पहुँचे। फलों को जमीन पर नहीं गिरने देना चाहिए तथा फलों पर मिट्टी नहीं लगने देना चाहिए। फलों की तुड़ाई एवं भंडारण सावधानीपूर्वक स्वच्छ वातावरण में करना चाहिए।

काली सड़न रोग के लक्षण

एन्थ्रेकनोज, ढ़ेपी विगलन और काली सड़न रोग का प्रबंधन

इन रोगों की रोकथाम हेतु तुड़ाई के 30 दिनों पूर्व फफूँदी नाशक कार्बेन्डाजिम (50 डब्लू.पी.) या थायोफनेट मिथाइल (70 डब्लू.पी.) के 0.1 प्रतिशत ¼1 ग्राम/लीटर) या डाईफेनोकोनाजोल (25 ई.सी.) के 0.05 प्रतिशत (0.5 मिलीलीटर/लीटर) का छिड़काव करना चाहिए। इससे फलों पर एन्थ्रेकनोज के गुप्त संक्रमण की रोकथाम होती है। तुड़ाई के उपरांत फलों को गर्म पानी 52$\pm$1° सेंटीग्रेड पर 10 मिनट या 46$\pm$1° सेंटीग्रेड पर 60 मिनट तक उपचारित करने से रोगों की रोकथाम की जा सकती है।

फलों को इन रोगों से बचाव

- फलों को करीब 3–5 सेंटीमीटर लंबी डंडियों सहित तोड़ना चाहिए।
- फलों को पैकिंग के पहले चेप निकलने के लिए उल्टा रख कर चेप निकाल देनी चाहिए। यह ध्यान रखना चाहिए कि चेप फलों पर न लगे।
- बाग में तुड़ाई के बाद फलों को मिट्टी के संपर्क से बचाना चाहिए। इसके बाग में लिये साफ पॉलिथीन बिछा कर फलों को इकट्ठा किया जा सकता है।
- फलों को गत्ते की नयी पेटियों में ही भंडारित करना चाहिए।
- पेटियों में लगाने वाले लाइनिंग कागज सूखे तथा नये होने चाहिए।
- पेटियों में ऊपर तथा नीचे की तह को गद्देदार रखना चाहिए जिससे फलों में परिवहन के दौरान किसी प्रकार की चोट न लगे।
- पेटियों को सावधानीपूर्वक उतारना चढ़ाना चाहिए। उन्हें फेंकना नहीं चाहिए।
- तोड़े हुए आमों में एक भी रोगग्रस्त आम पेटी में नहीं रखना चहिए। इससे अन्य आम संक्रमित हो जाते हैं।

यदि इन आम सावधानियों को अपनाया जाये तो भंडारण के समय फल में लगने वाले रोगों से फलों को आसानी से बचाया जा सकता है।

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन "अज्ञेय"

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन "अज्ञेय" को कवि, शैलीकार, कथा–साहित्य को एक महत्त्वपूर्ण मोड़ देने वाले कथाकार, ललित–निबन्धकार, सम्पादक और अध्यापक के रूप में जाना जाता है। इनका जन्म 7 मार्च 1911 को उत्तर प्रदेश के कसया, पुरातत्व–खुदाई शिविर में हुआ। उनका बचपन लखनऊ, कश्मीर, बिहार और मद्रास में बीता। बी.एससी. कर अंग्रेजी में एम.ए. करते समय क्रांतिकारी आन्दोलन से जुड़कर बम बनाते हुए पकड़े गये और वहाँ से फरार भी हो गए। सन् 1930 ई. के अन्त में पकड़ लिये गये। अज्ञेय प्रयोगवाद एवं नई कविता को साहित्य जगत में प्रतिष्ठित करने वाले कवि हैं। अनेक जापानी हाइकु कविताओं को अज्ञेय ने अनूदित किया। बहुआयामी व्यक्तित्व के एकान्तमुखी प्रखर कवि होने के साथ–साथ वे एक अच्छे फोटोग्राफर और सत्यान्वेशी पर्यटक भी थे।

बागवानी फसलों में माइट की समस्या और उनका प्रबंधन

भाग्यश्री एस.एन[1], संजीव रंजन सिन्हा[2], सागर डी.[3] एवं सुरेश नेबापुरे[4]

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

माइट अकशेरूकी का सबसे सफल और एक विभिन्न प्रकार का समूह है जो पौधे, जन्तुओं, भूमि और पानी में रहता है। अधिकतर माइट आँखों से नहीं देखे जा सकते हैं फिर भी पौधों को क्षति पहुँचाते हैं। परजीवी माइट (कण) पौधे के ऊतकों को भेद कर पत्तियों के निचली सतह से निकलने वाले रस को चूसते हैं जिसके परिणामस्वरूप पत्तियों के ऊपरी सतह पर पीले धब्बे पड़ जाते हैं। जैसे–जैसे क्षति बढ़ती है पत्तियाँ क्षतिग्रस्त होकर सूख कर गिर जाती हैं और कभी–कभी इसके कारण पौधे का प्रजनन और विपणन योग्य फूल और फल भी विकृत हो जाते हैं। लगभग 150–200 प्रकार की कृषि और बागवानी फसलों को इन माइटों से क्षति पहुँचती है। माइट की मुख्य चार 'फैमिली' होती हैं, जिन्हें नीचे दर्शाया गया है।

प्रजातियाँ	फसल	क्षति और लक्षणों की प्रकृति
	स्पाइडर (मकड़ी) माइट	
टैट्रानिकस अर्टीकी टैट्रानिकस लूडेनी टैट्रानिकस नियोकैलीडोनिकस टैट्रानिकस मैक्फारलेनी	टमाटर, भिण्डी, बैंगन, फली, मूँगफली, कपास, कद्दू वर्गीय और मक्का	यह पत्तियों के निचले सतह से रस पीते हैं जिसके कारण ऊपरी सतह पर पीले धब्बे पड़ जाते हैं। गंभीर संक्रमण होने से ये धब्बे इकट्ठे हो जाते हैं और सफेद से दिखायी देते हैं। इसी कारण पत्तियाँ गिर जाती हैं और पौधा मर जाता है। जाले की कताई (वेब स्पिनींग) भी माइट होने का एक लक्षण है।
टोलीगोनिंकस ओराइजी ओलीगोनिंकस इंडीकस	धान गन्ना	ये पत्तियों के निचले सतह से रस पीते हैं जिसके कारण ऊपरी सतह पर सफेद से धब्बे दिखायी देते हैं। परिणामस्वरूप पत्तियाँ भूरी पड़ जाती हैं और सूख जाती हैं। गन्ने में यह जंग के रंग की होती है।
टोलीगोनिंकस मैग्नीफेरस	आम	माइट पत्तियों की ऊपरी सतह का रस पीती हैं जिससे पत्तियाँ पीली और बाद में बदरंगी होकर सूख जाती हैं। इसके आक्रमण से पौधे नर्सरी में ही मर जाते हैं।
पैनोनिंकस अल्मी	सेब, नाशपाती, आडू और बेर	माइट के संक्रमण से सफेद धारियाँ और कास्यन हो जाते हैं। पेड़ों की सत्व (विगर) रुक जाता है।
टेरोबिया लेटेन्स	गेहूँ	माइट धात्विक, भूरी से काली, पत्तियों के शिखर से रस बिना जाला बनाये पीते हैं। रस पीने से पत्तियाँ झुलस और सूख जाती हैं।
	एरियोफिड माइट	
एसैरिया कजानी	टरहर	माइट रस चूसकर पत्तियों, फूलों की कलियों और फलियों को विकृत बना देती है। स्टैरिलिटी मोजैक वाइरस को फैलाने में वैक्टर का काम करता है।
एसैरिया गुरेरोनिस	नारियल	माइट परिदलपुंज (पैरियन्थ) के नीचे रहकर रस पीती हैं और विकृत बना देती है जिससे अपरिपक्व नट नीचे गिर जाते हैं। प्रारंभ में त्रिकोनीय धब्बा सा दिखायी देता है जो भूरा हो जाता है जिससे नट कठोर और रेशेदार हो जाते हैं।
एसैरिया मैंगीफेरा	आम	पत्तियाँ सूखी और झाड़ीदार लगने लगती हैं।
एसैरिया जैस्मीनी	चमेली	माइट के कारण पत्तियाँ विकृत मखमली सी दिखायी पड़ती है।
	फाल्स स्पाइडर माइट	
ब्रैविपैल्पस स्पीसीज	पान	पत्तियाँ मोटी, समृद्ध और गहरी हरी हो जाती हैं जिससे बाजार में बिकने की गुणवत्ता में कमी आती है।
श्राओइला स्पीसीज	सुपारी	माइट द्वारा रस चूसने के कारण पत्ता पीला पड़कर सूख जाता है।
	ब्रॉड माइट या पीली माइट	
पोलीफेगोटारसोनेमस लॅटस	मिर्ची, शिमला मिर्च और आलू	माइट मुलायम पत्तियों और पत्तियों की कलियों का रस पीती हैं जिससे विकृत और अवरुद्ध विकास होता है।

[1,3,4]वैज्ञानिक एवं [2]मुख्य तकनीकी अधिकारी

प्रबंधन

1. क्षतिग्रस्त पत्तियों, तनों और पौधों के भाग को छाँट दें और उन्हें कंपोस्ट पिट में डालें जिससे ये इधर–उधर न फैलें।
2. फसलों का सिर्फ पर्याप्त सिंचाई ही प्रदान करें ताकि माइट का संक्रमण नहीं फैले।
3. खरपतवार और नैसर्गिक पौधों को खेतों में से उखाड़ दें जिससे माइट नहीं फैले।
4. संक्रमित सदाबहार (स्थायी) पौधे और वृक्षों को छाँट दें और उस पर हिरसूटेला थिम्पसोनी का प्रयोग एरियोफिड माइट के प्रबंधन के लिये प्रयोग करें।
5. *नियोसियूलस लोग्गीस्पाइनोसस, फाइटोसूल्स परसीमिलिस* और *एम्बाइसियस स्पीसीज* जैसे संवर्धित परभक्षी माइट द्वारा स्पाइडर माइट का प्रबंध करें।
6. माइट के नियंत्रण के लिये डाइकोफोल (18.5 ई. सी.) /2.5 मिलीलीटर/लीटर या प्रोपारगाइट (57 ई.सी.)/2.5 मिलीलीटर/लीटर या फेनाझाक्वीन (10 ई.सी.)/2.5 मिलीलीटर या डायफेन्थ्युरॉन (50 डब्ल्यू.पी.)/1 ग्राम/लीटर या क्लोराफेनापायर 10 एस.सी. या वर्टीमेक (1.9 ई.सी.) 0.5 मिलीलीटर/ लीटर या मिल्बीनोक 1 ई.सी./0.5 मिलीलीटर/ लीटर का छिड़काव करें।
7. मिर्च की पीली माईट के लिये।

(क) पोषक तत्वों और नल का पर्याप्त प्रबंधन माइट को बढ़ने से रोकता है।

(ख) परभक्षी, एम्बीसीयस ओवैलिस का संरक्षण एवं बढ़ाने से मिर्च के परिस्थिकी तंत्र के लिए आवश्यक है।

(ग) फोसालोन 35 ई.सी./3 मिलीलीटर/लीटर या वर्टीमेक 1–9 ई.सी./0.5 मिलीलीटर/लीटर का छिड़काव करें।

8. नारियल में लगने वाली एरियोफिड माइट के लिए

(क) पोटेशियम की मात्रा/3.5 किलोग्राम/पौधा तक बढ़ाएँ, इससे माइट का संक्रमण कम होगा।

(ख) नीम का केक, पोटेशियम, कैल्सियम (जिप्सम 1 किलोग्राम/पौधा) और बोरॉन (50 ग्राम/पौधा) नारियल के पेड़ की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है।

(ग) खेतों की खाद (फिम) का प्रयोग 50 किलोग्राम प्रति पौधे के हिसाब से निर्धारित करें।

(घ) छिड़काव के लिए मछली के तेल वाला साबुन 4 प्रतिशत या लहसुन, नीम का तेल 2 प्रतिशत या *एजाडायरेक्टिन* 1 प्रतिशत मिली/लीटर की दर से करें।

(ङ) जड़ों के उपचार हेतु *मोनोक्रोटोफॉस* 10 मिलीलीटर या *ट्राईजोफोस* 20 मिलीलीटर या कार्बोसल्फॉन 15 मिलीलीटर के साथ बराबर मात्रा में पानी मिलाकर प्रयोग करें।

(च) नटों के संक्रमण से बचने के लिये ट्राईजोफॉस 5 मिलीलीटर या कार्बोसल्फॉन 5 मिलीलीटर या मोनोक्रोटोफॉस 5 मिलीलीटर छिड़काव वर्ष में तीन बार करें जो प्रायः अप्रैल–मई, अक्टूबर–नवंबर और दिसंबर–जनवरी में हो।

सावधानियाँ

1. पीड़कनाशियों का प्रयोग बदल–बदल कर करें ताकि इससे प्रतिरोधक क्षमता नहीं बढ़ें।
2. पीड़कनाशियों के साथ दिये गये निर्देश जैसे – मात्रा, समाप्ति की तिथि, फसल और सुरक्षा नियम ध्यान से पढ़े।
3. पीड़कनाशियों को छिड़कते समय पर्याप्त रक्षात्मक आवरण धारण करें जिससे कोई दुष्प्रभाव और व्यवसायिक खतरे नहीं हों।

****

दोहे

माटी कहे कुम्हार से, तू क्या रौंदे मोय। एक दिन ऐसा आएगा, मैं रौंदूगी तोय।।
माला फेरत जुग गया, गया न मन का फेर, कर का मन का डारि दे, मन का मनका फेर।।

–कबीरदास

आम का प्रसंस्करण, मूल्य संवर्धन तथा अपशिष्ट उपयोग

नीलिमा गर्ग[1] संजय कुमार[2] एवं हरीश चन्द्र वर्मा[4]
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

आम अपने आकर्षक सुगंध, सुवास एवं सुस्वाद के कारण पूरी दुनिया में लोगों द्वारा पसन्द किया जाता है। यह एक अत्यंत स्वास्थ्यवर्धक फल है जिसके 100 ग्राम ही फाँकों में 65 किलो कैलारी ऊर्जा शक्ति, 0.27 ग्राम वसा एवं 2 ग्राम सोडियम की मात्रा उपलब्ध होती है। इसमें कोलेस्ट्राल बिल्कुल नहीं होता है। इसका ग्लाईसेमिक सूचकांक सिर्फ 60 है एवं एक औसत आकार का आम लोगों की दैनिक आसीय रेशा की आवश्यकता के 6 प्रतिशत तक की आपूर्ति करता है। इसके अतिरिक्त यह प्रति–ऑक्सीकारक विटामिन 'ए', विटामिन 'सी', विटामिन 'ई', लोहा तथा निकोटिनिक अम्ल की उपयोगी मात्रा का एक महत्वपूर्ण स्रोत है।

आम प्रसंस्करण संबंधी मोबाइल ऐप का विकास

आम एक ऐसा फल है जो अपने विकास की हर अवस्था में उपयोग में लाया जाता है। कच्चे आम का उपयोग अचार, चटनी, अमचूर, पना, फाँके आदि बनाने के लिये किया जाता है। पका आम को फाँके, आम गूदा, रस, स्क्वैश, अमरस, जैम, मीठी फाँके आदि बनाने में प्रयुक्त किया जाता है। भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान ने आम के प्रसंस्करण को बढ़ावा देने के लिये दो मोबाइल ऐप विकसित किये हैं। कच्चे आम के उत्पाद संबंधी ऐप में विभिन्न प्रकार के अचार जैसे तेल का अचार, बिना तेल के हींग का अचार, हींग का मीठा अचार, आम के लच्छों का मीठा अचार, पना एवं अमचूर बनाने की विधियाँ दी गयी हैं। पके आम के उत्पाद ऐप में पके आम से गूदा, स्क्वैश, जैम तथा सिरप में संरक्षित फाँकें, चटनी तथा आम पापड़ बनाने की विधियाँ दी गयी हैं।

हिंदी भाषी लोगों द्वारा इस ऐप का उपयोग किया जा सकता है। इन ऐप में चित्रों एवं वर्णो के अतिरिक्त वाणी (ऑडियो) का भी उपयोग किया गया है। अतः यह दृष्टि बाधित अथवा अशिक्षित लोगों के लिये भी समान रूप से उपयोगी है। दी गयी विधियों को दीर्घ अवधि के दौरान संस्थान में मानकीकृत किया गया है और आसानी से वृहत स्तर पर किया जा सकता है।

फलों को उत्पादों में परिवर्तित कर साल भर उपभोग के लिये शेल्फ पर रखा जाता है। ऐप घरेलू छोटे और बड़े स्तर पर कच्चे और परिपक्व आम उत्पादों को विकसित करने में लोगों की मदद करेगा।

दोनों ऐप को गूगल प्ले स्टोर से डाउनलोड किया जा सकता है।

1. कच्चा आम उत्पाद–एन्ड्रॉयड ऐप ऑन गूगल प्ले
   Raw Mango Product - Andriod App on Google Play
   play.google.com
2. पका आम उत्पाद–एन्ड्रॉयड ऐप ऑन गूगल प्ले
   Ripe Mango Product - Andriod App on Google Play
   play.google.com

आम संसाधित उत्पादों की सूक्ष्म जैविक सुरक्षा

आम के फल के उत्पादों में सूक्ष्म जीव मुख्यतः फल, बर्तन या मशीनों आदि से आते हैं। अतः तैयार आम उत्पाद

[1]प्रभागाध्यक्ष, [2]मुख्य तककनीकी अधिकारी एवं [3]वरिष्ठ वैज्ञानिक

की सूक्ष्म जैविक गुणवत्ता प्रसंस्कृत फलों, प्रसंस्करण यंत्रों तथा बर्तनों की सफाई पर निर्भर करती है। आम की सतह पर सूक्ष्म जीवों की संख्या, फल के स्वास्थ्य तथा मौसम से प्रभावित होते हैं। सूखे ठंडे मौसम की अपेक्षा गर्म आर्द्र वातावरण सूक्ष्म जीवों के पनपने में अधिक सहायक होते हैं। स्वस्थ आम में सतही सूक्ष्म जीव बाहरी त्वचा अर्थात छिलके तक सीमित रहते हैं जबकि चोट ग्रस्त अथवा सड़े गले अस्वस्थ आम में इसकी भारी मात्रा गूदे में भी पनप जाती है। हार्वेस्टर से तोड़े गये आम की अपेक्षा हाथ से तोड़े गये आम पर अधिक सूक्ष्म जीव देखे जाते हैं। अपर्याप्त रूप से साफ किये गये फलों, प्रसंस्करण संयत्रों तथा बर्तनों के छिद्रों में फल पदार्थों के अपशिष्ट लगे रह जाते हैं जिन पर सूक्ष्म जीव तेजी से पनपते हैं तथा प्रसंस्करण के दौरान उत्पाद में मिल जाते हैं। कभी–कभी डिब्बाबंदी के समय डिब्बे अथवा बोतल के ढक्कन में छिद्र रह जाने के कारण हवा अथवा प्रशीतलन जल में उपस्थित सूक्ष्म जीव उत्पाद में प्रवेश कर सकते हैं। डिब्बे मे संध्र के कारण अधिकतर जीवाणु ही पनपते हैं किन्तु विकृति आने की अवस्था में इसमें फफूँद तथा यीस्ट भी पनप सकते हैं।

आम उत्पादों की अम्लीय प्रकृति के कारण आम प्रसंस्करण उद्योग में यीस्ट तथा फफूँद इसकी मुख्य परेशानी के कारण हैं। आम उत्पादों में पाये जाने वाले प्रमुख यीस्ट *ब्रिटेनोमाइसिस, क्लोइकेरा, कैन्डीडा, टोरूलोपसिस* तथा *सेकेरोमाइसिस* हैं। आम उत्पादों में फल रस शर्करा तथा जल की मात्रा अधिक होने के कारण *सेकेरोमाइसिस सेरेविसी* के पनपने के लिये यह सबसे उपयुक्त स्रोत हैं। यह यीस्ट, फल रसों में पनप कर दुर्गंध, गैस, गंदलापन तथा अल्कोहलिक गंध पैदा करते हैं तथा आम रसों की शर्करा को खा जाते हैं। आम उत्पादों को विभिन्न परिरक्षकों जैसे सल्फर डाइऑक्साइड, सोर्बिक अम्ल, बैन्जोइक अम्ल इत्यादि की सहायता से स्थायित्व प्रदान किया जाता है। लेकिन परिरक्षकरोधी फफूँद तथा यीस्ट जैसे *सैकेरोमाइसिस राक्साई, सैकेरोमाइसिस बैलाई, हैन्साबुला, पिकशिया* तथा *पेनीसीलियम* की कुछ प्रजातियाँ परिरक्षित पदार्थों को खराब करने की क्षमता रखते हैं। कभी–कभी रस भरने अथवा पास्चुरीकरण के दौरान मरूद्भिद (जीरोफिलिक) प्रकार की फफूँद आ जाती है। यह सूक्ष्म जीव कम जल गतिविधि तथा कम पी.एच. मान वाले आम उत्पादों पर पनप कर उन्हे दुर्गंधयुक्त कर देते हैं। कभी–कभी फफूँद विष भी उत्पन्न करते हैं। डिब्बाबंद पास्चुरीकृत उत्पादों को खराब करने वाली फफूँद में *बिस्सोक्लेमिस फलवा* तथा *नियोसारटोरिया फिशेराई* के नाम प्रमुख हैं। आम उत्पादों के कुछ संघटक इन बीजाणुओं की तापरोधी क्षमता को प्रभावित करते हैं।

सूक्ष्म जीवों से कैसे करें बचाव?

सूक्ष्म जीवों से बचाव के लिये आवश्यक है कि अच्छी उत्पादन प्रक्रियाओं के दौरान नियंत्रण नियमों का कठोरतापूर्वक पालन किया जाये तथा सूक्ष्म जीवों के संक्रमण को रोकने के लिये संवेदनशील प्रक्रियाओं को चिह्नित कर उन पर विशेष ध्यान दिया जाये। अतः आवश्यक है कि फल स्वस्थ हों, सड़े गले चोटग्रस्त फल बाकी फलों से शीध्रता से अलग किये जायें। फलों की रोगाणुनाशक द्रवों से धुलाई करने से सूक्ष्म जीवों की संख्या में भारी कमी आती है। गूदा बनाने, फाँकें काटने आदि प्रक्रियाओं में सूक्ष्म जीवों की संख्या में वृद्धि होती है। अतः जहाँ तक संभव हो स्टेनलेस स्टील के चाकू, बर्तन, गूदा निकालने वाली मशीनें, फल छीलने वाले मनुष्यों के हाथ आदि पूरी तरह से सूक्ष्म जीव रहित होने चाहिए। फल प्रसंस्करण के दौरान फैक्टरी में दस्ताने, बालों की जाली तथा गम बूट अनिवार्य रूप से होने चाहिए। पूरी मशीन की हर प्रसंस्करण के उपरांत नियमित सफाई करनी चाहिए। जहाँ तक संभव हो मशीनों इत्यादि में दरारें, छेद आदि (जिनमें फल पदार्थ के फँसने की सम्भवना हो) नहीं होनी चाहिए। डिब्बाबंदी के समय ढक्कन ठीक से सील हो तथा डिब्बा कहीं से दबा नहीं होना चाहिए। गर्म–गर्म भरे गये डिब्बों को तुरंत ठंडे पानी में रखना चाहिए जिससे ताप रोधी सूक्ष्म जीवों का पनपने का उपयुक्त वातावरण नहीं मिल सके। प्रसंस्करण में उपयोग होने वाला पानी तथा प्रशीतलन जल उच्च कोटि का एवं जीवाणु रहित होना चाहिए। भंडारण के दौरान डिब्बों को ठंडे सूखे एवं साफ स्थान पर रखना चाहिए। डिब्बाबंदी अथवा पैकेटबन्दी के लिये प्रयोग होने वाले पदार्थ भी सूक्ष्म जीवी रहित होने चाहिए। प्रसंस्करण प्रक्षेत्र साफ एवं धूल रहित होना चाहिए। प्रसंस्करण के समय निकलने वाले फल अवशेष

तथा सड़े–गले फलों का निस्तारण कर देना चाहिए जिससे प्रसंस्करित पदार्थ में संक्रमण नहीं फैल पाये। सर्वाधिक आवश्यक है कि प्रसंस्करण करने वाले कर्मचारी सफाई के नियमों से भली–भाँति परिचित हों तथा वे सूक्ष्म जीवों के लिये संवेदशील प्रक्रियाओं में विशेष सावधानी बरतें जिससे अंतर्राष्ट्रीय गुणवत्तायुक्त फल उत्पाद तैयार हो सकें और भारत फल उत्पाद निर्यात में भी अग्रणी पंक्ति में स्थान बना पाये।

बहुपयोगी हैं आम अपशिष्ट

आधुनिकीकरण के इस युग में मानव ने प्रगति के नये आयामों को छुआ है। पहले जहाँ ताजे फलों एवं सब्जियाँ के प्रयोग पर बल दिया जाता था अब संसाधित खाद्य पदार्थ भी हमारी भोजन सूची का अभिन्न अंग बन गये हैं। हाल के वर्षों में फल प्रसंस्करण के क्षेत्र में काफी उन्नति हुई है। लेकिन उभरते प्रसंस्करण उद्योगों ने कुछ जटिलताओं को जन्म दिया है जिसमें से एक प्रमुख समस्या ठोस अपशिष्ट निस्तारण की है। आम के प्रसंस्करण जनित अपशिष्ट मुख्यतः छिलका तथा गुठली है जो कुल फल भार का 40 से 50 प्रतिशत तक होता है। सामान्यतः गुठली को बीज के रूप में प्रयोग किया जाता है जबकि छिलके को सीमित मात्रा में पशु चारों, खाद अथवा भूमि–भराव के रूप में प्रयोग किया जाता है। लेकिन काफी अधिक मात्रा में उत्पन्न ये अपशिष्ट प्रदूषण की समस्या को बढ़ाते हैं। इसके अतिरिक्त बढ़ती हुई जनसंख्या तथा घटते कृषि क्षेत्र को देखते हुए यह आवश्यक है कि फल के प्रत्येक भाग का उपयोग किया जाये। आम का छिलका तथा गुठली तोड़ने के उपरान्त प्राप्त गिरी विभिन्न उपयोगी तत्वों से भरपूर हैं। वैज्ञानिकों ने इन्हीं तत्वों का रासायनिक निष्कर्षण एवं किण्वीकरण कर विभिन्न उपयोगी पदार्थ प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की है जिनका विवरण निम्नानुसार है।

छिलका

रासायनिक निष्कर्षण द्वारा आम के छिलके से रेशा तथा पैक्टिन प्राप्त किया जा सकता है। छिलके से रेशे को प्राप्त करने के लिये उसे क्षार से उपचारित कर क्रमशः हाइड्रोजन पर–ऑक्साइड एवं अल्कोहल में उबालते हैं। तत्पश्चात, अल्कोहल से धोने के बाद शुद्ध रेशा प्राप्त होता है। शुद्ध अवस्था में यह रेशा भोज्य पदार्थ जैसे बेकिंग उत्पाद, बाल आहार तथा भोजन के साथ लिये जाने वाले पेय का रेशा मूल्य बढ़ाने में प्रयुक्त होता है। आम के छिलके से प्राप्त उच्च गुणवत्तायुक्त पैक्टिन जैम, जैली, सलाद, दुग्ध पदार्थों आदि में वांछित गाढ़ापन तथा स्थायित्व लाने के लिये प्रयुक्त होता है। प्रसाधन तथा औषधि निर्माण उद्योग भी इसका उपयोग करते हैं।

किण्वीकरण विधि की सहायता से आम के छिलके से पैक्टीनेज तथा सैलूलेज विकर (एंजाइम) प्राप्त किये जा सकते हैं। वर्तमान जैविक प्रौद्योगिकी के युग में विकर विशेष महत्व रखते हैं। ये जैविक क्रियाओं द्वारा उत्पन्न होते हैं तथा जैविक उत्प्रेरक का कार्य करते हैं। पैक्टीनेज तथा सैलूलेज विकर का फल प्रसंस्करण उद्योग में विशेष उपयोग है। भारत में लगभग 20 करोड़ रुपये के विकर का प्रयोग होता है। लेकिन *पेपेन* को छोड़ कर अधिकतर विकर विदेशों से आयात किये जाते हैं जिसमें भारी विदेशी मुद्रा खर्च होती है। यदि फल प्रसंस्करण उद्योग द्वारा उत्पन्न अपशिष्ट से विकर उत्पन्न कर लिये जायें तो विकर की उत्पादन लागत में काफी कमी आयेगी क्योंकि अपशिष्ट लगभग नगण्य कीमत पर उपलब्ध होते हैं। इस तरह से प्राप्त विकर को फल उद्योग स्वयं के लिये प्रयुक्त कर फल उत्पाद की लागत में कमी ला सकता है। साथ ही, अन्य उद्योगों को विकर बेच कर लाभ भी कमा सकता है। इस प्रकार प्रदूषण की समस्या में कुछ हद तक कमी भी लायी जा सकती है। विकर निष्कर्षण के उपरांत बचे हुए अपशिष्ट को प्रोटीनयुक्त खाद्य के तौर पर पशु आहार में भी मिलाया जा सकता है।

आम के छिलके से किण्वीकरण द्वारा साइट्रिक अम्ल उत्पन्न किया जा सकता है जिसे विभिन्न खाद्य उद्योगों में प्रयोग में लाया जाता हैं। आम के छिलके से उत्तम गुणवत्ता का सिरका बनाया जा सकता है जो रूप तथा सुगंध में आम के गूदे से तैयार सिरके के समकक्ष होता है। आम के छिलकों का उपयोग पशु–आहार के रूप में भी होता है। छिलके में प्रोटीन की मात्रा बहुत कम होती है। इसे एस्परजिल्स नाइजर (फफूँद) अथवा बेकर यीस्ट द्वारा वातापेक्षी ठोस किण्वीकरण विधि से पाँच गुना तक बढ़ाया जा सकता। जिससे आहार अधिक पौष्टिक हो जाता है। आम के छिलके का प्रयोग खुम्बी उत्पादन में

किया जा सकता है।

छिलकों को इस्तेमाल करने की सबसे आसान विधि है जिनका खाद बनाना है। लेकिन आम के छिलकों के साथ यह काम उतना सरल नहीं है। आम प्रसंस्करण उद्योगों से प्राप्त जानकारी के अनुसार पूरे वर्ष पड़ा रहने के उपरांत भी छिलका पूरी तरह से नहीं सड़ता है। इस प्रक्रिया को तेज करने के लिये यदि आम के छिलकों में गोबर मिलाया जाय तो एक महीने में छिलका सड़ कर उच्च कोटि की खाद में परिवर्तित हो जाता है। आम के छिलके से बायो गैस का उत्पादन भी किया जा सकता है।

गुठली

प्रसंस्करण से प्राप्त गुठली पर आम का कुछ गूदा लगा रह जाता है। इस गूदे से किण्वीकरण द्वारा बेकर यीस्ट उत्पन्न किया जा सकता है जो बेकिंग उद्योग में अपनी आमयुक्त सुगंध के कारण लोकप्रिय हो सकता है। इसके अतिरिक्त इसे सस्ते मक्का अथवा चावल के आटे में मिला कर मछली अथवा मुर्गी के प्रोटीनयुक्त आहार के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

आम की गुठली को तोड़ने से गिरी प्राप्त होती है जिसमें में स्टार्च बहुतायत (लगभग 58 प्रतिशत) में होता है। इसे रासायनिक निष्कर्षण द्वारा शुद्ध कर आटे के रूप में अथवा औषधि निर्माण में लाया जाता है। आम की गिरी में तेल काफी मात्रा में पाया गया है। यह तेल खाद्य, सुगंध, रबर, प्रसाधन, पेन्ट, कन्फेक्शनरी, आइसक्रीम, कीटनाशक, कपड़ा आदि उद्योगों में प्रयुक्त होता है। गिरी से वसा तथा तेल निकालने के पश्चात जो अवशेष बचता है उसे जानवरों के आहार के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। गिरी से किण्वीकरण द्वारा एमाइलेज विकर का उत्पादन किया जा सकता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अनुपयोगी आम अपशिष्ट से कितने उपयोगी पदार्थ प्राप्त किये जा सकते है। इस दिशा में शोध कार्य चल रहे हैं लेकिन जरूरत इस बात है कि इन परियोजनाओं को फल प्रसंस्करण उद्योग की भौतिक तथा वित्तीय सहायता प्राप्त हो जिससे इन उपलब्धियों को समस्या ग्रस्त स्थानों पर ही जाँच कर इनकी व्यवहार्यता को परखा जा सके।

पण्डित दीनदयाल उपाध्याय

दीनदयाल उपाध्याय का जन्म 25 सितम्बर 1916 को मथुरा जिले के नगला चन्द्रभान ग्राम में हुआ था।

उपाध्याय जी ने पिलानी, आगरा तथा प्रयाग में शिक्षा प्राप्त की। बी.एससी. बी.टी. करने के बाद भी उन्होंने नौकरी नहीं की। छात्र जीवन से ही वे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सक्रिय कार्यकर्ता हो गये थे। अतः कालेज छोड़ने के तुरन्त बाद वे उक्त संस्था के प्रचारक बन गये और एकनिष्ठ भाव से संघ का संगठन कार्य करने लगे। उपाध्याय जी नितान्त सरल और सौम्य स्वभाव के व्यक्ति थे।

सन 1951 ई० में अखिल भारतीय जनसंघ का निर्माण होने पर वे उसके संगठन मन्त्री बनाये गये। दो वर्ष बाद सन् 1953 ई० में उपाध्याय जी अखिल भारतीय जनसंघ के महामन्त्री निर्वाचित हुए और लगभग 15 वर्ष तक इस पद पर रहकर उन्होंने अपने दल की अमूल्य सेवा की। कालीकट अधिवेशन (दिसम्बर 1967) में वे अखिल भारतीय जनसंघ के अध्यक्ष निर्वाचित हुए। 11 फरवरी 1968 की रात में रेलयात्रा के दौरान मुगलसराय के आसपास उनकी हत्या कर दी गयी।

विलक्षण बुद्धि, सरल व्यक्तित्व एवं नेतृत्व के अनगिनत गुणों के स्वामी भारतीय राजनीतिक क्षितिज के इस प्रकाशमान सूर्य ने भारतवर्ष में समतामूलक राजनीतिक विचारधारा का प्रचार एवं प्रोत्साहन करते हुए सिर्फ 52 साल की उम्र में अपने प्राण राष्ट्र को समर्पित कर दिए। आकषर्क व्यक्तित्व के स्वामी दीनदयालजी उच्च–कोटि के दार्शनिक थे किसी प्रकार का भौतिक माया–मोह उन्हें छू तक नहीं सका।

सूक्ष्म जीवों का बागवानी एवं कृषि में योगदान

गोविन्द कुमार[1], राजकुमार[2], प्राणनाथ बर्मन[3], घनश्याम पाण्डेय[4] एवं शैलेन्द्र राजन[5]
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

बागवानी विज्ञान की वह शाखा है जिसमें फल, फूल और दूसरे पौधों को उगाने से लेकर विपणन तक का अध्ययन किया जाता है। विश्व एवं भारत की बढ़ती जनसंख्या को देखते हुए सन 2050 तक खाद्यान उत्पादन का लक्ष्य दुगुना करने की आवश्यकता है और साथ ही रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों पर निर्भरता को कम करना एक महत्वपूर्ण लक्ष्य है।

इस लक्ष्य को देखते हुए पौधों एवं सूक्ष्मजीवों के बीच लाभदायक संबंधों का उपयोग आवश्यक हो जाता है। सूक्ष्मजीवों द्वारा की गयी लाभकारी गतिविधियाँ जैसे, नाइट्रोजन स्थिरीकरण, फॉस्फोरस, पोटैशियम, जिंक आदि की घुलनशीलता सिडरोफोर उत्पादन (लोहा लेने हेतु), अमोनिया उत्पादन, हाइड्रोजन सायनाइड (एच.सी.एन.) उत्पादन से पौधों को प्रमुख रूप से पोषक तत्वों को उपलब्ध कराया जाता है। प्रमुख पोषक तत्वों के संकलन एवं अंतर्ग्रहण के अतिरिक्त ये सूक्ष्मजीव वृक्ष एवं पौधों की शाखा एवं जड़ के विकास में सहायक होते हैं तथा रोग नियंत्रण, बेहतर मृदा संरचना आदि कारणों की वजह से अधिक महत्वपूर्ण हो जाते हैं।

सामान्यतः बागवानी एवं कृषि में प्रयुक्त होने वाले जीवों में प्रमुख रूप से राइजोबियम, माइकोराईजा, ऐजोटोबैक्टर, एजोस्पीरिलम बैसिलस, सूडोमोनास, ट्राइकोडर्मा, स्ट्रैप्टोमासीज आदि सूक्ष्मजीवों की प्रजातियाँ शामिल हैं।

ये सभी प्रजातियाँ मृदा की पोषण गुणवत्ता को बढ़ाते हैं। यह जीवाणु वायुमंडलीय नाइट्रोजन को स्थिर कर इसे कार्बनिक रूप में परिवर्तित कर देते हैं जिससे पादप इसका प्रयोग पोषकों तत्वों के रूप में करते हैं। सूक्ष्मजीवों एवं पौधों के बीच लाभदायक संबंधों को देखते हुए भारत में सर्वप्रथम श्री एन.वी. जोशी द्वारा लेग्यूम राइजोबियम सहजीविता का अध्ययन किया गया।

[1,2,3]वैज्ञानिक, [4]प्रधान वैज्ञानिक एवं [5]निदेशक

अलग–अलग प्रकार के सूक्ष्मजीव भिन्न–भिन्न तरीकों से मृदा की उर्वरकता बढ़ाकर इन पोषक तत्वों को पौधों तक पहुँचाते हैं। विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म जीव एवं उनके द्वारा किये जाने वाली प्रक्रियाएँ निम्नानुसार है।

1. फॉस्फेट घुलनशील करने वाले सूक्ष्म जीव

यह सूक्ष्म जीवों का एक समूह है जो मृदा में उपस्थित अघुलनशील फॉस्फेट को फास्फटेस एन्जाइम और अम्लों द्वारा घुलनशील बनाकर मृदा की उर्वरकता को बढ़ाने के साथ उन्हें पौधों तक भी पहुँचाते हैं।

क्षारीय मृदा में फास्फेट की उपलब्धता कम होती है। इस स्थिति में फॉस्फेट घुलनशील सूक्ष्म जीवों के साथ रॉक फॉस्फेट का इस्तेमाल कर फॉस्फेट की आवश्यकता को 50 प्रतिशत तक कम किया जा सकता है। फॉस्फेट को घुलनशील करने वाले सूक्ष्म जीवों का कल्चर बाजार में पी.एस.बी. (फॉस्फेट सॉलुबिलाजिंग बैक्टीरिया) के नाम से मिलता है। इसके इस्तेमाल करने के रासायनिक खाद का उपयोग कम किया जा सकता है और साथ ही बिना रासायनिक खाद के प्रदूषण से फसलों का उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ायी जा सकती है।

फॉस्फेट घुलनशील सूक्ष्म जीवों के इस्तेमाल से फॉस्फोरस तत्व को पौधे आसानी से ग्रहण कर लेते हैं। इसके उपयोग से 10–20 प्रतिशत उत्पादन वृद्धि होती है और साथ–ही–साथ मिट्टी में अनुपलब्ध फॉस्फोरस के उपलब्ध अवस्था में आ जाने से 30–40 प्रतिशत फॉस्फोरस उर्वरक की बचत की जा सकती है।

2. ऐजोटोबैक्टर

ऐजोटोबैक्टर बिना किसी सहजीवन के स्वतंत्र रूप से रहने वाला अतिसूक्ष्म परपोषी जीवाणु हैं जो नाइट्रोजन को मुक्त रूप से स्थिरीकृत करते हैं। यह सामान्यतया वृक्षों एवं पौधों के राइजोस्फियर में पाया जाता है। यह नाइट्रोजन स्थिरीकरण के साथ–साथ वृक्षों एवं पौधों को वृद्धिकारक

हार्मोन जैस इंडोल एसिटिक एसिड एवं जिब्रेलिक अम्ल को अपने स्राव द्वारा उपलब्ध कराते हैं। ऐजोटोबैक्टर के उपयोग से बीजों के अंकुरण में अच्छा प्रभाव पड़ता है एवं बहुत सारी बीमारियों की भी रोकथाम होती है। ऐजोटोबैक्टर का प्रयोग फलों, सब्जियों, फसल, कपास, गन्ना आदि में मुख्य रूप से किया जाता है। इसका इस्तेमाल 2–3 मिलीलीटर प्रति पौधा नर्सरी में भी किया जाता है।

3. एजोस्पाइरिलम

एजोस्पाइरिलम नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने के साथ–साथ पादप हार्मोन्स का भी स्राव करते हैं जो पेड़ पौधों के अंकुरण एवं वृद्धि के लिये बहुत लाभकारी होते हैं।

4. राइजोबियम

राइजोबियम एक सहजीवी नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले सूक्ष्म जीव गाँठें (रूट नोड्यूल) बनाकर होता है जो नाइट्रोजन को अमोनिया में परिवर्तित करता है जो पौधों के द्वारा प्रोटीन, विटामिन एवं अन्य प्रकार के यौगिक बनाने में उपयोग होता है।

राइजोबियम लगभग 40–250 किलोग्राम प्रति वर्ष स्थिरीकरण कर सकते हैं। *राइजोबियम लैग्यूमिनासेरम, आर. जेपोनिकम, आर. ल्यूपिन, आर. मेलीलोटि, आर. फेसिओलि, आर. ट्राईफोली* इत्यादि राइजोबियम की मुख्य प्रजातियाँ हैं।

5. एक्टिनोराईजा

एक्टिनोराईजा मुख्य रूप से अदलहनी वृक्ष की जड़ों में गाँठे बनाकर नाइट्रोजन स्थिरीकरण करते है। फ्रेंकिया इसका मुख्य उदाहरण है जो 280 से ज्यादा वृहत जातियों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण करते हैं।

कुछ महत्वपूर्ण सूक्ष्म जीवों का विभिन्न फसलों में उपयोग नीचे दी गयी तालिका द्वारा समझा जा सकता है।

क्रम सं.	सूक्ष्मजीव	फसल	उपयोग विधि	उपयोग की जाने वाली मात्रा
1.	राजोबियम	दाल, चना, सोयाबीन, मसूर, गेहूँ आदि	बीज उपचार	200 मिली लीटर प्रति एकड़
2.	ऐजोटोबैक्टर	फल (आम, अमरूद), चारा, तंबाकू, एगौफारेस्ट्री आदि	मृदा उपचार	2–3 मिली लीटर प्रति पौधा नर्सरी में
3.	एजोस्पाईरिलम 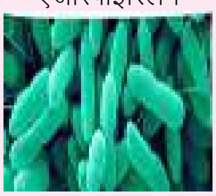	ज्यादातर उपोष्ण एवं शीतोष्ण पेड़ पौधे	बीज उपचार	200 मिली लीटर प्रति एकड़
4.	अर्बसकुलर माईकोराईजा कवक	ज्यादातर उपोष्ण एवं शीतोष्ण पेड़ पौधे	जड़, मृदा एवं बीज उपचार	––

6. अर्बसकुलर माईकोराईजा कवक (ए.एम. कवक)

अर्बसकुलर माइकोराईजा कवक का मिट्टी के पोषक तत्वों को निर्धारण करने में महत्वपूर्ण योगदान होता है। यह एक सहजीवी (लाचार) जीवाणु है जो उपोष्ण एवं शीतोष्ण सभी प्रकार के वृक्षों एवं पौधों में ज्यादातर पाया जाता है। माइकोराईजा कवक मुख्य रूप से दो ग्रुप में विभाजित होते हैं।

1. एंडो मारकोराईजा

यह जड़ों के भीतर कार्टिकल सेल में रहते हैं और सेल के अन्दर ही बढ़ते हैं। इनका विकास ज्यादातर व्यापक प्रसार खेती की हुई मिट्टी में होता है।

2. एक्टोमाईलोराईजा

यह मुख्य रूप से वृक्षों की जड़ों में पाये जाते हैं। शीतोष्ण पेड़ों जैसे बीच ओक, देवदार का एक्टोमाइकोराईजा के बिना बने रहना मुश्किल होता है। अर्वसकुलर माईकोराईजा का कार्बन, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस चक्र में भी महत्वपूर्ण योगदान होता है। इनके उपयोग के विभिन्न लाभ निम्नलिखित रूप से होते हैं।

(क) मुख्य पोषक तत्वों जैसे फॉस्फोरस, जिंक, कॉपर आदि के अवशोषण में।

(ख) पोषक तत्वों को मिट्टी से पौधे की जड़ों तक पहुँचाने में।

(ग) ऐंटीबॉयोटिक स्राव द्वारा पादप रोगजनकों से बचाव में।

(घ) पादप वृद्धि होर्मोन्स जैसे साइटोकाइनिन एवं जीबरेलिन के उत्पादन को बढ़ाने में।

(ङ) मिट्टी, पौधों एवं पानी के बीच उचित तालमेल बनाने में।

उपरोक्त सभी सूक्ष्म जीवों की कार्यविधि प्रवाह चार्ट द्वारा समझा जा सकता है।

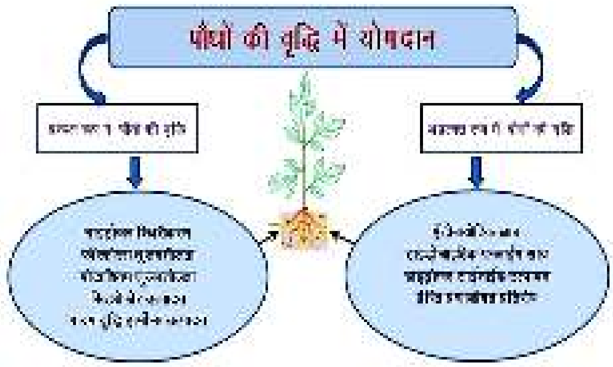

सूक्ष्म जीवों के उपयोग से लाभ

1. इनके उपयोग से लगभग 10–15 प्रतिशत उपज में वृद्धि होती है।
2. पौधों में अंकुरण शीघ्र होता है।
3. जमीन की उर्वराशक्ति बढ़ाने के साथ उर्वराशक्ति को दीर्घ समय तक बनाये रखते हैं।
4. इनके उपयोग से रासायनिक खादों के उपयोग को कम किया जा सकता है।

सूक्ष्म जीवों के उपयोग में सावधानियाँ

1. फसल के अनुसार सूक्ष्म जीवों का उपयोग।
2. उपयुक्त समय और उचित मात्रा का प्रयोग करना।

पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस (कांग्रेस घास, गाजरघास) कैसे खत्म करें?

- **देखते ही जड़ समेत उखाड़कर नष्ट करें।**
- **पत्ती खाने वाले मैक्सिकन बीटल (जाइगोग्रामा बाइकोलोराटा) नाम के कीट शत्रु को इस पर छोड़े।**
- **गाजरघास के साथ अन्य वनस्पतियों को भी नष्ट करने के लिए ग्लाइफोसेट (1.0 से 1.5 प्रतिशत) और घास कुल की वनस्पतियों को बचाते हुए केवल गाजरघास को नष्ट करने के लिए मेट्रिब्युजिन (0.3 से 0.5 प्रतिशत) या 2, 4–डी (1 प्रतिशत) नाम के रसायनों का प्रयोग करें।**

पोषण सुरक्षा के लिये फल–सब्जी भंडारण एवं परिरक्षण में महिलाओं की भूमिका

आभा सिंह[1], भारती किल्लाड़ी[2], पवन सिंह गुर्जर[3] एवं डी.के. शुक्ल[4]
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

प्राचीनकाल से ही अनाज, फल एवं सब्जी के उत्पादन, भंडारण एवं परिरक्षण में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही है तथा वे इसे बखूबी निभाती भी रही हैं। फल–सब्जी के उत्पादन में हमारा देश विश्व में दूसरे स्थान पर है, परंतु कटाई उपरांत उपभोक्ताओं तक पहुँचते–पहुँचते लगभग 25–40 प्रतिशत उत्पाद उचित रख–रखाव के अभाव में खराब हो जाता है। इतने उत्पादन के बावजूद प्रति व्यक्ति प्रतिदिन फल एवं सब्जी की उपलब्धता बहुत कम है जो पोषण असुरक्षा की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण घटक है। प्रति व्यक्ति फल–सब्जी की उपलब्धता में कमी के अनेक कारण हैं जिनमें जनसंख्या में लगातार बढ़ोत्तरी, फल एवं सब्जी को सही समय पर सही तरीके से नहीं तोड़ना, भंडारण क्षमता कम होना, परिवहन की उचित व्यवस्था नहीं होना, परिरक्षण के प्रति ज्ञान एवं जागरूकता का अभाव आदि प्रमुख हैं।

पूरे विश्व की आधी आबादी महिलाओं की है तथा प्राचीनकाल से ही नारी का योगदान उत्पादन, भंडारण एवं संरक्षण में सराहनीय रहा है। हमारे देश में पूरे परिवार के लिये भोजन प्रबंधन, पोषण, रख–रखाव तथा भंडारण की पूरी जिम्मेदारी महिलाओं पर ही होती है। यदि घर की महिला जागरूक हो तो वह भोजन को संतुलित कर पूरे परिवार के पोषण स्तर को ठीक रख सकती है तथा भोजन में विविधता लाकर उसे आकर्षक बना सकती है। अनाज एवं दाल के अतिरिक्त, फल एवं सब्जियों का भोजन में महत्वपूर्ण स्थान है जिनसे विटामिन एवं खनिज लवण के साथ–साथ आवश्यक अमीनों एसिड, कार्बोहाइड्रेट तथा प्रोटीन भी प्रचुर मात्रा में प्राप्त होते हैं जो विभिन्न बीमारियों से हमारी रक्षा करते हैं। फल एवं सब्जियों को हम ताजी अवस्था में या उनके परिरक्षित रूप में शामिल कर उनकी आवश्यकता की पूर्ति कर सकते हैं।

[1,2]प्रधान वैज्ञानिक, [3]वैज्ञानिक एवं [4]सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी

फल एवं सब्जियों में पानी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है जिसके कारण तुड़ाई के बाद ये अतिशीघ्र खराब हो जाते हैं। देश की कुल फल–सब्जी उत्पादन का 25–40 प्रतिशत भाग खराब हो जाता है। हमारे देश में कुल उत्पादन का केवल 10–15 प्रतिशत भाग ही परिरक्षित किया जाता है जबकि अन्य विकसित देशों में यह प्रतिशत 40–80 तक है। यदि महिलाएँ इस ओर जागरूक हो जायें तो वे भंडारण एवं परिरक्षण की नवीनतम तकनीकों का उपयोग कर फल एवं सब्जियों की गुणवत्ता बनाये रखते हुए पूरे वर्ष उनका उपयोग कर सकते हैं।

भंडारण

हमारे देश में अनाज, दाल, फल–सब्जियों इत्यादि के भंडारण की पूरी जिम्मेदारी मुख्य रूप से महिलाओं की ही होती है। यदि गृह महिला थोड़ी जागरूक हो तो भंडारण की आधुनिक तकनीक अपना कर वह अनाज, फल एवं सब्जियों को काफी समय तक अच्छी अवस्था में रख सकती है। फल एवं सब्जियों की गुणवत्ता बनाये रखने के लिये और उन्हें ज्यादा समय तक उपयोग में लाने के लिये इनका उचित भंडारण अत्यन्त आवश्यक है। फल–सब्जियों को हमेशा सुबह या शाम के समय ही तोड़ना अच्छा रहता है क्योंकि इस समय तोड़ने से इनके अंदर क्षेत्रीय ऊष्मा कम होती है जिसके कारण इन्हें ज्यादा समय तक ताजी अवस्था में रखा जा सकता है। कभी–कभी फल एवं सब्जियों को एक साथ तोड़ना जरूरी हो जाता है क्योंकि ये एक साथ तैयार हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में उन्हें सामान्य कमरे के तापमान पर खुले हवादार स्थान पर फैलाकर, पानी छिड़कते रहने से उन्हें 2–3 दिन तक ताजी अवस्था में रखा जा सकता है। फल सब्जियों को तोड़ने के बाद ज्यादा समय तक ताजा बनाये रखने के लिये निम्नलिखित उपाय करने चाहिए।

- भंडारण के लिये उन्हीं फल–सब्जियों का चयन करें

जिन पर कीट, बीमारी, चोट, खरोंच तथा कटाव नहीं हो।

- पत्तेदार सब्जियों को काटने या तोड़ने के उपरांत गीले कपड़े में लपेट कर रखें तथा उन पर बीच–बीच में पानी छिड़कते रहें। पानी झड़ जाने के बाद अच्छी किस्म की पॉलिथीन बैग में पैक कर रेफ्रिजरेटर में रखें।
- तुड़ाई के उपरांत फल–सब्जियों को हवादार कमरे में रख कर उनकी क्षेत्रीय ऊष्मा खत्म होने के उपरांत ही भंडारण करना चाहिए।
- प्याज और आलू को ठंडे कमरे में बालू के ऊपर फैलाकर रखने से उनकी भंडारण क्षमता बढ़ जाती है।
- भंडारण क्षमता बढ़ाने के लिये कुछ अहानिकारक रसायनों का प्रयोग भी किया जा सकता है।

परिरक्षण

परिरक्षण द्वारा फल एवं सब्जियों को उनके ऐसे परिवर्तित रूप में या पदार्थ बनाकर रखते हैं जिससे उन्हें अधिक समय तक उपयोग में लाया जा सके और बेमौसम उनका उपयोग कर पोषक तत्वों की प्राप्ति की जा सके। फल एवं सब्जियों से जैम–जैली, सॉस एवं प्यूरी, मुरब्बा, कैंडी, अचार, स्क्वैश, शर्बत, चिप्स, सब्जी सुखाना, जूस, गूदा आदि का उत्पाद के रूप में परिरक्षण आसानी से किया जा सकता है। परिरक्षण को गृह एवं लघु उद्योग के रूप में अपना कर महिलाएँ घरेलू स्तर पर धन अर्जित भी कर सकती हैं।

हमारे देश में भंडारण एवं परिरक्षण की अल्पमूल्य की नवीनतम तकनीकों का अभाव है और जो तकनीकें उपलब्ध हैं उनका प्रचार–प्रसार बहुत ही कम हुआ है और घरेलू एवं ग्रामीण स्तर पर उनका बहुत ही अभाव है। सरकार एवं विभिन्न स्वयंसेवी संस्थाओं को इस दिशा में प्रयास करना होगा जिससे फल–सब्जियों को इतने बड़े स्तर पर खराब होने से रोका जा सके और प्रतिव्यक्ति, प्रतिदिन की फल–सब्जी की उपलबधता बढ़ाई जा सके। महिलाओं को इस ओर विशेष रूप से जागरूक करने की जरूरत है।

मंगलयान

भारत का प्रथम मंगल अभियान भारत की प्रथम ग्रहों के बीच का मिशन है। वस्तुतः यह भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन की एक महत्वाकांक्षी अन्तरिक्ष परियोजना है। इस परियोजना के अन्तर्गत 5 नवम्बर 2013 को 2 बजकर 38 मिनट पर मंगल ग्रह की परिक्रमा करने हेतु छोड़ा गया एक उपग्रह आंध्र प्रदेश के श्रीहरिकोटा स्थित सतीश धवन अंतरिक्ष केंद्र से ध्रुवीय उपग्रह प्रक्षेपण यान (पीएसएलवी सी.25) सफलतापूर्वक छोड़ा गया।

इसके साथ ही भारत भी अब उन देशों में शामिल हो गया है जिन्होंने मंगल पर अपने यान भेजे हैं। वैसे अब तक मंगल को जानने के लिये शुरू किये गये दो तिहाई अभियान असफल भी रहे हैं परन्तु 24 सितंबर 2014 को मंगल पर पहुँचने के साथ ही भारत विश्व में अपने प्रथम प्रयास में ही सफल होने वाला पहला देश तथा सोवियत रूस, नासा और यूरोपीय अंतरिक्ष एजेंसी के बाद दुनिया का चौथा देश बन गया है। इसके अतिरिक्त ये मंगल पर भेजा गया सबसे सस्ता मिशन भी है। भारत एशिया का भी ऐसा करने वाला प्रथम पहला देश बन गया। क्योंकि इससे पहले चीन और जापान अपने मंगल अभियान में असफल रहे थे।

वस्तुतः यह एक प्रौद्योगिकी प्रदर्शन परियोजना है जिसका लक्ष्य अन्तरग्रहीय अन्तरिक्ष मिशनों के लिये आवश्यक डिजाइन, नियोजन, प्रबन्धन तथा क्रियान्वयन का विकास करना है। ऑर्बिटर अपने पांच उपकरणों के साथ मंगल की परिक्रमा करता रहेगा तथा वैज्ञानिक उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए आंकड़े व तस्वीरें पृथ्वी पर भेजेगा। अंतरिक्ष यान पर वर्तमान में इसरो टेलीमेट्री, ट्रैकिंग और कमांड नेटवर्क (इस्ट्रैक), बंगलौर के अंतरिक्ष यान नियंत्रण केंद्र से भारतीय डीप स्पेस नेटवर्क एंटीना की सहायता से नजर रखी जा रही है।

प्रतिष्ठित 'टाइम' पत्रिका ने मंगलयान को 2014 के सर्वश्रेष्ठ आविष्कारों में शामिल किया।

स्वास्थ्य गुणों से परिपूर्ण हैं फल आधारित अल्कोहलिक पेय

नीलिमा गर्ग[1] एवं संजय कुमार[2]
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

स्वास्थ्य के प्रति जनसाधारण में बढ़ती जागरूकता के कारण विश्व में फलों एवं उनके उत्पादों का उपभोग दिन–प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। ऐसा फलों के अपने विशिष्ट सुगंध एवं स्वाद के साथ–साथ उनमें विद्यमान स्वास्थ्य गुणों के कारण हैं। इनमें कार्बोहाइड्रेट, विटामिन, खनिज तत्व तथा रेशा प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। इसी के कारण राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में प्रसंस्कृत उत्पादों की भरमार है। यही कारण है कि बाजार में विभिन्न प्रकार के फलों के गूदे, रस, पेय, जैम, जैली, अचार, मुरब्बा, कैंडी आदि प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं जबकि किण्वित उत्पाद अपेक्षाकृत काफी सीमित मात्रा में दिखायी देते हैं।

किण्वन भी फल संरक्षण की एक पारंपरिक तकनीक है जहाँ सैक्रोंमाइसिस सेरेविसी यीस्ट के उपयोग से फल पदार्थों को लंबी अवधि तक सुरक्षित रखा जा सकता है। अंगूर तथा सेब के किण्वित पेय पदार्थों के अतिरिक्त किसी अन्य फल के किण्वित पेय अभी तक बाजार में उपलब्ध नहीं हैं। इसी बात को ध्यान में रखते हुए भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ ने विभिन्न फलों के अल्कोहलयुक्त किण्वित पेय विकसित किये हैं जिनमें उन विशेष फलों की विशिष्ट सुगंध एवं रसायनिक गुण विद्यमान हैं। इन पेय पदार्थों की विशेषता यह है कि इनमें उच्च अल्कोहलयुक्त आसुत मादक पेयों की तुलना में अल्कोहल की मात्रा 4 से 12 प्रतिशत ही होती है तथा कम अल्कोहल के साथ–साथ फलों में विटामिन, खनिज तत्व तथा प्रति–ऑक्सीकारक पदार्थ भी मौजूद होते हैं जो शरीर को लाभ पहुँचाते हैं।

[1]प्रभागाध्यक्ष एवं [2]मुख्य तकनीकी अधिकारी

फलों के साइडर

साइडर कम अल्कोहल वाले पेय पदार्थ होते हैं जिनमें 4–5 प्रतिशत तक अल्कोहल होता है। ऐसे पेय को 'लेडीज वाइन' भी कहा जाता है क्योंकि ये स्वाद में हल्के मीठे एवं कम कसैले होते हैं। चूँकि साइडर फलों से निर्मित होते हैं, अतः इनमें फलीय सुगंध एवं मीठा–कसैला स्वाद होता है जो पुरुषों के साथ–साथ महिलाओं और युवाओं को भी अच्छा लगता है। संस्थान ने आम, अमरूद, बेल तथा आँवले के फलों से साइडर भी बनाये हैं।

कच्चे आम का साइडर

आम भारत का सबसे प्रमुख फल है। इसमें उत्तम किस्म का सुगंध एवं स्वाद होता है। कच्चे आम में प्रचुर मात्रा में अम्ल, विटामिन तथा खनिज तत्व विद्यमान होते हैं। कच्चा आम परंपरागत रूप से अचार, चटनी, खटाई, पाउडर, पन्ना, आदि बनाने के लिये प्रयुक्त होता है। संस्थान ने एक अर्ध–किण्वित, हल्के अल्कोहलयुक्त कच्चे आम की पेय का विकास किया है जिसमें पोषकीय तत्वों के साथ–साथ ताजगी प्रदान करने वाले गुण भी हैं। इस हल्के मीठे पेय में खटास तथा कसैलेपन का अच्छा सम्मिश्रण है। इसमें लगभग 4 प्रतिशत अल्कोहल, 17.7° ब्रिक्स कुल घुलनशील ठोस (टी.एस.एस.), 0.55 प्रतिशत

अम्ल तथा 7.3 मिलीग्राम/100 मिलीलीटर विटामिन 'सी' उपलब्ध होता है। यह एक नवीन उत्पाद है जिसकी बाजार में अच्छी माँग हो सकती है।

अमरूद का साइडर

अमरूद विटामिन 'सी' तथा पेक्टिन का प्रमुख स्रोत है। इसके अतिरिक्त इसमें कार्बोहाइड्रेट तथा खनिज तत्व भी प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। अमरूद को 'गरीबों का सेब' कहा जाता है क्योंकि इसकी भीनी सुगंध, उत्तम स्वाद तथा उच्च पोषक गुण सेब के स्तर के होते हैं। साथ ही यह सेब की तुलना में काफी कम कीमत में मिलता है। अमरूद कब्ज के लिये एक लाभदायक फल है। भारत में अमरूद की काफी पैदावार होने के बावजूद इसके प्रसंस्कृत उत्पाद काफी सीमित है। सामान्यतः अमरूद का उपयोग जैम, जैली, पेय, चीज आदि बनाने के लिये किया जाता है। संस्थान ने किण्वन तकनीक द्वारा अमरूद का साइडर बनाया है जो एक नवीन उत्पाद होने के साथ स्वाद एवं सुगंध से परिपूर्ण है। यह अत्यंत पोषक, पाचक तथा ताजगी एवं स्फूर्ति प्रदान करने वाला हल्का अल्कोहलयुक्त पेय है। इसमें 4 प्रतिशत अल्कोहल, 13° ब्रिक्स कुल घुलनशील ठोस (टी.एस.एस.), 0.45 प्रतिशत अम्ल तथा 33 मिलीग्राम/100 मिलीलीटर विटामिन 'सी' उपलब्ध होता है। इसके उत्पाद में अच्छी बाजारी क्षमता है।

आँवला का साइडर

आँवला के फलों में काफी पोषक एवं औषधीय महत्व होता है। प्राचीनकाल से ही आँवला का उपयोग विभिन्न प्रकार की आयुर्वेदिक दवाओं के निर्माण में होता आया है। पाचन संबंधी अनियमिताओं, कब्ज, त्वचा रोग, हृदय रोग, जुकाम, बालों का असमय सफेद होना तथा समय से पहले बुढ़ापे के लक्षणों के इलाज में आँवला का फल अत्यंत उपयोगी होता है। इस फल में प्रचुर मात्रा में विटामिन–सी तथा पॉलीफिनाल जैसे प्रति–ऑक्सीकारक तत्व उपलब्ध होते हैं जो शरीर में विभिन्न प्रकार के रोगों के विरूद्ध प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाते हैं। इस सभी खूबियों के बावजूद आँवला का फल अपने खट्टे एवं कसैले स्वाद के कारण ताजे उपभोग के लिये उपयुक्त नहीं माना जाता है। अतः इसका उपभोग कुछ परंपरागत उत्पाद जैसे मुरब्बा, कैंडी, जूस, सुपारी, चूरन आदि बनाकर किया जाता है। संस्थान ने सभी उम्र समूह के लिये उपयुक्त, किण्वन तकनीक द्वारा आँवला का साइडर बनाया है। ताजगीयुक्त इस पेय में 4 प्रतिशत अल्कोहल, 10° ब्रिक्स कुल घुलनशील ठोस (टी.एस.एस.), 66 मिलीग्राम/100 मिलीलीटर विटामिन 'सी' तथा 0.4 प्रतिशत पॉलीफिनाल उपलब्ध होता है। मीठे–कसैले स्वाद वाला यह पेय स्वास्थ्य के लिये उत्तम है। आँवला के बढ़ते उत्पादन को ध्यान में रखते हुए यह नवीन उत्पाद राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में एक उच्च मूल्य वाले उत्पाद के रूप में स्थापित हो सकता है।

बेल का साइडर

बेल उच्च औषधीय गुण वाला एक पोषक फल है जिसमें भरपूर मात्रा मे कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, विटामिन तथा रेशा पाया जाता है। इसमें गाढ़ा, चिकना, चिपचिपा द्रव भी पाया जाता है जिसमें मार्मेलोसिन तथा सोरालेन जैसे पेट के लिये अत्यंत लाभकारी रसायन विद्यमान होते हैं। बेल का फल कब्ज, डायरिया, पेचिस, पेप्टिक अल्सर आदि रोगों में काफी लाभकारी होता है। सामान्यतः बेल के फल का उपयोग मुरब्बा, कैंडी, स्क्वैश तथा शर्बत बनाने में किया जाता है। जबकि संस्थान ने बेल का साइडर निर्मित किया है जिसमें 4 प्रतिशत अल्कोहल, 16.9° ब्रिक्स कुल घुलनशील ठोस (टी.एस.एस.), 0.63 डिग्री अम्ल तथा 266 मिलीग्राम/100 मिलीलीटर पॉलीफिनाल उपलब्ध होता है। बेल की प्राकृतिक सुगंध, स्वाद तथा औषधीय गुण मौजूद हैं। यह एक उच्च कोटि का पेय है जिसकी बाजार में अच्छी संभावनाएँ हो सकती हैं।

फलों की मदिरा

मदिरा साइडर की अपेक्षा अधिक अल्कोहल वाला पेय है जिसमें कसैलेपन के साथ–साथ कोई मिठास नहीं होती है। संस्थान ने विभिन्न फलों से निर्मित मदिरा विकसित की है जिसमें लगभग 9–12 प्रतिशत अल्कोहल होता है। इन मदिराओं की विशेषता यह है कि इसमें फलीय सुवास के साथ–साथ फलों के प्राकृतिक पोषक गुण भी विधमान हैं जिसके कारण ये बाजार में उपलब्ध आसुत शराबों से अधिक सुरक्षित एवं स्वास्थ्यप्रद हैं।

आम की मदिरा

आम भारत का सर्वाधिक लोकप्रिय फल है। इसका सुगंध एवं स्वाद अनूठा है। इसमें काफी उच्च मात्रा में शर्करा, रेशा, विटामिन 'ए' एवं 'सी' के अतिरिक्त खनिज तत्व भी पाये जाते हैं। इसमें प्रति–ऑक्सीकारक गुण युक्त बीटा–कैरोटिन पदार्थ प्रचुर मात्रा में होता है। इसके अतिरिक्त आम के गूदे में ल्यूपियोल नामक रसायन पाया जाता है जो उच्च कोटि का ऐंटी–कैंसर तत्व हैं। भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ ने दशहरी, लंगड़ा, चौसा तथा तोतापरी प्रजातियों के आम से मदिरा बनायी है जिसमें इन प्रजातियों की विशिष्ट सुवास पायी जाती है। आम की मदिरा में 10.4 प्रतिशत अल्कोहल, 8.8° ब्रिक्स कुल घुलनशील ठोस (टी.एस.एस.), 0.58 प्रतिशत अम्ल, 0.97 मिलीग्राम/100 मिलीलीटर विटामिन 'सी' तथा 50 मिलीग्राम/100 मिलीलीटर टैनिन पायी गयी है। आम का मदिरा बाजार के लिये एक उत्तम उत्पाद है।

बेल की मदिरा

संस्थान ने बेल के फल से मदिरा निर्मित की है जिसमें बेल के सभी पोषक एवं औषधीय गुण विद्यमान होते हैं। बेल की विशिष्ट भीनी सुगंध के कारण यह किण्वित पेय अत्यन्त ही अनूठा उत्पाद होता है। इसमें 8.6 प्रतिशत अल्कोहल, 14.8° ब्रिक्स कुल घुलनशील ठोस (टी.एस.एस), 0–87 प्रतिशत अम्ल, 2.35 मिलीग्राम/100 मिलीलीटर विटामिन 'सी' तथा 0.36 प्रतिशत टैनिन होता है। व्यावसायीकरण की दृष्टि से बेल की मदिरा एक उत्तम उत्पाद है।

शहतूत की मदिरा

शहतूत का पौधा प्राथमिक रूप से पत्तियों के लिये उगाया जाता है क्योंकि रेशम का कीड़ा शहतूत की पत्तियाँ खाकर बढ़ कर रेशम का निर्माण करता है। शहतूत का उपभोग ताजे रूप में ही होता है तथा इसका प्रसंस्करण लगभग नगण्य होता है। शहतूत का उत्पादन व्यावसायिक स्तर पर नहीं होता है। शहतूत की भंडारण क्षमता भी बहुत कम होती है। यह सफेद या हल्के हरे, लाल तथा बैंगनी रंग का होता है। इसका जूस मीठा तथा औषधीय गुणों से परिपूर्ण होता है। शहतूत का जूस ऐंटी–थ्रोम्बोटिक, ऐंटी–इन्फ्लेमेटरी एवं ऐंटी–माइक्रोबियल होता है। लाल एवं बैंगनी शहतूत मे प्रचुर मात्रा मे ऐंथोसायनिन नामक वर्ण पाया जाता है जो एक उच्च कोटि का प्रति–ऑक्सीकारक पदार्थ है। संस्थान ने लाल–बैंगनी शहतूत से मदिरा का निर्माण किया है जिसमें 11 प्रतिशत अल्कोहल, 7.6° ब्रिक्स कुल घुलनशील ठोस (टी.एस.एस.), 0.34 प्रतिशत अम्ल, 0.16 प्रतिशत टैनिन तथा 10.2 मिलीग्राम/100 मिलीलीटर ऐंथोसायनिन उपलब्ध होता है। स्वास्थ्य की दृष्टि से शहतूत का मदिरा अत्यंत ही लाभकारी है।

महुए की मदिरा तथा वर्मूथ

महुआ कल्पवृक्ष जनजाति समूह का एक अमूल्य वृक्ष है। अन्य उपयोग के अतिरिक्त महुए के फूलों का उपयोग जनजाति समूह द्वारा देसी

तकनीक से मदिरा बनाने के लिये किया जाता है। यद्धपि इस प्रकार से तैयार मदिरा कम गुणकारी और कभी–कभी स्वास्थ्य की दृष्टि से खतरनाक भी होती है, विशेषकर जब उसमें अवांछनीय तत्व उत्पन्न हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त इसमें मुख्य रूप से अल्कोहल ही रह जाता है। शेष सारे पोषक तत्व उच्च ताप पर आसवन के दौरान नष्ट हो जाते हैं। संस्थान ने महुए के फूलों के ताजे जूस को किण्वित कर मदिरा बनाने की एक तकनीक का मानकीकरण किया है। महुए की जले चावल की गंध को नींबू के प्रयोग से नगण्य किया जा सकता है। उन्नत तकनीक से निर्मित मदिरा में 10 प्रतिशत अल्कोहल, 5.2° ब्रिक्स कुल घुलनशील ठोस (टी.एस.एस.), 0.63 प्रतिशत अम्ल, 4.2 मिलीग्राम/100 मिलीग्राम विटामिन 'सी' तथा 0.19 प्रतिशत टैनिन उपलब्ध होता है। महुए की वर्मूथ एक मसालेदार मदिरा है जिसमें भारतीय मसालों का उपयोग किया गया है।

संस्थान द्वारा विकसित फल मदिरा एवं साइडर उच्च कोटि के पेय पदार्थ हैं जिनमें पौष्टिक एवं औषधीय तत्वों के अतिरिक्त अच्छे संवेदी गुण भी विधमान होते हैं। पेय में फलों की विशिष्ट सुगंध के साथ–साथ प्रचुर मात्रा में स्वास्थ्यपरक पदार्थ जैसे विटामिन, खनिज तत्व, फ्लेवोनायड, पालीफिनाल, ऐंटीऑक्सीडेंट आदि होते हैं। नियंत्रित वातावरणीय कारक तथा विशिष्ट सूक्ष्म जीव प्रजाति के उपयोग के कारण इन उत्पादों का मानव शरीर पर कोई हानिकारक प्रभाव नहीं होता है। अतः ये उत्पाद राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में उचित स्थान पा सकते हैं।

चंद्रयान–2

भारत का चंद्रयान –1 के बाद दूसरा चंद्र अन्वेषण अभियान है, जिसे भारतीय अंतरिक्ष अनुसन्धान संगठन (इसरो) ने विकसित किया है। अभियान को जीएसएलवी मार्क 3 प्रक्षेपण यान द्वारा प्रक्षेपण करने की योजना है। इस अभियान में भारत में निर्मित एक लूनर ऑर्बिटर (चन्द्र यान) तथा एक रोवर एवं एक लैंडर शामिल होंगे। इस सब का विकास इसरो द्वारा किया जायेगा। भारत चंद्रयान–2 को 15 जुलाई 2019 में प्रक्षेपण करने की योजना बना रहा है।

इसरो के अनुसार यह अभियान विभिन्न नयी प्रौद्योगिकियों के इस्तेमाल तथा परीक्षण के साथ–साथ नए प्रयोग भी करेगा। पहिएदार रोवर चन्द्रमा की सतह पर चलेगा तथा वहीं पर विश्लेषण के लिए मिट्टी या चट्टान के नमूनों को एकत्र करेगा। आंकड़ों को चंद्रयान–2 ऑर्बिटर के माध्यम से पृथ्वी पर भेजा जायेगा। डॉ. मायलास्वामी अन्नादुराई के नेतृत्व में चंद्रयान–1 अभियान को सफलतापूर्वक अंजाम देने वाली टीम चंद्रयान–2 पर भी काम कर रही है।

फलदार पौधों में फसल नियमन पर एक समीक्षा

राजकुमार, प्राणनाथ बर्मन, गोविन्द कुमार[1] एवं शैलेन्द्र राजन[2]
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

फसल नियमन/नियंत्रण क्यों?

भारत विश्व में चीन के बाद फलों का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। भारत में उष्णकटिबंधीय, उपोष्णकटिबंधीय से लेकर समशीतोष्ण क्षेत्रों की विविधता के कारण फलों का उत्पादन पूरे वर्ष होता है। अमरूद, अनार, नींबू, नारंगी आदि के फलदार पौधे सालभर फल तो देते हैं लेकिन इन फलों की गुणवत्ता ज्यादा अच्छी नहीं होती है। इन फलदार पौधों में फूल लगने के अलग–अलग मौसम होते हैं। इनमें फूल मुख्यतः फरवरी–मार्च (अम्बे–बहार) में जून–जुलाई (मृग बहार) और अक्टूबर–नवंबर (हस्त बहार) आते हैं जिनमें फलन क्रमशः वर्षा, सर्दी और वसंत के मौसमों में होती है। एक वर्ष के दौरान उपरोक्त फसलों में दो या तीन फसल लेने के बजाये केवल एक फसल का ही उत्पादन नियमित कर गुणवत्तायुक्त फसल का उत्पादन सुनिश्चित किया जा सकता है। इसलिए इन पौधों में अच्छी गुणवत्ता के उत्पादन के साथ दो या तीन फसलों के बजाये केवल एक फसल का उत्पादन लेने के लिये फसल नियमन/नियंत्रण विधि का उपयोग किया जाता है। फसल नियमन/नियंत्रण का मुख्य उद्देश्य पौधों को आराम देना और दो या तीन फूलों की बहार में से कोई एक गुणात्मक फसल का उत्पादन करना होता है। फसल नियंत्रण के लिये सिंचाई प्रबंधन, जड़ों को उखाड़ना, जड़ों और शाखाओं की कटाई–छँटाई करना, फूलों को तोड़कर केमिकल और अन्य पौधे विकास नियामकों का छिड़काव आदि का इस्तेमाल किया जाता है। एक स्थान पर बहार का चयन मुख्य रूप से वातावरण की परिस्थितियाँ, सिंचाई के लिये पानी की उपलब्धता, गुणवत्तायुक्त उत्पादन, रोग और कीटों का प्रकोप, बाजार में फसल की कीमतों में उतार–चढ़ाव आदि उत्पादन बाधाओं को ध्यान में रखते हुए निर्धारित किया जाता है। फसल नियंत्रण की योजना बनाना, फसलों की उपज और गुणवत्ता को नियंत्रित करने के लिये उपयुक्त तरीकों का चयन, श्रमिकों की कार्यशैली और निगरानी, पर्यावरण और वित्तीय कारकों पर नकारात्मक प्रभाव डाले बिना ही किया जाना चाहिए। इसलिए फूल आने के समय का गहन अध्ययन कर समझना तथा सर्वोत्तम बहार का अवलोकन करना अत्यन्त आवश्यक है।

[1,2,3]वैज्ञानिक एवं [4]निदेशक

विभिन्न फलदार फसलों में फसल नियंत्रण

नींबू पूरे साल खिलता है लेकिन इसके मुख्य रूप से खिलने की अवधि फरवरी–मार्च की है। इसमें जुलाई से अगस्त तक कम फूल आते हैं। एक ही पौधे पर फूल, कच्चे और पके फल एक ही समय पर मिल जाना कोई सामान्य बात नहीं होती है। अमरूद में ठीक इसी प्रकार से वृक्षों में एक वर्ष में ही तीन बार फूल खिलता है और वृक्ष अम्बे बहार, मृग बहार और हस्त बहार के दौरान साल भर फल देता रहता है। आमतौर पर उत्तर भारत में प्रमुख फसल जुलाई से मध्य अक्टूबर (बरसात के मौसम) में पकती है। नवंबर से फरवरी के बीच (सर्दियों के मौसम) में एक छोटी सी फसल का उत्पादन होता है। यद्यपि बारिश के मौसम में उत्पादन की मात्रा अधिक होती है, सर्दियों के मौसम की फसल तुलनात्मक रूप से कम स्वाद वाली और कीट के संक्रमण के कारण अच्छी गुणवत्ता वाली नहीं होती है। इसके विपरीत, सर्दियों के मौसम में अच्छे एवं गुणवत्तायुक्त फलों का उत्पादन होता है जिससे ज्यादा लाभ प्राप्त होता है। विभिन्न मौसमों में उत्पादित फलों की गुणवत्ता में अंतर पाया जाता है और अच्छी गुणवत्ता वाले अमरूद की सर्दियों वाली फसल को अधिक अनुकूल उत्तम माना जाता है। बरसात में आने वाला फल प्रायः कई प्रकार के कीटों और बीमारियों से प्रभावित होते हैं और इन फलों में पोषक तत्व की मात्रा कम होती है। फसल नियंत्रण बाजार में मौजूद फलों की अधिकता से बचने और फलों की नियमित आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिये वांछित बन जाता है जिससे एक वर्ष में सर्वोत्तम गुणवत्तायुक्त बंपर फसल ली जा सके। फसल चक्र को नियंत्रित करने से अधिकांश महीनों के दौरान फलों की आपूर्ति बनाये रखने में सहायता मिलती है। अमरूद में शाखाओं की कटाई–छँटाई मौजूदा मौसम की स्थिति और

कृषि पद्धतियों के अनुसार की जाती है क्योंकि फूल नयी विकसित शाखाओं पर ही आते हैं। अमरूद में सिंचाई एवं उर्वरक का प्रबंधन करने से फूलों की तुड़ाई कर और कटाई–छँटाई का उपयोग कर नयी शाखाओं का विकास कर फलन को प्रभावित किया जा सकता है। अनियंत्रित बगीचों में शाखाओं का वानस्पतिक विकास अधिक होता है और फूल कम मात्रा में आते हैं क्योंकि फूल लाने के लिये तापमान या नमी का तनाव अत्यन्त आवश्यक है।

नियमित रूप से पानी की उपलब्धता से अनार में फूल लगातार आता रहता है। ऐसी परिस्थितियों में वर्ष के विभिन्न अवधि में अनियमित रूप से फूल एवं फल आते रहते हैं जो व्यावसायिक रूप से वांछनीय नहीं होता है। इससे बचने के लिये वृक्षों में बहार नियंत्रण किया जाता है। इसमें फूल आने से दो महीना पहले सिंचाई को रोक दिया जाता है जिसके कारण पत्तियाँ झड़ जाती हैं। सिंचाई को रोक देने के 40–45 दिनों बाद पेड़ों की कटाई–छँटाई कर उर्वरकों की खुराक डालकर और सिंचाई को पुनः प्रारंभ किया जाता है। इससे फूल आना प्रारंभ हो जाता और फूल आने के 4–5 महीने बाद फल तुड़ाई के लिये तैयार हो जाते हैं। उष्णकटिबंधीय स्थिति में अनार में फूलों के आने के मुख्यतः तीन मौसम (जनवरी–फरवरी (अम्बे बहार), जून–जुलाई (मृग बहार) और सितंबर–अक्टूबर (हस्ते बहार) हैं। लेकिन फूलों और फलन को अपनी इच्छानुसार नियंत्रित करने के लिये सिंचाई के पानी की उपलब्धता, बाजार की माँग, कीट एवं बीमारी के प्रकोप को ध्यान में रखा जाता है।

फूलों को नियंत्रित करने की तकनीकियाँ

अमरूद के पेड़ों में, मृग बहार में फूलों का आना अधिक पसंद किया जाता है ताकि मृग बहार के अत्यधिक फूलों के उत्पादन से फलों की उपलब्धता को सर्दियों में बढ़ाया जा सके। इसके लिये निम्नलिखित तकनीकियों का इस्तेमाल किया जाता है।

(क) पानी को प्रतिबंधित कर की गयी सिंचाई

अमरूद के वृक्षों की फरवरी से मई के मध्य सिंचाई नहीं करनी चाहिए। इस प्रकार पेड़ गर्मी के मौसम (अप्रैल–मई) के दौरान अपने पत्ते गिराते हैं। इसी दौरान, वृक्ष अपनी शाखाओं में खाद्य सामग्री संरक्षण करते हैं। जून के महीने में खेत की अच्छी तरह से जुताई करने और खाद देने के बाद सिंचाई की जाती है। इसके लगभग एक महीने बाद पौधों में प्रचुर मात्रा में फूल निकलते हैं और सर्दियों में फल पककर तैयार हो जाते हैं।

(ख) जड़ों को अनावृत कर

जड़ों को सूर्य–प्रकाश देने के लिये मुख्य तने के आस–पास (45–60 सेंटीमीटर) से ऊपरी मिट्टी को सावधानी से निकाल दिया जाता है जिससे मिट्टी में नमी की कमी हो जाती है। परिणामस्वरूप, पत्तियाँ गिरने लगती हैं और पेड़ विश्राम की अवस्था में चले जाते हैं। 5–4 सप्ताह के बाद जड़ों को मिट्टी से फिर से ढक देना चाहिए। इसके बाद उर्वरक डाल कर सिंचाई सुचारू रूप से शुरू कर दिया जाता है।

(ग) फूलों की तुड़ाई कर

यह वृद्धि नियामकों के उपयोग से प्रभावी हो सकता है, उदाहरणार्थ 50 पी.पी.एम. की दर से नेफ्थलीन एसिटिक एसिड का उपयोग किया जा सकता है। फूलों की तुड़ाई छोटे पैमाने पर हाथ से भी की जा सकती है। अतः जब अम्बे बहार के फूलों को खिलने से रोक दिया जाता है तो मृग बहार में अधिक फूल और फल आते हैं।

(घ) पेड़ों की शाखाओं को झुकाकर

जिस वृक्ष की शाखाएँ सीधी होती हैं, वे बहुत कम फल देने वाली होती हैं। ऐसे पेड़ की शाखाओं को झुकाकर जमीन पर गड़े खूँटे से बाँधा जा सकता है। इस प्रकार निष्क्रिय कलियाँ भी सक्रिय होकर फूल और फल देने लगती हैं।

(ङ) वृद्धि नियामकों का उपयोग कर

सर्दियों की फसल की उच्च्य कीमत पाने के लिये फलों को गिराकर मानसून फसल को कम कर दिया जाता है। इसके अंतर्गत मैलिक हाइड्राजायद, एन.ए.ए., एन.ए.डी. और 2, 4 डी. जैस वृद्धि नियामकों का उपयोग फूलों को कम करने के लिये किया जाता है।

(च) उर्वरकों का उपयोग कर

सर्दियों की फसल की मात्रा बढ़ाने के लिये उर्वरकों को डालने का समय अप्रैल–मई की बजाये मई–जून होता है जिससे नयी शाखाओं की अधिक वृद्धि होने से फूल ज्यादा आयेंगे और सर्दियों की फसल में इजाफा होगा।

वर्षा पर निर्भर वैज्ञानिक खेती की विधि

देवानन्द गिरी[1], देवेन्द्र पाण्डेय[2] एवं शिव पूजन[3]
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

वर्षा पर निर्भर खेती को बारानी या शुष्क खेती कहते हैं। आम बोलचाल की भाषा में इसे असिंचित खेती भी कहा जाता है। भारत के संपूर्ण कृषि योग्य भूमि का लगभग 70 प्रतिशत हिस्सा वर्षाधीन है।

वर्षाधीन खेती क्या है?

सामान्य रूप से इसका तात्पर्य है कम तथा अनिश्चित वर्षा वाले क्षेत्रों में स्थायी रूप से पर्याप्त फसलोत्पादन प्राप्त करने के लिये उन्नत कृषि क्रियाओं द्वारा अधिकतम जल संरक्षण करते हुए भूमि तथा फसलों का कुशल प्रबंध करना इसे ही वर्षाधीन खेती कहते है। दूसरे शब्दों में शुष्क खेती, भूमि और फसलों के प्रबंध का वह कार्यक्रम है जिसमें किसी निश्चित भू–भाग में पानी की अधिकतम मात्रा को सुरक्षित रखने की व्यवस्था होती है अर्थात् बारानी खेती की फसल के उत्पादन के लिये भूमि में कम एवं असामयिक वर्षा की अधिकतम मात्रा को सुरक्षित रखा जाता है।

नमी संरक्षण वर्षा पर आधारित खेती की सफलता का मूल आधार है। इन क्षेत्रों में सिंचाई के साधन उपलब्ध नहीं होते हैं। ऐसे क्षेत्र दो प्रकार के होते हैं।

1. अनुकूल वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्र

कुछ वर्षाधीन क्षेत्रों में वार्षिक वर्षा एवं इसका वितरण फसलों की वृद्धि के अनुकूल होता है। इस क्षेत्रों में कृत्रिम रूप से पानी देने की आवश्यकता नहीं होती है बल्कि ऐसे क्षेत्रों में सामान्य कृषि विधियाँ अपनाकर अच्छी फसल प्राप्त की जा सकती है। विशेष परिस्थितियों में भूमि एवं नमी संरक्षण की सरल विधियाँ अपनायी जानी चाहिए।

2. अपर्याप्त वार्षिक वर्षा के क्षेत्र

इन क्षेत्रों में फसलोत्पादन के लिये अपर्याप्त वार्षिक वर्षा (1000 मिलीमीटर से कम) होती है तथा वर्षा का वितरण, इसकी अवधि और तीव्रता, आरंभ एवं अंत भी अत्यंत अनिश्चित होता है। इन क्षेत्रों में वातावरण के ऊँचे तापमान, कम आर्द्रता एवं तीव्र वायु के कारण वाष्पीकरण द्वारा मृदा नमी का अधिक ह्रास होता है। ऐसे क्षेत्र बारानी या शुष्क क्षेत्र कहलाते हैं। फसलों की कम उपज एवं विफलता तथा कृषि उत्पादन की अस्थिरता इन क्षेत्रों की विशेषता है। सामान्यतः दीर्घकाल तक अनावृष्टि होने से उपज में भारी कमी आ जाती है और फसल बिल्कुल बरबाद हो जाती है जिससे अस्थिरता आती है।

वर्षा पर निर्भर क्षेत्र अधिकांशतः उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु, गजरात, राजस्थान, पंजाब एवं हरियाणा प्रांतों में हैं। प्राप्त आँकड़ों के अनुसार देश की संपूर्ण कृषि योग्य भूमि का लगभग 36 प्रतिशत भाग (4 करोड़ 70 लाख हेक्टेयर) बारानी क्षेत्र है। इन क्षेत्रों की मुख्य फसलें मोटे अनाज, तिलहन एवं दलहन हैं। क्षेत्रफल की दृष्टि से मूँगफली, अरंडी, कपास, ज्वार, बाजरा एवं अरहर का क्रमशः 74, 69, 64, 57, 51 तथा 50 प्रतिशत भाग इन समस्याग्रस्त क्षेत्रों की फसलों की उपज बहुत कम है तथा आर्थिक एवं सामाजिक विकास में बारानी क्षेत्रों के कृषक बहुत पिछड़े हुए हैं। इसलिए देश की आर्थिक व्यवस्था में सुधार करने एवं संतुलन बनाये रखने के लिये बारानी/शुष्क क्षेत्रों का पूर्ण विकास करना जरूरी है।

वर्षा पर निर्भर खेती में जल संरक्षण

(क) भूमि की पानी सोखने तथा पानी को रोक रखने की क्षमता को बढ़ाना

इसके अंतर्गत किये गये प्रयोग में मेंड़बन्दी, नालियाँ बनाना, गर्मी की जुताई करना, जैविक खादों का प्रयोग एवं पर्याप्त जल को किसी उचित स्थान पर इकट्ठा कर पुनः फसलोत्पादन में यथोचित रूप से प्रयोग करना प्रमुख है। इन सारी क्रियाओं द्वारा भूमि की पानी सोखने तथा पानी को अधिक समय तक रोक रखने की क्षमता बढ़ जाती है।

[1]कनिष्क शोध सहायक, [2]प्रधान वैज्ञानिक एवं [3]वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता

(ख) भूमि में एकत्रित जल को भाप बनकर उड़ने से बचाना

मृदा में एकत्रित जल को उपयोग में लाने के लिये किये गये प्रयोगों से सिद्ध हो चुका है कि भूमि की सतह पर अवरोध परत बनानी चाहिए। इस कार्य में मृदा को भुरभुरी कर समह को किसी पदार्थ से ढकना, खरपतवारों का नियंत्रण करना तथा फसलों को पंक्तियों में बोना बेहद जरूरी है। इन सारी क्रियाओं द्वारा जल को भाप बनने एवं वाष्पोत्सर्जन क्षति से बचाया जा सकता है।

(ग) मृदा में संचित जल का भरपूर उपयोग करें

भूमि में एकत्रित जल को यदि जल्दी उपयोग में नहीं लाया गया तो उसकी भरपाई नहीं हो सकेगी और इसे प्रयोग में भी नहीं लाया जा सकेगा। इसलिए किसान भाईयों को सलाह दी जाती है कि मिश्रित/मिल–जुली खेती, गहरी जड़ों वाली फसलों को उगाना, सूखा सहन करने वाली उन्नतशील फसलों का समावेश, शीघ्र पकने वाली फसल प्रजातियों और कम पानी को जरूरत वाली फसलों को उगाना अधिक लाभप्रद पाया गया है।

भूमि संबंधित सुझाव

1. वर्षा जल को रोकना तथा भूमि सुधार

ऊबड़–खाबड़/ऊँची–नीची भूमि को मानसून की बरसात के पहले ही मेंड़बंदी और समतल करना जरूरी है। यदि ढाल अधिक हो तो ढाल के विपरीत कहीं–कहीं पर खाईयाँ या फिर गहरी नालियाँ बना देनी चाहिए। रबी की फसल की कटाई के तुरंत बाद ही गर्मी में खेतों की ग्रीष्मकालीन जुताई कर छोड़ देना चाहिए। जुताई किसी मिट्टी पलटने वाले हल से खूब गहरी कर छोड़ने से बारिश के पानी से भूमि का अच्छा हो जाना आसान हो जाता है तथा हानिकारक खरपतवार एवं कीड़े–मकोड़ों का जीवन चक्र नष्ट–भ्रष्ट हो जाता है। फलस्वरूप मृदा की जलधारण शक्ति बढ़ जाती है।

2. जल संचय

आवश्यकता से अधिक पानी नदी– नाले में चला जाता है। उसे किसी ऐसी जगह पर इकट्ठा किया जाये जहाँ उसे उड़ने तथा रिसने से बचाया जा सके। बाद में समय–समय पर जरूरत के मुताबिक फसलों की सिंचाई के लिये उसे प्रयोग किया जाये। इस विधि में बहते हुए पानी को ताल, गड्ढा अथवा जहाँ ढाल हो वहाँ इकट्ठा करना चाहिए और आवश्यकतानुसार ऐसे स्थानों की लंबाई, चौड़ाई और गहराई बढ़ा देनी चाहिए।

3. वाष्पोत्सर्जन को रोकने के लिये रसायनों का प्रयोग

कुछ रसायनों जैसे कैवोलीनाइट या फेनिल मर्क्यूरिक एसिटेट के घोल का पत्तियों पर छिड़काव करने से पत्तियों द्वारा पानी का उड़ना कम हो जाता है। इसके अलावा साइकोसेल का 20–25 पी.पी.एम. घोल बीज में सूखाकर या फूल बनते समय छिड़कर पौधों से नमी के ह्रास को काफी कम किया जा सकता है।

4. अवरोध परत बनाना

अवरोध परत बनाने से मृदा में स्थित जल का भाप बनकर उड़ना बंद हो जाता है और मृदा की जलधारण शक्ति बढ़ जाती है। एक तो मृदा की सतह के ऊपर कुछ ऐसे पदार्थ जैसे फसलों के अवशेष धान, गेहूँ, जौ, जई, ज्वार, बाजरा, मक्का का भूसा, गन्ने की पत्ती, अरहर, नारियल, केला आदि की सूखी पत्तियाँ, सूखी घास–फूस, कपास के तने आदि। गोबर/कंपोस्ट की सड़ी खाद, लकड़ी का बुरादा, पॉलिथीन की परत, प्लास्टिक की चादरें, इत्यादि को बिखेरने से पानी का भाप बनकर उड़ना रुक जाता है।

दूसरी विधि में भूमि की ऊपरी सतह को भुरभुरी कर जल मृदा की पतली कोशिका नली को तोड़ देते हैं जिससे वाष्पीकरण होता है। ऐसा करने से पानी का वाष्पीकरण नहीं हो पाता है और पानी लम्बे अरसे तक फसलों में प्रयोग में आता है। अवरोध परत द्वारा खरपतवार नियंत्रण में भी मदद मिलती है। साथ–ही–साथ नीचे की सतह से खिंचकर पानी पौधों की जड़ों तक आ जाता है जिसे पौधे अपने उपयोग में लाते हैं।

1. खाद एवं उर्वरक संबंधी सुझाव उर्वरकों और खलियों का प्रयोग करना

प्रयोग की जाने वाली नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटॉश की प्रति हेक्टेयर मात्रा को एक बार में खेत की तैयार के बाद फर्टीड्रिल या चोंगा–नाई द्वारा या हल के पीछे कूंड़ में देने से काफी लाभ होता है। ध्यान रहे की बीज बोआई जिस दिशा में खाद का कूंड़ बनाकर करना

चाहिए। बीज बोने के 2 या 3 दिन बाद उर्वरकों की अवशेष मात्रा बोये गये बीज की मात्रा की कतारों से 10 सेंटीमीटर गहरी कूड़ में डालकर ढक दें।

2. उर्वरकों का सीमित प्रयोग

पानी की कमी के कारण इस्तेमाल किया गया उर्वरक फसल में पूरी तरह से मिल नहीं पाता है। यहाँ तक कि कभी–कभी हानि भी होती है, वर्षा पर निर्भर खेती में सिंचित खेती की आधी मात्रा में प्रयोग करना चाहिए। सिंचित गेहूँ में न.फा.पो. क्रमशः 100%, 40%, 40 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर में डालते हैं तो असिंचित दशा में गेहूँ के लिए ना.फा.पो. क्रमशः 50%, 20%, 20% किलोग्राम/हेक्टेयर डालें तभी परिणाग लाभप्रद होगा।

3. उर्वरकों का गहराई में प्रयोग

वर्षाधीन खेती में यदि हम उर्वरक का प्रयोग भूमि की ऊपरी सतह पर करते हैं तो नमी के अभाव में फसलें उनका ठीक–ठीक उपयोग नहीं कर पाती हैं और पानी की कमी के कारण उर्वरक फसलों की जड़ों को सुखा देती हैं। ऐसा प्रयोग करना अंततः हानिकारक सिद्ध होता है। उर्वरकों को वर्षाधीन खेती में पौधों की पंक्तियों से 10 सेंटीमीटर दूर एवं 5 सेंटीमीटर गहरी उथली कूंकों में डालना लाभ्रपद पाया गया है। इस तरीके के इस्तेमाल से पौधे की जड़ें गहराई तक बढ़ती हैं और भूमि में निचली सतह पर स्थित पानी का सदुप्रयोग करती रहती है।

4. उर्वरकों का घोल के रूप में प्रयोग

वर्षाधीन खेती पूरी तरह वर्षा पर ही निर्भर करती है जिससे उर्वरकों को टापड्रेसिंग के रूप में प्रयोग करना कठिन हो जाता है। ऐसी दशा में नाइट्रोजन या पोटैश वाली उर्वरकों का 2–3 प्रतिशत घोल बनाकर फसल में फूल बनते समय पौधों के ऊपर छिड़काव करने से काफी लाभ मिलता है। इस प्रकार उर्वरक की मात्रा भी कम लगती है और साथ–ही–साथ पौधों को तुरंत शक्ति मिल जाती है।

कभी–कभी पौधों में ऐसे भोज्य पदार्थों का अभाव हो जाता है जिनके कारण पौधों में तरह–तरह की बीमारियाँ लगने लगती हैं। इनमें पोषक तत्वों को भी छिड़कना पड़ता है ऐसे घोल के पदार्थों में प्रायः जस्ता, गंधक, लोहा इत्यादि होता है, अब भूमि में बहुफसली प्रणाली के कारण कम पाये जा रहे हैं।

5. फसलों के उत्पादन संबंधी सुझाव

किसान भाई किस प्रकार फसलों का चयन करें, उगाएँ जिससे सीमित साधनों के जरिये अधिकतम उपज प्राप्त हो सके। वे निम्नलिखित बातों का ध्यान में रखकर हासिल कर सकते हैं।

फसलों की उन्नतशील जातियों का चयन

असिंचित क्षेत्रों के वास्ते फसलों के चुनाव पर विशेष ध्यान देना चाहिए क्योंकि फसल और उनके उचित चुनाव द्वारा ही उपज कई गुना बढ़ायी जा सकती है।

1. फसलों में सूखे को सहन करने की क्षमता हो।
2. जल्द पकने वाली प्रजातियाँ।
3. फसलों को समय से बोयें।
4. फसलों की कतार में दूरी बढ़ाकर तथा बीज की मात्रा घटाकर बोयें।
5. बीज को भिगोकर बोयें।
6. भूमि एवं बीज शोधन के बाद ही बीज बोयें।
7. खरपतवार नियंत्रण करें।
8. मिली–जुली फसल उगायें।
9. पौधों में समन्वित भोज्य तत्वों का समुचित प्रयोग करें।
10. उचित फसल नियोजन एवं फसल चक्र अपनायें।

उक्त बिंदुओं का संक्षिप्त वर्णन निम्नवत है।

खरीफ की फसलें एवं सुधरी संस्तुत प्रजातियाँ

धान	साकेत–4, नरेन्द्र–97, 118, गोविन्द, नगीना–22, अश्विनी
बाजरा	डब्ल्यू. सी.सी.–75, एचत्रबी.–1, 3, 5 आर.बी.एस.–2, राज–171, पूसा–23
उर्द	टा–9, पंत.यू. 19, 35, नरेन्द्र उर्द–1, टा.–19, 65
मूँग	पंत मूँग–1, 2, 3, 4, नरेन्द्र मूँग–1 शीला, पी.एस. 7, पी.डी. एम–4, 11
अरहर	टा.–21, यू.पी.ए.एस.–120, आई.सी.पी.एल–151, मारूथी, मुक्ता, शारदा
तिल	टा.–4, 12, 13, 78
सूर्यमुखी	मार्डन, ई.सी. 68413, 68414, 68415, बरदान
मूँगफली	टा.– 28, 32, 64, चन्द्रा, चित्रा, अम्बर, कौशल

रबी की फसलें एवं सुधरी संस्तुत प्रजातियाँ।

गेहूँ	सी.–306, के.–8027, 8962, 78, एच.डी.–2285, 2329, 2021, सोनानिका, कुंदन
जौ	के.–12, 71, 125, 141 गीतांजली, रत्ना, डी.एल.–3, आर.एस.–6
चना	टा.1, 2, 3, सी.–235, राधे बी.जी.–1 पेत जी.–114, एच–208, गौरव
अलसी	टा.–397, हीरा, मुक्ता, नीलम, गरिमा, श्वेता, शुभ्रा
सरसों	टा.–42, 59, वैभव, वी.एस.–2
तोरिया	टा.–9, 36, पी.टी. 303, भवानी
कुसुम	के.–65, 65–3, मालवीय–305 , एन.–62–8
मसूर	टा.–8, 36, पंत. एल.–234, 406, 639, 4, नरेन्द्र मसूर–1, एल–9–12, डी.पी.एल.–15, 62 एल.–4076

नोट

1. दर्शायी गयी प्रजातियाँ न केवल सूखा अवरोधी हैं बल्कि इनकी जड़ें अधिक गहराई तक जाती हैं। अतः जमीन की निचली सतह से ये नमी ग्रहण कर सकती हैं और अपेक्षाकृत अधिक समय तक हरी–भरी रह सकती हैं। उक्त चुनी गयी फसलों से किसान खरीफ में सांवा, महुआ, काकुन आदि तथा रबी में मटर, मेथी आदि के साथ दो फसली कार्यक्रम चलाकर भी भरपूर उपज प्राप्त कर सकते हैं, बशर्ते सभी परिस्थितियाँ समान हों।
2. बरसात के पानी को यथोचित उपयोग में लाने के लिये यह अनिवार्य है कि प्रजाति शीघ्र बढ़ने तथा पकने वाली हो उपयुक्त प्रदर्शित सूची की फसलों में प्रायः सभी गुण विद्यमान हैं।
3. यह जरूरी है कि वर्षाधीन क्षेत्रों में वर्षा के आरंभ होते ही खरीफ की कोई शीघ्र बढ़ने तथा पकने वाली फसल उगाई जाये और इसकी कटाई के तुरंत बाद खेत की तैयारी कर (नमी को संरक्षित रखते हुए) अक्टूबर से ही रबी फसलों की बोआई करें और पाटा चलाकर बीज–जमाव समान रूप से प्राप्त करें।
4. सीमित भूमि जल का उचित प्रयोग करने के लिए वर्षाधीन इलाकों में बीज की मात्रा कम कर और पंक्तियों की दूरी बढ़ा कर अधिकतम लाभ प्राप्त किया गया है।
5. बोआई से पहले बीज को पानी में भिगों देना चाहिए जिससे अच्छे बीज अलग हो जायें तथा बीज के अंकुर फुटाव में जितने पानी की जरूरत हो वह भिगोने से प्राप्त हो सकें।
6. भूमि एवं बीज शोधन के बाद बोआई करने से एक समान जमाव पाया गया। अतः भूमि उपचार के लिए कार्बराइल 10 प्रतिशत धूल 20–25 किलोग्राम हेक्टेयर या फराडान/थिमेट 12 किलोग्राम/हेक्टेयर की दर से अंतिम जोताई के समय खेत में विधिवत मिला दें। इसी प्रकार बीज शोधन के लिए कार्बेन्डाजिम 50 प्रतिशत या थिरम 75 प्रतिशत 2–2.5 ग्राम/किलोग्राम बीज को भिगोने के बाद किसी छायादार स्थान में सूखाकर सूखे कीटनाशक दवा से शोधन के उपरांत जीवाणु कल्चर से उपचार करना लाभप्रद पाया गया है।
7. प्रारंभिक अवस्था से ही खरपतवारों का नियंत्रण करना नितांत आवश्यक हो जाता है क्योंकि ये मृदा, जल, स्थान, पोषक तत्व एवं प्रकाश समान रूप से पौधों को प्राप्त होने में रूकावट पहुँचाते हैं।
8. उथली जड़ों वाली फसलों को अधिक गहराई तक जाने वाली फसलों के साथ बोने से मृदा–जल के विभिन्न स्तरों के समुचित उपयोग होता है। खरीफ में ज्वार के साथ अरहर या मूँगफली के साथ, अरहर और रबी में गेहूँ/जौ के साथ सरसों या अलसी का लगाना अति उत्तम मिश्रित फसल का उदाहरण है।
9. असिंचित क्षेत्रों में नमी की कमी के कारण फसलों में पोषक तत्वों की कमी दिखायी देती है। अतः इसके निवारण के लिए, जैसे नाइट्रोजन और जस्ते की कमी को अधिकतम एक प्रतिशत से दो प्रतिशत तक पर्णीय छिड़काव कर दूर किया जा सकता है।
10. किसान फसल नियोजन एवं फसल चक्र को क्रमबद्ध कर वर्षाधीन खेती द्वारा अधिकतम लाभ ले सकते हैं। उदाहरणार्थ, एक दाल वाली फसल के बाद दो दाल वाली और दो दाल वाली फसल के बाद एक दाल वाली फसल सिद्धांत लें। सारांशतः किसान भाई उपर्युक्त सुझायी गयी वैज्ञानिक तकनीक अपनाकर वर्षा पर निर्भर खेती से भरपूर पैदावार ले सकते हैं।

प्लास्टिक प्रदूषण : समस्या और निदान

यशी बाजपेयी[1], लक्ष्मी रस्तोगी[2], मुथुकुमार एम.[3] एवं अंजु बाजपेयी[4]
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

मानव जीवन शैली का अनिवार्य हिस्सा बन गया प्लास्टिक आज जल, थल और नभ के लिये भयावह पर्यावरणीय संकट बन गया है। ध्यातव्य है कि दैनिक उपयोग की वस्तुओं से लेकर संचार, वाहन, भवन निर्माण और अंतरिक्ष यानों तक में प्लास्टिक का भरपूर इस्तेमाल किया जा रहा है। हिमालय से लेकर धरती का हर एक स्रोत प्लास्टिक से प्रभावित है। वैज्ञानिकों का तो यहाँ तक दावा है कि अंतरिक्ष में कबाड़ के रूप में प्लास्टिक के जो 17 करोड़ टुकड़े इधर–उधर घूम रहे हैं, उनमें बड़ी संख्या प्लास्टिक के कल–पुर्जों के हैं जो सक्रिय उपग्रहों से टकराकर उन्हें नष्ट कर सकते हैं। नये अनुसंधानों से पता चला है कि अकेले आर्कटिक सागर में 100 से 1200 टन के बीच प्लास्टिक हो सकता है एवं 2050 के आते–आते समुद्रों में मछलियों की तुलना में प्लास्टिक कहीं ज्यादा होगा। विश्व आर्थिक मंच के अनुसार भारत में सालाना 56 लाख टन प्लास्टिक कूड़ा पैदा होता है और भारतीय रोजाना 15000 टन प्लास्टिक कचरे के रूप में फेंक देते है। भारत के समुद्रीय क्षेत्रों में तो प्लास्टिक का इतना अधिक मलबा एकत्रित हो गया है कि समुद्री जीव–जन्तुओं को जीवनयापन करना लगभग असंभव हो रहा है।

समुद्र में प्लास्टिक कचरा का प्रदूषण

इस प्लास्टिक की वजह से दुनिया में 1200 से ज्यादा समुद्री जीवों की प्रजातियाँ खतरे में हैं। यही बचा–खुचा कचरा नालियों से होता हुआ नदी, नालों, तालाबों में बहकर समुद्र में पहुँच जाता है। इसीलिए आर्कटिक सागर के बारे में किया गया अध्ययन चौंकाता है। इस अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि 2050 तक इस सागर में मछलियों की तुलना में प्लास्टिक के टुकड़े कहीं ज्यादा संख्या में तैरते दिखायी देंगे। साइंस एडवांसेज नामक शोध पत्रिका में छपे एक अध्ययन में बताया गया है कि आर्कटिक समुद्र के बढ़ते जल में इस समय 100 से 1200 टन के बीच प्लास्टिक हो सकता है। जे.आर. जाम बैक का दावा है कि समुद्र की तलहटी में 5 खरब प्लास्टिक के टुकड़े जमा हैं। यही वजह है कि समुद्री जल में ही नहीं मछलियों के उदर में भी ये टुकड़े पाये जाने लगे हैं। सबसे ज्यादा प्लास्टिक ग्रीनलैंड के पास स्थित समुद्र में मौजूद है। प्लास्टिक के ये बारीक कण (पार्टीकल) समुद्री सतह को वजनी बनाकर इसका तापमान बढ़ा रहे हैं। समुद्र में मौजूद इस प्रदूषण के समाधान की दिशा में पहल करते हुए इंग्लैंड की संसद ने पूरे देश में पर्सनल केयर प्रोडक्ट के प्रयोग पर प्रतिबंध का प्रस्ताव पारित किया है। भारतीय राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान (एन.आई.ओ.) के अनुसार भारत के मुंबई, अंडमान–निकोबार और केरल के समुद्री तट सबसे ज्यादा प्रदूषित हैं। दुनिया के 38 देशों के 93 स्वयंसेवी संगठन समुद्र और अन्य जलस्रोतों में घुल रहे प्लास्टिक से छुटकारे के लिये प्रयत्नशील हैं। इनके द्वारा लायी गयी जागरुकता का ही परिणाम है कि दुनिया की 119 कंपनियों ने 448 प्रकार के व्यक्तिगत सुरक्षा उत्पादों में प्लास्टिक का प्रयोग पूरी तरह बंद कर दिया गया है। गोवा स्थित एन.आई.ओ. के अनुसार जहाजरानी मार्गों से गुजरने के दौरान जहाजों से गिरने वाला प्लास्टिक, मानसून के दौरान बरसात के पानी के साथ बहकर आने वाला प्लास्टिक कचरा समुद्री जीवों के लिये हानिकारक है। अगर समुद्र में प्लास्टिक कम करना है तो हमें धरती पर इसका इस्तेमाल कम करना होगा। आर्कटिक सागर के बाबत जो अध्ययन हुआ है वैसे ही अध्ययन हिन्द, प्रशान्त और अरब सागर के साथ बंगाल की खाड़ी का भी होना चाहिए। इससे समुद्र में बढ़ते प्रदूषण की और वास्तविकता सामने आयेगी।

अंतरिक्ष में प्लास्टिक का कचरा

मानव विकास और उन्नत विज्ञान की चाहत में प्रत्येक देश अंतरिक्ष में उपग्रह भेजने में लगे हैं। ये मानव समाज के लिये आवश्यक हैं क्योंकि इनके प्रयोग से जलवायु

[1]ए.आर.एफ., [2]पीएचडी शोधकर्ता, [3]वैज्ञानिक एवं [4]प्रधान वैज्ञानिक

परिवर्तन के प्रभावों को देखने से लेकर रक्षा प्रयोजनों की निगरानी भी की जाती है। किन्तु इसके कारण पुराने हो गये अंतरिक्ष यान और उपग्रह कबाड़ के रूप में आकाश में भटक रहे हैं और धीरे–धीरे समूचा ब्रह्माण्ड प्लास्टिक कचरे की चपेट में आ गया है। पुराने रॉकेटों और व्यर्थ हो चुके उपग्रहों का मलबा बहुत तेज गति से पृथ्वी की धुरी पर घूमता है। इसमें वातावरण की ऊपरी सतह को क्षति पहुँचाने की क्षमता होती है। वर्तमान समय में अंतरिक्ष की कक्षा में 3000 से अधिक उपग्रह सक्रिय हैं तथा अंतरिक्ष में कबाड़ के रूप में 17 करोड़ टुकड़े तैर रहे हैं जो किसी भी समय सक्रिय उपग्रहों से टकराकर उन्हें नष्ट कर सकते हैं। इन टुकड़ों से अंतर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन के नष्ट होने का भी खतरा है। ऐसा होने पर यह विश्व अर्थव्यवस्था के लिये विनाशकारी साबित हो सकता है।

प्लास्टिक द्वारा भूमि प्रदूषण

दुनिया के महासागरों के चारों ओर लाखों टन प्लास्टिक के द्वीपों ने हाल ही में मीडिया के ध्यान को आकर्षित किया है। लेकिन प्लास्टिक प्रदूषण तर्कसंगत रूप से भूमि पर आधारित मनुष्यों, पौधों और जानवरों के लिये एक बड़ा खतरा बनता जा रहा है। आज हम प्लास्टिक के खतरनाक पहलुओं के बारे में जब भी सोचते हैं तो एक बार अपनी उन गायों की ओर जरूर देखते हैं, जो कचरे में मुँह मारकर पेट भरती दिखायी देती हैं। पेट में पॉलिथीन जमा हो जाने के कारण मरने वाले पशुओं की मौत की खबरें भी आये दिन आती रहती हैं। यह समस्या भारत की ही नहीं बल्कि पूरी दुनिया की है। प्लास्टिक के आधिकतर अपशिष्ट लैंडफिल तथा अन्य भूमिगत स्थानों में जमा होते हैं तथा इसे मिट्‌टी और पानी में संभावित जहरीले पदार्थों को लीच करने से अनेक दुष्प्रभाव हो रहे हैं। जर्मनी में शोधकर्ता चेतावनी दे रहे हैं कि मिट्टी, तलछट और ताजे पानी में माइक्रोप्रोस्टिक्स के प्रभाव से इस तरह के पारिस्थितिक तंत्र पर दीर्घकालिक नकारात्मक प्रभाव हो सकता है। पर्यावरण के आधार पर स्थलीय माइक्रोप्रोस्टिक प्रदूषण, समुद्री माइक्रोप्रोस्टिक प्रदूषण से चार से 23 गुना अधिक अनुमानित है।

प्लास्टिक कबाड़ से छुटकारे के उपाय तथा पुनर्चक्रण

आधुनिक युग में मानव की तरक्की में प्लास्टिक ने अमूल्य योगदान दिया है। इसलिए कबाड़ के रूप में जो प्लास्टिक अपशिष्ट बचता है, उसका पुनर्चक्रण किया जाना आवश्यक है क्योंकि प्लास्टिक के यौगिकों की यह खासियत है कि ये करीब 400 साल तक नष्ट नहीं होते हैं। इनमें भी प्लास्टिक की 'पॉली एथिलीन टेराथ्थलेट' ऐसी किस्म हैं, जो इससे भी ज्यादा लंबे समय तक जैविक प्रक्रिया शुरू होने के बावजूद नष्ट नहीं होती है। इसलिए प्लास्टिक का पुनर्चक्रण कर इससे नये उत्पाद बनाने की जरूरत है। यदि भारत में कचरा प्रबंधन सुनियोजित और कचरे का पुनर्चक्रण उद्योगों की श्रृंखला खड़ी कर शुरू हो जाये तो इस समस्या का निदान तो सम्भव होगा ही रोजगार के नये रास्ते भी खुलेंगे। भारत में जो प्लास्टिक कचरा पैदा होता है, उसमें से 40 प्रतिशत का आज भी पुनर्चक्रण नहीं हो पा रहा है। प्लास्टिक की विलक्षणता यह भी है कि इसे तकनीक के द्वारा पाँच से भी अधिक बार पुनर्चक्रित किया जा सकता है। इस प्रक्रिया के दौरान इससे वैक्टो–ऑयल भी सह उत्पाद के रूप में निकलता है। इसे डीजल वाहनों में ईंधन के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। अमेरिका, ब्रिटेन, ऑस्ट्रेलिया और जापान समेत अनेक देश इस कचरे से ईंधन प्राप्त कर रहे हैं। प्लास्टिक के पुनर्चक्रण और उसके विकल्प के रूप में कुछ नयी शोध पर जानकारी बहुत प्रासंगिक है।

प्लास्टिक से सड़क का निर्माण

सन 2002 में प्लास्टिक अपशिष्ट से सड़क निर्माण के लिये चूर्ण का आविष्कार मदुरई के रसायनशास्त्र प्रोफेसर राजगोपाल वासुदेवन द्वारा किया गया इस प्रौद्योगिकी द्वारा राष्ट्रीय ग्राम सड़क विकास अभिकरण ने सड़कें बनाने का कार्य किया जा रहा है। अब तक मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और झारखंड में 16 हजार किलोमीटर से ज्यादा लंबी सड़कें बन भी चुकी हैं। यदि प्लास्टिक के अपषिष्ट से भारतीय ग्रामों में कुल 24.5 लाख किमी सड़कें बनें, तो 24.5 लाख टन डामर बचेगा तथा 12,250 करोड़ रुपये की बचत होगी। प्लास्टिक से बनी सड़कों से लगभग 20,000 करोड़ की जो ग्रामीण सड़कें सालाना ध्वस्त हो जाती हैं वह नुकसान भी कम हो सकता है।

जीवाणु दिलाएगा प्लास्टिक के अपशिष्ट से मुक्ति

हाल ही में अमेरिका की स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय और

चीन की बेहांग विश्वविद्यालय के अनुसंधानकर्ताओं ने पशुओं की आँत में पाये जाने वाले एक ऐसे जीवाणु और मीलवर्म की तलाश की है जो अनेक प्रकार के पॉलिस्टिरीन और स्टाइरोफोम को खाने और उसे पचाने में सक्षम पाये गये हैं। वर्ष 2016 में, जापानी वैज्ञानिकों ने प्लास्टिक खाने वाले जीवाणु इडियोनेला सेकेन्सिस की खोज की जो प्लास्टिक अपशिष्ट को और तीव्रता से नष्ट करते हैं। ये जीवाणु पतली फिल्म वाली प्लास्टिक को 30 डिग्री सेल्सियस के तापमान पर छह सप्ताह में खत्म कर देते हैं। इनके शरीर से निकलने वाले एंजाइम इसे टेरेथ्थौलिक अम्ल और एथिलीन ग्यालकोल में बदल देते हैं जो पर्यावरण के लिये हानिकारक नहीं रह जाते हैं। इन जीवाणु को रिसाइकलिंग सेंटर में कचरे के ढेरों में डाला जायेगा, जहाँ ये डंप किये गये प्लास्टिक की बोतलों को कुतरने का काम करेंगे। वस्तुतः पी.ई.टी–डाइजेस्टिंग एंजाइम्स ने ही प्लास्टिक के रिसाइकल की वास्तविक मार्ग तैयार की है जिसे कूड़े–कचरे के साथ मिला कर सभी प्रकार के प्लास्टिक बोतलों को वास्तविक रूप से खत्म किया जा सकता है तथा वास्तविक रिसाइकलिंग सिस्टम के जरिये फ्रेष प्लास्टिक बनाया जा सकता है। अतः प्लास्टिक अपशिष्ट का सुनियोजित एवं वैज्ञानिक ढंग से व्यापाक स्तर पर एंजाइम इनोवेशन द्वारा निष्पादन होने से न केवल प्रदूषण से निजात मिलेगी बल्कि नये रोजगार का सृजन भी होगा।

पानी में घुलनेवाला प्लास्टिक

इटली की एक छोटी कंपनी 'बायो ऑन' जैव प्लास्टिक के क्षेत्र में नवीनतम प्रयास का प्रतिनिधित्व कर रही है जहां ऐसी प्लास्टिक का निर्माण हो रहा है जो पानी में घुल सकती है। यह कंपनी चुकंदर से निकलने वाले कचरे से प्लास्टिक बनाती है। विशेषज्ञों का कहना है कि चुकंदर के उत्पादन से निकलने वाले उत्पाद से बनने वाला प्लास्टिक पर्यावरण के लिये कोई खतरा नहीं बनेगा। इसके अलावा पेट्रोलियम पदार्थों से बनने वाले प्लास्टिक पर निर्भरता को कम करने में कामयाबी मिल सकती है।

प्लास्टिक के उपयोग को कम करें

प्लास्टिक का थैले से होने वाले पर्यावरण को नुकसान को कम करने की दिशा में हर एक इंसान कुछ बेहद जरूरी कदम उठा सकता है। सतर्कता और जागरूकता दो बेहद जरूरी चीजें हैं जिनसे प्लास्टिक के खिलाफ अपनाया जा सकता है। खुद पर नियंत्रण इस समस्या को काफी हद तक कम कर सकता है एवं इसके अपशिष्ट का समुचित प्रबंधन कर इससे सड़कें और ईंधन तक बनायी जा सकती है। इसके बावजूद यदि प्लास्टिक के अवशेष बचते हैं तो इन्हें जीवाणुओं से नष्ट किया जा सकता है। भारत के स्वच्छता अभियान के अंतर्गत गाँव देहात और शहरों मे प्लास्टिक को कम–से–कम उपयोग मे लाने की आवश्यकता पर जोर दिया जा रहा है।

प्रेमचंद

(31 जुलाई 1880–8 अक्टूबर 1936) हिन्दी और उर्दू के महानतम भारतीय लेखकों में से एक हैं। मूल नाम धनपत राय श्रीवास्तव, प्रेमचंद को नवाब राय और मुंशी प्रेमचंद के नाम से भी जाना जाता है। उपन्यास के क्षेत्र में उनके योगदान को देखकर बंगाल के विख्यात उपन्यासकार शरतचंद्र चट्टोपाध्याय ने उन्हें उपन्यास सम्राट कहकर संबोधित किया था। प्रेमचंद ने हिन्दी कहानी और उपन्यास की एक ऐसी परंपरा का विकास किया जिसने पूरी सदी के साहित्य का मार्गदर्शन किया। आगामी एक पूरी पीढ़ी को गहराई तक प्रभावित कर प्रेमचंद ने साहित्य की यथार्थवादी परंपरा की नींव रखी। उनका लेखन हिन्दी साहित्य की एक ऐसी विरासत है जिसके बिना हिन्दी के विकास का अध्ययन अधूरा होगा। वे एक संवेदनशील लेखक, सचेत नागरिक, कुशल वक्ता तथा सुधी (विद्वान) संपादक थे। बीसवीं शती के पूर्वार्द्ध में, जब हिन्दी में तकनीकी सुविधाओं का अभाव था, उनका योगदान अतुलनीय है। प्रेमचंद के बाद जिन लोगों ने साहित्य को सामाजिक सरोकारों और प्रगतिशील मूल्यों के साथ आगे बढ़ाने का काम किया, उनमें यशपाल से लेकर मुक्तिबोध तक शामिल हैं। उनके पुत्र हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार अमृतराय हैं जिन्होंने इन्हें कलम का सिपाही नाम दिया।

वायु प्रदूषण और मानव स्वास्थ्य

देवेन्द्र पाण्डेय[1], निकिता निहाल[2] एवं देवानन्द गिरी[3]
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

वायुमंडल पर्यावरण का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। और मानव जीवन के लिये वायु का होना अपरिहार्य। वायुरहित स्थान पर जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है। यदि प्राण देने वाली वायु शुद्ध नहीं होगी तो वह प्राण देने के बजाय प्राण ले लेगी।

[1]प्रधान वैज्ञानिक एवं [2,3]ए.आर.एफ.

आज प्रदूषण मानव सेहत के लिये एक बड़ी समस्या बनता जा रहा है। हवा में प्रदूषण का कारण उड़ती हुई धूल, कारखानों के परिचालन या जंगल की आग से अनेक प्रकार के हानिकारक कण आदि है। दूसरा सबसे बड़ा कारण आबादी का बढ़ना जिसकी वजह से स्कूटर, कारों और उनके उद्योगों का बढ़ना, थर्मल पावर प्लांट का बढ़ना प्राकृतिक पर्यावरण में बदलाव का होना है।

आज मानव विकास के पथ पर अग्रसर है और उत्पादन क्षमता बढ़ा रहा है। मानव ने अपने औद्योगिक लाभ के लिये बिना सोचे प्राकृतिक साधनों को नष्ट किया जिससे प्रकृति में असंतुलन पैदा हुआ और वायुमंडल भी इससे नहीं बच सका। वायु प्रदूषण केवल भारत की समस्या नहीं है। आज विश्व की अधिकांश जनसंख्या इसकी चपेट में है।

हमारे वायुमंडल में नाइट्रोजन, ऑक्सीजन, कार्बन डाइ ऑक्साइड, कार्बन मोनोआक्साइड आदि गैस एक निष्चित अनुपात में उपस्थित रहती है। यदि इनके अनुपात के संतुलन में परिवर्तन होते हैं तो वायुमंडल अशुद्ध हो जाता है। इसे अशुद्ध करने वाले प्रदूषण के कारणों में कार्बन डाई ऑक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड, हाइड्रोकार्बन, धूल मिट्टी के कण आदि हैं जो वायुमंडल को प्रदूषित करते हैं।

वायु प्रदूषण के स्रोत

वायु प्रदूषण के प्रमुख दो स्रोत हैं :

(1) प्राकृतिक स्रोत।

(2) मानव जनित स्रोत।

(1) प्राकृतिक स्रोत

कभी–कभी प्रकृति में उत्पन्न असंतुलित व्यवहार प्रदूषण का कारण बनते हैं। इन असंतुलित व्यवहारों के लिये मनुष्य ही जिम्मेदार होता है। इनमें से मुख्य निम्नानुसार है।

1. **ज्वालामुखी उद्‌गार :** विश्व में लगभग 450 जीवित ज्वालामुखी हैं। इन ज्वालामुखियों से लगातार लाखों टन धूल के कण, राख के कण, कार्बन मोनोऑक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड जैसी विषैली गैसें, विभिन्न धातुओं के कण, लावा इत्यादि उत्पन्न होकर वायुमंडल को प्रदूषित करते हैं।
2. **दावाग्नि :** वनों में लगने वाली आग को दावाग्नि कहते हैं। दावाग्नि से तापमान को वृद्धि होने के साथ–साथ अत्यधिक मात्रा में निकलने वाला धुआँ तथा राख के कण वायुमंडल को प्रदूषित करते हैं।
3. **दलदल भूमि :** डेल्टाई भूमि, बड़े–बड़े जलाशयों एवं समुद्री किनारों पर उपस्थित दलदलों से निरंतर मेथेन (सी.एच.4), हाइड्रोजन सल्फाइड (एच–2–एस) आदि गैसें वातावरण में निस्तारित होते हैं। जो वायुमंडलीय गैसों में असतुंलन उत्पन्न करते हैं।
4. **धरती की सतह से उत्पन्न प्रदूषक :** धरती की सतह से हवा में उड़ने वाले विषाणु, धूल तथा मिट्टी के कण, सागरों एवं महासागरों से उठने वाले लवण फुहार, कोहरा, उल्कापात, आँधी, तूफान, पुष्पों के परागकण, सूक्ष्मजीव इत्यादि वायु प्रदूषण में अपना योगदान देते हैं।
5. **कार्बनिक पदार्थों का जैविक अपघटन :** मृत जीव–जंतुओं एवं पादपों के जैविक अपघटन के फलस्वरूप हाइड्रोजन सल्फाइड, सल्फर डाईआक्साइड, मीथेन आदि गैसें वायु प्रदूषण को बढ़ाती हैं।

(2) मानव जनित स्रोत

वर्तमान युग में प्राकृतिक स्रोत की अपेक्षा मानवीय स्रोत वायु प्रदूषण में सक्रिय योगदान दे रहे हैं। वायु प्रदूषण फैलाने वाले प्रमुख मानव जनित स्रोत निम्नलिखित हैं।

1. **निर्माण उद्योग :** वायु प्रदूषण के फैलाव के लिये विनिर्माण उद्योगों से उत्सर्जन एक प्रमुख कारक है। ऐसे कारखानों से निकलने वाले धुएँ में अनेक हानिकारक गैस और कण मौजूद होते हैं जो वातावरण में प्रवेश कर वायु प्रदूषण फैलाते हैं। हवा में नाइट्रोजन, सल्फर, कार्बन मोनोऑक्साइड और कार्बन डाइऑक्साइड गैसों और अन्य रासायनिक अपशिष्टों के निरंतर मिश्रण के कारण हवा की गुणवत्ता हर जगह खराब हो रही है।
2. **वाहनों से निकलता धुआँ :** वाहनों से निकलने वाला धुआँ पूरी दुनिया भर में वायु प्रदूषण के जिम्मेदार प्रदूषकों की मात्रा को फैला रहा है। वाहनों के कारण वायु प्रदूषण के प्रभाव को प्रत्येक शहर में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। वाहनों में मौजूद पेट्रोलियम और अन्य जीवाष्म ईंधन के दहन के कारण कार्बन डाइऑक्साइड और कार्बन मोनोऑक्साइड विषाक्त गैसें निकलती है और हवा को प्रदूषित करती हैं।
3. **बिजली उत्पन्न करना :** बिजली संयंत्रों को चलाने के लिये कोयला और अन्य जीवाष्म ईंधन का बड़े पैमाने पर उपयोग किया जाता है। इन संयंत्रों में बिजली पैदा करने के लिये जीवाष्म ईंधन के दहन के कारण सल्फर डाइऑक्साइड, कार्बन डाइऑक्साइड और नाइट्रोजन ऑक्साइड जैसे विभिन्न प्रदूषकों का बड़े पैमाने पर उत्पादन होता है जो हवा को प्रदूषित करते हैं।

4. **चिमनी के माध्यम से उत्सर्जन :** विनिर्माण संयंत्रों में लंबे समय तक चिमनी द्वारा उत्सर्जित जीवाष्म ईंधन जारी रहता है। चिमनी से निकलने वाले धुएँ में कार्बन मोनोऑक्साइड, जैविक यौगिकों और विभिन्न रासायनिक गैस हवा में मिल कर वायु प्रदूषण फैलाते हैं। पेट्रोलियम रिफाइनरी उद्योग भी हवा में बड़ी मात्रा में हाइड्रोकार्बन का उत्पादन करता है जो खतरनाक प्रदूषक है।
5. **अयस्क को निकालने के लिए पृथ्वी–खनन :** पृथ्वी के गर्भ से विभिन्न धातुओं से अयस्क और कोयले को निकालने के लिये गतिविधियाँ जैसे कि निरंतर ड्रिलिंग, ब्लास्टिंग आदि का प्रयोग किया जाता है। इन गतिविधियों के अलावा परिवहन भी इस उद्देश्य के लिये प्रयोग किया जाता है। मीथेन, कार्बन मोनोऑक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड इत्यादि के अलावा ड्रिलिंग, ब्लास्टिंग से निकलने वाले धूल के कण भी हवा को प्रदूषित करते हैं।
6. **भीतरी वायु प्रदूषण :** भीतरी वायु प्रदूषण अनेक रसायनों द्वारा फैलता है। सफाई में इस्तेमाल सीसा और पेंट तथा कोयला, लकड़ी, रसोई गैस, केरोसीन इत्यादि जो खाना पकाने में इस्तेमाल करते हैं। रसायन का उपयोग घर या कार्यालयों के विभिन्न कार्यों में किया जाता है और जहाँ कम वेंटिलेशन होता है, वे घातक साबित हो सकते हैं। फर्नीचर पर पॉलिश करने और स्प्रे पेंट बनाने में इस्तेमाल किये जाने वाले सॉल्वेंट्स में हाइड्रोकार्बन पाये जाते हैं। जब फर्नीचर पॉलिश या पेंट किया जाता है तो ये हाइड्रोकार्बन हवा में उड़ कर प्रदूषण बढ़ाते हैं।
7. **अणु ऊर्जा संबंधी परियोजनाएँ :** परमाणु बम और परमाणु बिजली उत्पन्न करने वाले आइसोटोप अस्थायी हैं। विस्फोट के समय वे दूर–दूर वातावरण में फैल गये और बाद में इनक्यूबेटर के रूप में पृथ्वी पर गिर गये जिससे वातावरण पर घातक प्रभाव पड़ता है। हिरोषिमा और नागासाकी पर परमाणु बमों का असर लंबे समय तक देखने को मिला है।
8. **जानवरों का शरीर :** भारत में मरे हुए पशु का चमड़ा हटाने की परंपरा है। लोग बस्तियों से मृत जानवरों को ले जाते हैं और उनकी खाल निकल कर बाकी को खुले में छोड़ देते हैं। जब जानवरों का मृत शरीर सड़ने लगता है तो इससे दुर्गन्ध आने लगता है जो वायु प्रदूषण को जन्म देता है।
9. **शौचालय की समुचित साफ–सफाई का ना होना :** किसी भी क्षेत्र में अगर सार्वजनिक और निजी शौचालयों की नियमित सफाई ना हो तो वहाँ की वायु प्रदूषित होनी निश्चित है।
10. **कचरा अपशिष्ट का अपघटन और नालियों की सफाई का नहीं होना :** लोग अक्सर गलियों या अपने घरों में नालियों के द्वारा कचरा बाहर फेंकते हैं जिससे दुर्गन्ध फैल जाती है। यह समस्या खराब जल निकासी की सुविधा के कारण विकसित होती है जो विभिन्न रोगों का कारण बनती है और मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करती है।
11. **कृषि कार्य :** फसलों की पैदावार बढ़ाने के लिये किसान अमोनिया आधारित उर्वरक का उपयोग करते हैं जो हानिकारक वायु प्रदूषक है। इसके अलावा किसान अपनी खेतों को सुरक्षित रखने के लिए खेतों में अनेक तरह के जहरीले कीटनाषकों का भी इस्तेमाल करते हैं। यह कीटनाषक वायु प्रदूषण वातावरण में अनेक प्रकार के अवांछित रसायनों का उत्सर्जन करते हैं जिससे वायु प्रदूषण बढ़ता है।

पर्यावरण को प्रदूषित करने वाली गैसें

निम्नलिखित गैसें जो प्रमुख प्रकार की वायु प्रदूषक हैं।

1. **ओजोन गैस :** ओजोन गैस अच्छी और बुरी दोनों है। हानिकारक ओजोन गैस निचले भाग अर्थात् हमारे वायुमंडल के भूजल स्तर के पास पायी जाती है जिससे अस्थमा और अन्य श्वसन विकारों का जन्म होता है। यह गैस सूरज की रोशनी की उपस्थिति में वाहनों, विद्युत संयंत्रों, औद्योगिक बॉयलरों, रिफाइनरी, रासायनिक संयंत्रों और अन्य स्रोतों द्वारा उत्सर्जित प्रदूषकों की रासायनिक प्रतिक्रिया पर उत्पन्न होती है लेकिन बायोस्फियर (जीवमंडल) की सतह से 6–30 मील की दूरी पर स्थित ओजोन परत पराबेंगनी

किरणों से हमें बचाती भी है। ओजोन से आँखों में पानी आता है और जलन भी होती है।

2. **क्लोरो–फ्लोरो कार्बन :** यह ओजोन को नष्ट करने वाला एक रसायन है। जब इसको एयर कन्डीशनिंग और रेफ्रीजरेटर के लिये उपयोग किया जाता है तब इसके कण हवा से मिलकर हमारे वायुमंडल के समताप मंडल स्ट्रैटोस्फीयर तक पहुँच जाते हैं और दूसरी गैसों से मिलकर ओजोन परत को हानि पहुँचाते हैं। यही ओजोन परत जमीन पर जीव–जंतुओं तथा वनस्पतियों को सूर्य की नुकसान पहुँचाने वाली पराबैंगनी किरणों से बचाती हैं। यही कारण है कि क्लोरो–फ्लोरो कार्बन मनुष्य और अन्य जैविक जगत के लिये बहुत बड़ा खतरा है।

3. **सल्फर डाइऑक्साइड गैस :** जब कोयला को थर्मल पावर प्लांट में जलाया जाता है तो उससे सल्फर डाइऑक्साइड गैस निकलती है। धातु को गलाने और कागज को तैयार करने में निकलने वाली गैसों में भी सल्फर डाइऑक्साइड होती है। जीवाष्म ईंधन के दहन का परिणाम सल्फर डाइऑक्साइड गैस के रूप में होता है जो अत्यधिक विषैली होती है और यह धुँध पैदा करने और अम्लीय वर्षा के लिए भी जिम्मेदार होती है। सल्फर डाईऑक्साइड की वजह से फेफड़ों की बीमारियाँ हो जाती हैं।

4. **नाइट्रोजन ऑक्साइड गैस :** इसके कारण धुँध और अम्ल की वर्षा होती है। यह गैस पेट्रोल, डीजल और कोयला के जलने से पैदा होती है। इससे बच्चों में बहुत से प्रकार के रोग हो जाते हैं।

5. **कार्बन डाईऑक्साइड :** यह एक ग्रीन हाउस गैस है। जब मनुष्य कोयला, ऑयल और प्राकृतिक गैस को जलाता है तो इन सबके जलने से कार्बन डाइऑक्साइड गैस पैदा होती है।

6. **कार्बन मोनोऑक्साइड गैस :** यह जहरीली गैस जो मुख्यतः ऑटोमोबाइल द्वारा उत्सर्जित होती है। एक खतरनाक वायु प्रदूषक है। वाहनों से बाहर आने वाले धुएँ के अलावा, घर के अंदर एयर कंडीशनर, फ्रिज और हीटर द्वारा भी कार्बन मोनोऑक्साइड गैस का उत्सर्जन होता है। यह एक अधजला कार्बन है। यह सिगरेट से भी पैदा होता है। यह ऑक्सीजन की कमी पैदा करता है जिससे हम नींद में परेशानी महसूस करते हैं।

7. **सीसा :** यह डीजल, पेट्रोल, बैटरी, पेंट और हेयर डाई आदि में पाया जाता है। लेड खासतौर से बच्चों को प्रभावित करता है। इससे दिमाग और पेट की क्रिया खराब हो जाती है। इससे कैंसर भी हो सकता है।

8. **निलंबित अभिकणीय पदार्थ :** यह प्रदूषक हवा में मौजूद सभी ठोस और तरल कणों के योग में वाहनों और कारखानों के धुएँ के रूप में हमारे फेफड़ों में प्रवेष कर श्वसन संबंधी समस्याओं को जन्म देते हैं।

वायु प्रदूषण-संबंधी रोगों की बढ़ती संख्या

वायु प्रदूषण के सबसे बड़े कारणों में कार्बन मोनो ऑक्साइड और नाइट्रोजन जैसी गैसें हैं। इसके अलावा वाहनों से उत्पन्न होता धुआँ भी वायु प्रदूषण संबंधी रोगों के प्रमुख कारणों में हैं। ये गैस और कण फेफड़ों के माध्यम से रक्त में चले जाते हैं और स्वास्थ्य के लिये खतरा बन जाते हैं। हाल में किये गये एक शोध के अनुसार प्रदूषण कणों के संपर्क में आने से मानव के स्वास्थ्य पर बहुत बुरा असर पड़ता है। वायु प्रदूषण श्वसन प्रणाली में बाधा डालने और मस्तिष्क के रोगों के साथ–साथ दिल के दौरे का भी मुख्य कारण है।

वायु प्रदूषण के कारण पृथ्वी का तापमान बढ़ता है क्योंकि वातावरण में कार्बन डाइ ऑक्साइड, मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड का प्रभाव सूर्य से आने वाली गर्मी के कारण बढ़ जाता है जिससे स्वास्थ्य को अधिक नुकसान हो सकता है। तापमान में अचानक वृद्धि के कारण अलग–अलग रोगों जैसे दस्त, पेट में दर्द, उल्टी, सिरदर्द, बुखार और शरीर में दर्द की संख्या भी बढ़ रही है। गर्मी में वृद्धि से त्वचा रोग और खुजली की समस्याएँ भी उत्पन्न हो रही हैं। प्रदूषित हवा में मौजूद धूल और मिट्टी की मात्रा में वृद्धि के कारण अधिकांश लोगों में कई प्रकार की त्वचा रोग होने लगते हैं।

1. **फेफड़ों के रोग :** हमारे स्वास्थ्य पर प्रदूषण का गहरा असर पड़ता है। इससे अस्थमा और क्रोनिक ऑब्सट्रक्टिव पल्मोनरी डिजीज (सी.ओ.पी.डी.) बढ़ता

है जिनमे क्रोनिक ब्रॉन्काइटिस और एम्फ्सेमा जैसे रोग शामिल हैं। वायु प्रदूषण का मानव शरीर पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। हवा में मौजूद एलर्जी के कण विभिन्न रोगों को पैदा करते हैं। प्रदूशित वायु के कारण होने वाले रोगों के सबसे आम उदाहरण अस्थमा, ब्रोंकाइटिस, त्वचा रोग, सी.ओ.पी.डी., आँखों में जलन आदि श्वसन रोग हैं। फेफड़ों के रोगों का प्रमुख कारण, विशेषकर बच्चों में, वायु प्रदूषण ही है। इसके अलावा कई प्रकार की एलर्जी से भी लोग परेशान हो रहे हैं। गर्मी के मौसम में प्रदूषण तत्व बढ़ जाते हैं। वायु में रेस्पिरेबल सस्पेंडेड पार्टिकुलेट मैटर (आर.एस.पी.एम.) की अधिक मात्रा स्वास्थ्य के लिये खतरनाक हो सकती है क्योंकि यह कई अनेक श्वसन रोगों का कारण है।

2. **कैंसर :** वायु प्रदूषण से फेफड़े के कैंसर का खतरा बढ़ जाता है। इस तथ्य को पहले ही पहचाना जा चुका है कि प्रदूषित हवा और अस्थमा का फेफड़ों के रोगों में सीधा संबंध है। तेजी से बढ़ता प्रदूषण फेफड़ों में कैंसर के फैलने का मुख्य कारक है। हाल के अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि वायु प्रदूषण, फेफड़ों के कैंसर और विभिन्न हृदय रोगों के बीच एक गहरा संबंध है। यद्यपि धूम्रपान फेफड़ों के कैंसर के सबसे बड़े कारणों में से एक माना जाता है। किन्तु बहुत से लोग अपने आस–पास के वातावरण में मौजूद प्रदूषण के कारण कैंसर का शिकार होते हैं। हमारे देश में फेफड़े के कैंसर, ट्यूमर और तपेदिक के प्रकोप में तेजी से वृद्धि के प्रमुख कारणों में धूम्रपान और वायु प्रदूषण शामिल है। जो लोग संकरे और छोटे घरों में रहते हैं जहाँ धूप और वायु की पहुँच नहीं होती है या ऐसी जगह पर काम करने के लिये जाते हैं जहाँ वातावरण में धुआँ, धूल, कपास के फाइबर या विभिन्न धातुओं के कण मौजूद होते हैं वो फेफड़े के कैंसर के खतरे से ग्रस्त हैं। फ्रिज से निकलती क्लोरोफ्लोरोकार्बन गैस पर्यावरण में ओजोन की सतह को नुकसान पहुँचा रही है जिससे त्वचा कैंसर (मेलेनोमा) का खतरा बढ़ रहा है।

3. **हृदय रोग :** लंबे समय तक कार्बन मोनोऑक्साइड, नाइट्रोजन डाइऑक्साइड और सल्फर डाइऑक्साइड के संपर्क में रहने से दिल का दौरा पड़ने का खतरा बढ़ जाता है। यह खतरा जनसंख्या के 0.6 से 4.5 प्रतिशत तक को प्रभावित कर सकता है। छाती में दर्द, कफ, सांस लेने में दिक्कत, साँस लेते वक्त आवाज निकलना और गले का दर्द भी वातावरण में दूषित हवा में साँस लेने के लक्षण हो सकते है। कमजोर दिल वाले लोग वायु प्रदूषण के लिये आसान निशाना साबित होते हैं। कार्डियोवास्कुलर रोग हृदय की माँसपेशियों को कमजोर करने और शरीर में रक्त संचारित करने में असमर्थता के कारण होता है। हृदय रोग से पीड़ित लोगों के लिये खतरा बढ़ने का कारण लंबे समय तक प्रदूषित हवा में साँस लेना है। जैसे ही गर्मी बढ़ती है। शहर में वायु प्रदूषण भी बढ़ जाता है। वायु प्रदूषण का संबंध कोरोनरी स्ट्रोक में वृद्धि की घटनाओं के साथ भी जुड़ा हुआ है।

4. **मस्तिष्क विकार :** वायु प्रदूषण महानगरों में रहने वाले लोगों के मस्तिष्क के काम–काज को भी प्रभावित कर सकता है। इससे पहले वायु प्रदूषण को दिल और साँस के रोगों के लिये जिम्मेदार माना जाता था। किन्तु एक नये शोध के अनुसार बड़े और भीड़–भाड़ वाले शहरों में वायु प्रदूषण के कारण हमारे दिमाग में प्रदूषण के लाखों कण प्रवेश कर जाते हैं। कुछ लोगों के दिमाग के ऊपर किये गये परिक्षण में यह पाया गया कि दस लाख मस्तिष्क टिश्यू में लाखों चुंबकीय पल्प कण पाये गये हैं। यह कण हमारे मस्तिष्क को दीर्घकालिक नुकसान पहुँचा सकते हैं। मानव मस्तिष्क में पाये जाने वाले अधिकांश मैग्नेटाइट, चुंबकीय लोहे के ऑक्साइड के यौगिक का मुख्य रूप, उच्च मात्रा में उद्योगों से निकलने वाली प्रदूषित वायु की वजह से बनते है। जब अल्जाइमर रोग से पीड़ित रोगियों की जाँच की गयी तो डॉक्टरों ने पाया कि उन रोगियों के दिमाग में मैग्नेटाइट के मौजूद होने के मात्रा उच्च है। जाहिर है इस शोध ने मस्तिष्क रोगों से जुड़े नये पर्यावरणीय जोखिमों को उजागर किया है। प्रदूषण के कणों का एक बड़ा हिस्सा साँस के माध्यम से शरीर तक पहुँचता है और ब्रोंची नामक दो ट्यूबों के माध्यम से त्वचा में पहुँच जाता है जिनमें से प्रत्येक ट्यूब फेफड़ों से जुड़ी होती है। यहाँ तक

कि अगर इसका एक छोटा सा हिस्सा भी मस्तिष्क तक पहुँचता है तो यह शारीरिक तंत्र पर विपरीत प्रभाव डाल सकता है। चुंबकीय प्रदूषक कण मस्तिष्क तक पहुँचने वाले ध्वनियों और संकेतों को रोक देते है जिससे अल्जाइमर रोग भी हो सकता है।

5. **गुर्दे की बीमारी :** वायु प्रदूषण के कारण लोगों को पहले से ही अस्थमा और श्वास में कठिनाई जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता था पर अब हालिया अनुसंधान के अनुसार यह गुर्दा संबंधी रोगों का कारण भी बन गया है। इससे यह पता चला है कि वायु प्रदूषण झिल्लीदार नेफ्रोपैथी (एक किडनी रोग जो स्वयं या कई अन्य बीमारियों के साथ हो सकता है) के विकास की संभावना बढ़ जाती है जो गुर्दे की विफलता का प्रमुख कारण है।

6. **गर्भवती महिलाओं, अजन्मा और नवजात शिशुओं को खतरा :** किसी भी महिला के लिये गर्भावस्था और प्रसव के बीच का समय सबसे महत्वपूर्ण माना जाता है। जन्म के पहले और बाद में बच्चे के स्वास्थ्य के लिये हमेशा एक प्रकार का खतरा होता है। प्रमुख अस्पतालों के स्त्री रोग विशेषज्ञ और बच्चे के विषेषज्ञों के अनुसार यदि गर्भवती महिलाएँ प्रदूषित हवा में अपना जीवन बिताती हैं तो उनके ऊपर मस्तिष्क की विकृति, अस्थमा और मस्तिष्क की अयोग्य विकास जैसे विभिन्न रोगों का हमेशा खतरा बना रहता है। यदि एक गर्भवती महिला लगातार प्रदूषित हवा में श्वास लेती है तो अजन्मा बच्चा मर भी सकता है। डॉक्टरों के मुताबिक ऐसी महिलाओं के बच्चों में निमोनिया और बीमारियों से लड़ने की शक्ति कमजोर हो जाती है।

वायु प्रदूषण से कैसे बचें?

1. सरकार को ऐसी नीतियाँ बनानी चाहिए कि कर्मचारी घर पर ही बैठकर कार्य करें। आवश्यकता होने पर ही वह कार्यालय जाये और अब सूचना तकनीक के आ जाने से यह संभव भी है। उदाहरण के तौर पर अमेरिका के कॉरपोरेट सेक्टर में काम करने वाले 35 प्रतिशत लोग सप्ताह में केवल एक दिन कार्यालय जाते हैं। बाकी काम घर पर बैठकर करते हैं। जिससे उनका आने–जाने का खर्च भी नहीं होता और वायु में प्रदूषण भी नहीं बढ़ता है। आने जाने में जो वक्त लगता है उसका इस्तेमाल वे लोग बागवानी आदि दूसरे कार्यों में करते हैं।
2. अधिक–से–अधिक साईकिल का इस्तेमाल करें।
3. सार्वजनिक परिवहन का उपयोग करें।
4. बच्चों को कार से स्कूल न छोड़ें बल्कि उनको स्कूल ट्रांसपोर्ट में जाने के लिये प्रोत्साहित करें।
5. अपने घर के लोगों को कार पूल बनाने के लिये कहें जिससे कि वो एक ही कार में बैठकर कार्यालय जायें। इससे ईंधन भी बचेगा और प्रदूषण भी कम होगा।
6. अपने घरों के आस–पास पेड़–पौधों की देखभाल ठीक से करें।
7. जब जरूरत न हो बिजली का इस्तेमाल न करें।
8. जिस कमरे में कूलर पंखा या एयर कंडीशन जरूरी हों, वहीं चलाएँ, बाकी जगह बंद रखें।
9. आपके बगीचे में सूखी पत्तियाँ हों तो उन्हें जलाएँ नहीं, बल्कि उसकी खाद बनायें।
10. अपनी कार का प्रदूषण हर तीन महीने के अंतराल पर चेक करवाएँ।
11. केवल सीसामुक्त पेट्रोल का इस्तेमाल करें। बाहर के मुकाबले घरों में प्रदूषण का प्रभाव कम होता है। इसलिये जब प्रदूषण अधिक हो तो घरों के अंदर चले जायें।

•❊••❊••❊••❊•

हिन्दी के अंकों का स्वीकृत मानक रूप

1	एक	34	चौंतीस	67	सड़सठ
2	दो	35	पैंतीस	68	अड़सठ
3	तीन	36	छत्तीस	69	उनहत्तर
4	चार	37	सैंतीस	70	सत्तर
5	पाँच	38	अड़तीस	71	इकहत्तर
6	छः	39	उनतालीस	72	बहत्तर
7	सात	40	चालीस	73	तिहत्तर
8	आठ	41	इकतालिस	74	चौहत्तर
9	नौ	42	बयालीस	75	पचहत्तर
10	दस	43	तैंतालीस	76	छिहत्तर
11	ग्यारह	44	चौवालीस	77	सतहत्तर
12	बारह	45	पैंतालीस	78	अठहत्तर
13	तेरह	46	छियालीस	79	उनासी
14	चौदह	47	सैंतालीस	80	अस्सी
15	पंद्रह	48	अड़तालीस	81	इक्यासी
16	सोलह	49	उनचास	82	बयासी
17	सत्रह	50	पचास	83	तिरासी
18	अठारह	51	इक्यावन	84	चौरासी
19	उन्नीस	52	बावन	85	पचासी
20	बीस	53	तिरपन	86	छियासी
21	इक्कीस	54	चौवन	87	सतासी
22	बाईस	55	पचपन	88	अठासी
23	तेईस	56	छप्पन	89	नवासी
24	चौबीस	57	सस्तावन	90	नब्बे
25	पच्चीस	58	अट्ठावन	91	इक्कानवे
26	छब्बीस	59	उनसठ	92	बानवे
27	सत्ताईस	60	साठ	93	तिरानवे
28	अट्ठाइस	61	इकसठ	94	चौरानवे
29	उनतीस	62	बासठ	95	पचानवे
30	तीस	63	तिरसठ	96	छियानवे
31	इकतीस	64	चौंसठ	97	सतानवे
32	बत्तीस	65	पैंसठ	98	अठानवे
33	तैंतीस	66	छियासठ	99	निन्यानवे
				100	सौ

राजभाषा से संबंधित वस्तुनिष्ठ जानकारियाँ

- संविधान सभा ने 14 सितंबर, 1949 को हिन्दी को संघ की राजभाषा के रूप में मान्यता दी तथा भारतीय संसद ने देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी को संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया।
- 14 सितंबर, 1949 को भारत की संसद ने 312 के मुकाबले 324 मतों से हिन्दी को संघ की राजभाषा बनाया।
- संघ की राजभाषा होने के कारण साथ–साथ हिन्दी उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान, मध्य प्रदेश, बिहार, झारखण्ड, छत्तीसगढ़ एवं दिल्ली सहित अंडमान निकोबार द्वीप की भी राजभाषा है।
- भारत के अलावा हिन्दी छह अन्य राष्ट्रों (फिल, सूरीनाम, त्रिनिदाद, गुयाना, मारिशस एवं सिंगापुर) की भी राजभाषा है।
- चीनी भाषा के पश्चात हिन्दी विश्व में दूसरी सर्वाधिक बोली जाने वाली (लगभग 18.2 प्रतिशत लोगों द्वारा) भाषा है।
- सन 1918 में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की प्रेरणा से दक्षिण हिन्दी प्रचार सभी की स्थापना की गयी।
- राजभाषा प्रचार समिति का गठन 1933 में किया गया।
- हिन्दी का पहला लिखित साहित्य वीर चंदवरदराई का पृथ्वीराज रासो माना जाता है। इसमें 69 सर्ग है।
- हिन्दी का अंतर्राष्ट्रीय सचिवालय मॉरीशस में है।
- काशी में 16 जुलाई, 1882 को नागरी प्रचार सभी की स्थापना की गयी।
- भारतीय अंकों का अंतर्राष्ट्रीय रूप 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 0 है।

संदेश

- राष्ट्रभाषा का प्रचार करना मैं राष्ट्रीयता का एक अंग मानता हूँ —**डॉ. राजेन्द्र प्रसाद**
- राष्ट्र के रूप में हिन्दी हमारे देश की एकता में सबसे अधिक सहायक सिद्ध होगी। — **पं. जवाहर लाल नेहरू**
- भाषा के जरिये ही हम एक आदर्श समाज की कल्पना कर सकते हैं। —**डॉ. मनमोहन सिंह**
- हिन्दी केवल राजभाषा नहीं बल्कि विश्व राष्ट्रभाषा बन सकती है। — **राजीव गांधी**
- हिन्दी एक जीवंत भाषा है। इसमें बड़ी सुरमयता और उदारता है। — **के.आर. नारायण**
- देश को एकता के सत्र में आबद्ध करने की शक्ति केवल हिन्दी में है। —**इन्दिरा गांधी**
- देश को एक सूत्र में पिरोने वाली भाषा हिन्दी ही हो सकती है। **लाल बहादुर शास्त्री**
- हिन्दी भाषा की उन्नति का अर्थ है राष्ट्र और जाति की उन्नति। — **रामवृक्ष बेनीपूरी**
- हिन्दी भारतीय संस्कृति की आत्मा है। —**कमलापति त्रिपाठी**

प्रशासनिक शब्दावली

क्र.सं.	अंग्रेजी	हिन्दी
1.	Drawing and Disbursing Officer	आहरण एवं संवितरण अधिकारी
2.	Audit	लेखा परीक्षा
3.	Estate Officer	संपदा अधिकारी
4.	Withdrawl	प्रत्याहरण
5.	Balance Sheet	तुलन पत्र
6.	Academician	विद्याविद्
7.	Misappropriation	दुर्विनियोजन
8.	Monitoring	अनुवीक्षण
9.	Cell	प्रकोष्ठ
10.	Maintenance	अनुरक्षण, रख–रखाव, रखना भरण–पोषण
11.	Tender	निविदा
12.	Contract	संविदा
13.	Mascot	शुभंकर
14.	General Provident Fund	सामान्य भविष्य निधि
15.	Antecendents	पूर्ववृत्त
16.	Appendix	परिशिष्ठ
17.	Attestation	अनुप्रमाणन
18.	Biodata	जीवनमृत्त
19.	By hand	दस्ती
20.	Adjustment	समायोजन
21.	Action	कार्रवाई
22.	Admissible	ग्राहय, स्वकार्य
23.	Acknowledgement	पवती
24.	Ad hoc	तदर्थ
25.	Proceedings	कार्यवाही
26.	Delegation of powers	शक्तियों का प्रत्यायोजन
27.	Ditto	यथोपरि
28.	Ex-Office	पदेन
29.	Forwarding Letter	अग्रेषण पत्र
30.	Extraordinary	आसाधारण
31.	Ex parte	एक पक्षीय
32.	Fund	निधि
33.	Appropriation	विनियोजन

34.	Reappropriation	पुनर्विनियोजन
35.	Commitment	बचनबद्धा, प्रतिबद्धता
36.	Commutaion	परिवर्तन, संराशीकरण लघूकरण
37.	Delimitation	परिसीमन
38.	Demi-Official	अर्धशासकीय
39.	Denovo	नये सिरे से
40.	Qualifying	अर्हक
41.	Desirable	वांछनीय
42.	Purview	क्षेत्र, कार्यक्षेत्र
43.	Strategy	कार्यनीति, रणनीति
44.	Quorum	कोरम, गणपूर्ति
45.	Quarantine	संगरोध
46.	Random	यादृच्छिक, सांयोजिक, अनियमित
47.	Provision	अनंतिम
48.	Provision	प्रावधान, व्यवस्था, उपबंध
49.	Election	निर्वाचन
50.	Effective	प्रभावी, दकारगर, वास्तविक
51.	Earnest Money	ब्याना, अग्रिम धन
52.	Personnel	कार्मिक
53.	Perspective	परिप्रेक्ष्य
54.	Plenary	पूर्ण
55.	Plenary Session	पूर्ण अधिवेशन
56.	Reminder	अनुस्मारक
57.	Un Official Note	अनौपचारिक टिप्पणी, स्मारण–पत्र
58.	Note	नोट, टिप्पणी
59.	Endorsement	पृष्ठांकन
60.	Notification	अधिसूचना
61.	Resolution	संकल्प
62.	Advetisement	विज्ञापन
63.	Reimbursement	प्रतिपूर्ण
64.	Installation	संस्थापन, अधिष्ठापन
65.	Competent Authority	सक्षम अधिकारी
66.	Compendium	सार–संग्रह
67.	Selection	चयन
68.	Direction	निदेशन
69.	Compliance	अनुपालन

फलों एवं सब्जियों के नाम

Apple	सेब
Banana	केला
Grapes	अंगूर
Pomegranate	अनार
Apricot	खुमानी
Mango	आम
Guava	अमरूद
Jamun	जामुन
Bael	बेल
Aonla	आँवला
Litchi	लीची
Crane berry	करोंदा
Pomelo	पोमेलो
Orange	संतरा
Khimi	खिरनी
Cashewnut	काजू
Artichoke	आर्टीचोक
Ash gourd	पेठा
Asparagus	एस्पैरेगस
Chenopodium	बथुआ
Spinach	पालक
Bitter gourd	करेला
Bottle gourd	लौकी
Brinjal	बैंगन
Broad bean	बाकला
Brussels sprouts	बटन गोभी
Cabbage	बंद गोभी
Carrot	गाजर
Cauliflower	फूल गोभी
Celery	सेलरी
Chakwat/orach	चकवत
Chicory	चिकोरी

Chilli	मिर्च
Chinese cabbage	चीनी पत्ता गोभी
Chive	चाईव
Chow-Chow	चाओ–चाओ
Cowpea	लोबिया
Cucumber	खीरा
French bean	फराश बीन
Garlic	लहसुन
Kale	केल
Kasuri methi	कसूरी मेथी
Knol Khol	गाँठ गोभी
Lablab bean	सेम
Larger yam	रतालू
Leaf mustard	सरसों साग
Leek	लीक
Lesser yam	सूथनी
Lettuce	सलाद
Long melon	ककड़ी
Fenugreek	मेथी
Multiplier onion	गुणक प्याज
Musk melon	खरबूज
New Zealand spinach	विलायती पालक
Okra	भिंडी
Onion	प्याज
Sarda Melon	सरदा मेलन
Parsley	पारसीले
Pea	मटर
Pointed gourd	परवल
Potato	आलू
Pumkin	कद्दू
Radish	मूली
Ridge gourd	नसदार तोरी
Snake gourd	चिड़चिड़ा

बागवानी से संबंधित शब्दावली

Anthracnose	ऐन्थ्रेकनोज
Die back	उल्टा सूखा
Wilt	उकठा, सूखा
Sooty mould	काली फफूँद
Bacterial canker	शाकाणु कैंकर
Harvest	तुड़ाई, कटाई
Mature	परिपक्व
Ripened	पका हुआ
Stalk	डंठल, वृंत
Harvester	तोड़क यंत्र
Pulp	गूदा
Creamish	अत्यन्त हल्का पीला
Stone	गुठली
Hardening of stone	गुठली का कड़ा होना
Bruised	खरोंच लगा हुआ
Damaged	क्षतिग्रस्त
Sort out	छाँटना
Graded	श्रेणीकरण
Size	आकार
Weight	वजन, भार
Colour	रंग
Maturity	परिपक्वता
Wooden Box	लकड़ी का बक्सा
Packaging	पेटी बंदी
Transportation	स्थानांतरण
Design	रूप–रेखा प्रस्तुत करना
Capacity	क्षमता
Ventilation	स्वातन वायुसंचार
Life	जीवन
Juice	जूस, रस
Nectar	नेक्टर
Squash	शरबत
Biotic	जैव
Abiotic	अजैव
Accession	अभिगमन

Resistant varieties	प्रतिरोधी किस्में
Infection	संक्रमण
Wilt	उकठा, सूखास, म्लानि
Rootstock	मूलवृंत
Disease Management	रोग प्रबंधन
Desease	रोग
Stem	तना
Stem rot	तना विगलन
Stem borer	तना भेदक
Breeding	प्रजनन
Slices	टुकड़ा, फाँकें
Raw	कच्चा
Variety	किस्म, प्रभेद
Jelly	जेली
Seed	बीज
Genesis	उत्पत्ति
Genetic	आनुवांशिक, आनुवांशिकी
Product	उत्पाद
Caved Fruits	डिब्बा बंद फल
Procure	प्राप्त करना
Canker	कैंकर
Density	घनत्व
Soil	मृदा, मिट्टी
Twigs	टहनियां
Branches	शाखाएँ
Petioles	पर्णवन्त
Lesions	बड़े धब्बे
Spots	धब्बा
Cultivar	किस्म
Field gene bank	प्रक्षेत्र जीन बैंक
Breed	नस्ल
Arid soil	शुष्क मृदा
Arid lands	शुष्क भूमि
Arable crop	कृष्य फसल
Arable farming	कृष्य कृषि

हिन्दी पखवाड़ा 2018 के विजेताओं को पुरस्कृत करते निदेशक महोदय

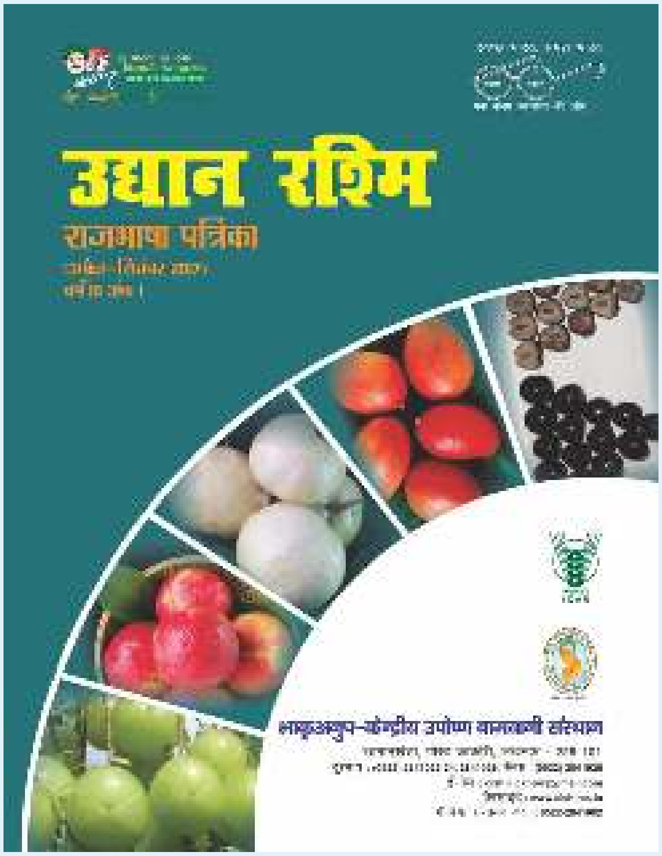

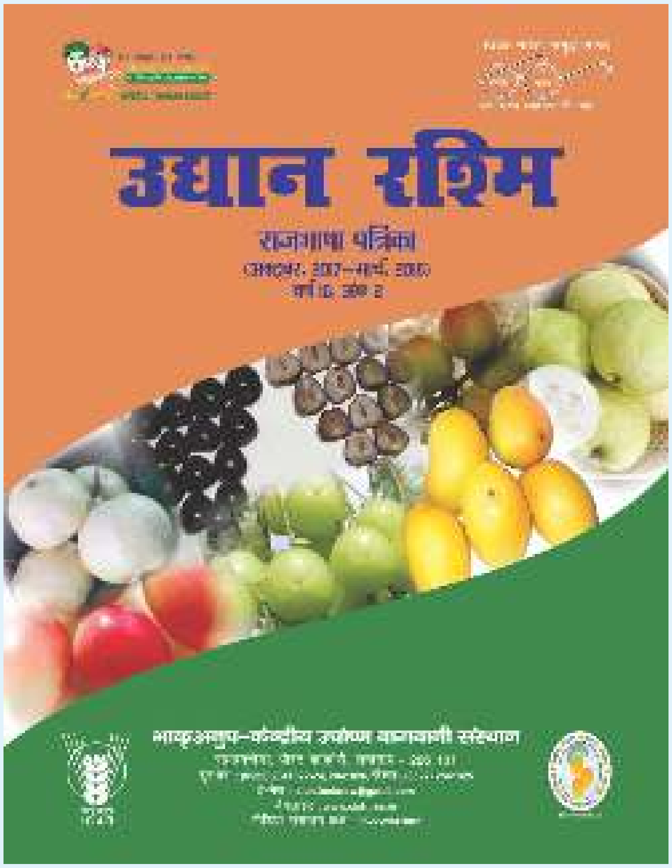

संस्थान की राजभाषा पत्रिका उद्यान रश्मि के 2017-18 के संस्करणों को
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार के लिए चयनित किया गया है

army printing press